# खोज की कहानियां

शम्भूर सहाय सक्सेना
डाइरेक्टर ऑफ कालेज एजूकेशन राजस्थान
भूतपूर्व प्रिंसिपल महाराणा भूपाल कालेज उदयपुर

नवयुग ग्रन्थ कुटीर
बीकानेर

पहला संस्करण

प्रकाशक नवयुग ग्रन्थ कुटीर बीकानेर
मुद्रक एजूकेशनल प्रेस बीकानेर
मूल्य ५०० नए पैसे

जिनकी मूक साधना और प्रेम ने मेरे
जीवन पथ को आलोकित किया
है अपनी उन्हीं प्रिय स्नेह
को सप्रेम भेंट

—राहुल

# विषय-सूची


| | | |
|---|---|---|
| भूमिका | | |
| १ एशिया की खोज : मार्कोपोलो | .. | १ |
| २ इब्न बतूता की यात्रा | ... | २७ |
| ३ भारत की खोज : वास्कोडीगामा | | ४२ |
| ४ नई दुनिया की खोज : कोलम्बस | | ६ |
| ५ बिल्बाओ की प्रशान्त महासागर की खोज | .. | ७८ |
| ६ मैगलान की पृथ्वी-परिक्रमा | | ८३ |
| ७. मैक्सिको की खोज और विजय हरनाडो कोर्टेस् | | ९६ |
| ८. दक्षिण अमेरिका की खोज | .. | १११ |
| ९ अंग्रेजों का खोज अभियान | .. | १२२ |
| १ ड्रेक की पृथ्वी-परिक्रमा | ... | १३८ |
| ११ कनाडा की खोज | .. | १४३ |
| १२ डेविस की उत्तरी ध्रुव की यात्रा | | १५१ |
| १३ बारेन्ट की स्पिट्सबर्गेन की यात्रा | | १६८ |
| १४ हडसन द्वारा हडसन खाड़ी की खोज | | १८- |
| १५ पैरी और फ्रैंकलिन की उत्तर यात्रा | .. | १८९ |
| १६ कुक की यात्राएं | | २०७ |
| १७. फ्रैंकलिन की उत्तर की ओर यात्रा | | २१८ |
| १८. नानसेन की उत्तरी यात्रा | | २४३ |
| १९ उत्तरी ध्रुव पर विजय | .. | २५६ |
| २ दक्षिणी ध्रुव की यात्रा | | २६५ |
| २१ डेविड लिविंगस्टन की अफ्रीका की खोज | | २७९ |
| २२ तिब्बत की खोज | | ३ ९ |

# भूमिका

भूगोल मेरा प्रिय विषय रहा है। उसे पढ़ने में मुझे उपन्यास और कहानी जैसा आनन्द आता है। जब मुझे अपने प्रिय महाविद्यालय महाराणा भूपाल कालेज से हटना पड़ा और मैंने डायरेक्टर आफ एजूकेशन का कार्यभार सम्हाला तो मेरा अधिकांश समय रेल में कटने लगा। बीकानेर कभी एक साथ चार दिन भी रह सकना कठिन होता। बीकानेर में रहने पर तथा दौरे पर जहां भी जाता वहां लिखने पढ़ने का अवसर मिलना कठिन हो गया। रेल-यात्रा में भी पढ़ने का क्रम चलता रहा। मैंने पृथ्वी की खोज का इतिहास पढ़ना आरम्भ किया। मुझे वह बहुत रुचिकर प्रतीत हुआ। एक के बाद दूसरी पुस्तक पृथ्वी की खोज के सम्बन्ध में पढ़ता गया। उन साहसी वीरों की जोखिम भरी यात्राओं का वर्णन पढ़कर मैं रोमांचित और आत्मविभोर हो उठता। मानव की निवास-भूमि पृथ्वी की खोज निकालनेवाले उन साहसी वीरों के प्रति श्रद्धा और आत्मीयता उत्पन्न हुई और मेरे मन में यह भाव जाग्रत हुआ कि हमारे बालक और युवक भी इस मनोरंजक इतिहास को पढ़ें। हिन्दी में पृथ्वी की खोज सम्बन्धी इतिहास लगभग नहीं है अस्तु मेरे हृदय में हिन्दी में एक छोटी सी पुस्तक इस विषय पर लिखने का विचार उत्पन्न हुआ। समय का अभाव

होने के कारण उस विचार को कार्यरूप में परिणत करने में मुझे देर लगी परन्तु पुस्तक लिख गई इसका मुझे सन्तोष है।

यों तो भारतवासियों ने अत्यन्त प्राचीन काल में तथागत भगवान बुद्ध का मंगलकारी संदेश लेकर एशिया के समीपवर्ती देशों में पदार्पण किया था। तुर्किस्तान तिब्बत चीन जापान, बर्मा श्रीलंका पूर्वीय द्वीप समूह और पश्चिमी एशिया के देशों में बौद्ध भिक्षुओं ने तथागत भगवान बुद्ध के उस मंगलकारी संदेश से मानव के हृदय को सद्भावनाओं और स्नेह की सलिल-धारा से भर दिया था। परन्तु उसके बाद जैसे भारत अपने में ही बन्द होकर रह गया और उसका पतन होने लगा। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जो जाति या देश अपने को कूपमण्डूक की भांति अपनी मान्यताओं अथवा देश की भौगोलिक सीमा के अन्दर ही बन्द कर लेता है वह पतनोन्मुख हो जाता है। भारत का भी यही हाल हुआ। पृथ्वी के खोज के इतिहास को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि योरोप के लोगों ने पृथ्वी की खोज निकालने में पहल की। मार्कोपोलो से लेकर आधुनिक काल तक योरोप के साहसी यात्रियों ने एक के बाद दूसरे पृथ्वी के भाग को खोज निकाला। वैसे जोखिम और साहस का काम था। जितने व्यक्ति खोज अभियान में जाते उनमें से अधिकांश मर जाते परन्तु फिर भी उन जोखिम भरी यात्राओं के लिए स्वयंसेवकों की कमी नहीं रहती। इसमें कोई संदेह नहीं कि कैथे ( चीन ) और भारत देश के मार्गों की खोज निकालना ही इन साहसी यात्रियों का मुख्य उद्देश्य था क्योंकि भारत

और चीन ही उस समय धन धान्य से भरे पूरे देश थे। इन देशों के लिए समुद्री मार्ग खोज निकालने के प्रयत्नों के फलस्वरूप ही पृथ्वी के अधिकांश भागों की खोज हुई। परन्तु उन कठिन यात्राओं में इन साहसी नाविकों ने जिस उत्साह, साहस शौर्य, धैर्य और सहिष्णुता का परिचय दिया वह इस बात का प्रमाण था कि उनमें अपने देश के लिए सब कुछ बलिदान कर देने की भावना सर्वोपरि थी। अपने देश के साम्राज्य को स्थापित करने, विभिन्न देशों के व्यापार से अथवा लूटने से अपने देश को मालामाल कर देने की भावना ही उन्हें अपने प्राणों की परवाह न कर ऐसी जोखिम भरी यात्रा पर जाने के लिए उत्साहित करती थी। उन यात्राओं का रोमांचकारी वर्णन पढ़ने पर लेखक के हृदय में रह रह कर यह भावना उत्पन्न होती थी कि काश हम भारतियों में भी ऐसा उत्कट देश प्रेम होता।

हमारा देश-प्रेम कितना छिछला है यह तो भाषा, धर्म, जाति को लेकर आए दिन होने वाले लज्जाजनक झगड़ों से ही स्पष्ट है। हम स्वतंत्र हो गए किन्तु अभी तक हममें भारतीयता का अभिमान जागृत नहीं हुआ। तब हममें भारत के मान वैभव और समृद्धि को बढ़ाने के लिए बलिदान और त्याग की भावना कैसे उत्पन्न हो सकती है।

'पृथ्वी की खोज की कहानियाँ' को हिन्दी में लिखने का केवल एक ही अभिप्राय है कि हमारे तरुणों में देश के लिए जोखिम उठाने

और अपना सब कुछ मातृभूमि के चरणों में अर्पित कर देने की भावना उत्पन्न हो।

— शंकर सहाय सक्सेना

# प्रथम परिच्छेद

## एशिया की खोज

### मार्को-पोलो

सात सौ वर्ष पहले की बात है। इटली का वेनिस नगर योरोप में सबसे प्रसिद्ध व्यापारिक नगर था। वेनिस के व्यापारी बड़े साहसी थे वे दूर दूर देशों में व्यापार करने के लिए अपने समुद्री जहाजों में माल भर कर ले जाते और एशिया के देशों से व्यापार करते थे। इस व्यापार से उन्हें बहुत अधिक लाभ होता था। यही कारण था कि वेनिस उस समय योरोप का सबसे अधिक धनी और समृद्धिशाली नगर बन गया था।

इसी वेनिस नगर में दो भाई रहते थे जिनका नाम था मैफियो पोलो और निकोलो पोलो। दोनों पोलो भाई बहुत साहसी और चतुर व्यापारी थे। उन्होंने सुन रक्खा था कि पूर्व में रहस्यमय कैथे देश है जहां सोने चांदी के अटूट भंडार हैं वहां की धन-सम्पत्ति का कोई पार नहीं है और वहां का शासक महान-खान संसार का सबसे अधिक धनवान और ऐश्वर्यशाली सम्राट है। बात यह थी कि वेनिस के व्यापारी एशिया के अन्दर तो घुसते नहीं थे। वे केवल एशिया और योरोप के मिलन स्थान एशिया माइनर के समुद्र तट

के बन्दरगाहों तक जाते थे और उन मंडियों में कारवाओं के द्वारा चीन भारत ईरान तुर्किस्तान इराक इत्यादि एशियाई देशों से लाए हुए बहुमूल्य पदार्थों को खरीदते थे। एशिया के देशों से लाई हुई उन कीमती वस्तुओं को खरीद कर वे योरोप के बाजारों में बेचते थे। उसी व्यापार के कारण वेनिस के व्यापारी मालामाल हो गए थे। जब वेनिस के व्यापारी इस एशिया माइनर के समुद्री तट पर बसे बन्दरगाहों के बाजारों में उन कारवां व्यापारियों से मिलते थे जो कि चीन भारत तुर्किस्तान ईरान और इराक से माल लाते थे तो उन देशों की रहस्यमय बातें प्रचुर धन-दौलत और वहां के सम्राटों के ऐश्वर्य की बातें करते नहीं थकते थे। इन्हीं व्यापारियों के द्वारा एशिया के देशों के धन-वैभव की कहानी योरोप भर में फैल गई थी।

पोलो बन्धुओं ने सोचा कि क्यों न एक बार इस रहस्यमय वैभवशाली और ऐश्वर्यशाली महादेश के अन्दर घुस कर पूर्व में कैथे (चीन) तक जाया जाये और उन देशों के वैभव को आंख से देखा जाये। दोनों भाइयों ने निश्चय कर लिया और वे अपने जहाजों में माल भर कर निकल पड़े।

पोलो बन्धुओं का एशिया की खोज करने का निश्चय बड़े साहस और जोखिम का काम था। एशिया जैसे महादेश की उन दिनों पार कर सुदूर पूर्व में चीन देश तक पहुँचना कोई खेल नहीं था। हजारों मील तक फैले हुए जल रहित रेगिस्तान आकाश चूमने वाले ऊँचे पहाड़ हिंसक जंतुओं से भरे हुए भयानक सघन वन कई

से ढके हुए पठार भयंकर वेग से बहने वाली नद विशाल मैदानों को पार करते हुए तथा डाकुओं और बटमारों से अपने को बचाते हुए, बीच में पड़ने वाले देशों में छिड़े हुए भयानक युद्धों में से बचकर निकल जाना कोई सरल कार्य नहीं था। लेकिन दोनों पोलो बन्धु उन लोगों में से नहीं थे जो कठिनाई और विपत्ति से घबरा उठते हैं। जीवन में जो लोग विपत्तियों और कठिनाइयों से घबरा उठते हैं वे कोई बड़ा काम नहीं कर सकते। पोलो बन्धुओं के मन में पूर्व के उन देशों की खोज करने की तीव्र लालसा थी इसलिए कठिनाइयों और विपत्तियों की परवाह न कर वे अपने जहाजों को लेकर चल पड़े।

भाग्य ने साथ दिया वायु अनुकूल थी इसलिए भूमध्य सागर पार करने में उन्हें कोई भी कठिनाई नहीं हुई। दोनों भाई सकुशल कांस्टेनटिनोपिल पहुँच गए। वहां उनका एक पैतृक मकान था जहां उनका एक तीसरा भाई हीरे जवाहरात का व्यापार करता था। कांस्टेनटिनोपिल में अपने माल को बेचकर उन्होंने अच्छा लाभ कमाया और उसको हीरे जवाहरात में परिणत कर लिया। अब उन्होंने काले सागर को पार कर क्रीमिया में प्रवेश किया। पोलो बन्धु अब एशिया में घुस चुके थे। वहां उन्होंने उस प्रदेश के स्वामी बरकाखाँ के दरबार में जाने का निश्चय किया। बरकाखाँ ने वेनिस के उन दोनों व्यापारियों का अपने दरबार में अच्छा स्वागत किया। वहां की रीति के अनुसार दोनों पोलो बन्धुओं ने उनके पास जो भी हीरे जवाहरात थे सब बरकाखाँ को भेंट कर दिए। बरकाखाँ

के बन्दरगाहों तक जाते थे और उन मंडियों में कारवाओं के द्वारा चीन भारत ईरान तुर्किस्तान इराक इत्यादि एशियाई देशों से लाए हुए बहुमूल्य पदार्थों को खरीदते थे। एशिया के देशों से लाई हुई उन कीमती वस्तुओं को खरीद कर वे योरोप के बाजारों में बेचते थे। इसी व्यापार के कारण वेनिस के व्यापारी मालामाल हो गए थे। जब वेनिस के व्यापारी इस एशिया माइनर के समुद्री तट पर बसे बंदरगाहों के बाजारों में उन कारवां व्यापारियों से मिलते थे जो कि चीन भारत तुर्किस्तान ईरान और इराक से माल लाते थे तो उन देशों की रहस्यमय बातों अटूट धन-दौलत और वहां के सम्राटों के ऐश्वर्य की बातें करते नहीं थकते थे। इन्हीं व्यापारियों के द्वारा एशिया के देशों के धन-वैभव की कहानी योरोप भर में फैल गई थी।

पोलो बन्धुओं ने सोचा कि क्यों न एक बार इस रहस्यमय वैभवशाली और ऐश्वर्यशाली महादेश के अन्दर घुस कर पूर्व में कैथे (चीन) तक जाया जावे और उन देशों के वैभव को आंख से देखा जावे। दोनों भाइयों ने निश्चय कर लिया और वे अपने जहाजों में माल भर कर निकल पड़े।

पोलो बन्धुओं का एशिया की खोज करने का निश्चय बड़े साहस और जोखिम का काम था। एशिया जैसे महादेश को उन दिनों पार कर सुदूर पूर्व में चीन देश तक पहुंचना कोई खेल नहीं था। हजारों मील तक फैले हुए जल रहित रेगिस्तान आकाश छूने वाले ऊंचे पहाड़ हिंसक जंतुओं से भरे हुए भयानक सघन वन बर्फ

से ढके हुए पठार भयंकर वेग से बहने वाले नद विशाल मैदानों को पार करते हुए तथा डाकुओं और बटमारों से अपने को बचाते हुए, बीच में पड़ने वाले देशों में छिड़े हुए भयानक युद्धों में से बचकर निकल जाना कोई सरल काम नहीं था। लेकिन दोनों पोलो बन्धु उन लोगों में से नहीं थे जो कठिनाई और विपत्ति से घबरा उठते हैं। जीवन में जो लोग विपत्तियों और कठिनाइयों से घबरा उठते हैं वे कोई बड़ा काम नहीं कर सकते। पोलो बन्धुओं के मन में पूर्व के उन देशों की खोज करने की तीव्र लालसा थी इसलिए कठिनाइयों और विपत्तियों की परवाह न कर वे अपने जहाजों को लेकर चल पड़े।

भाग्य ने साथ दिया वायु अनुकूल थी इसलिए भूमध्य सागर पार करने में उन्हें कोई भी कठिनाई नहीं हुई। दोनों भाई सकुशल कांस्टेनटिनोपिल पहुँच गए। वहाँ उनका एक पैतृक मकान था जहाँ उनका एक तीसरा भाई हीरे जवाहरात का व्यापार करता था। कांस्टैनटिनोपिल में अपने माल को बेचकर उन्होंने अच्छा लाभ कमाया और उसको हीरे जवाहरात में परिणत कर लिया। तब उन्होंने काले सागर को पार कर क्रीमिया में प्रवेश किया। दोनों बन्धु अब एशिया में घुस चुके थे। वहाँ उन्होंने उस प्रदेश के मंगोल सरदारों के दरबार में जाने का निश्चय किया। सरदार ने वेनिस के उन दोनों व्यापारियों का अपने दरबार में स्वागत किया। वहाँ की रीति के अनुसार दोनों पोलो बन्धुओं ने उन्हें बहु को भी हीरे जवाहरात के सब सरदारों को भेंट कर दिए। सरदार

ने उस भेंट को स्वीकार कर लिया और उन दोनों भाइयों को दुगने मूल्य के हीरे जवाहरात देकर अपने दरबार से विदा किया। उसी समय बरका और हलाकू में युद्ध छिड़ गया। दोनों भाइयों के लिए अब पीछे लौटना सम्भव नहीं था। इसलिए दोनों भाइयों ने सोचा कि पूर्व की ओर बढ़ा जावे। उन्हें आशा थी कि पूर्व से उन्हें देश लौटने का कोई न कोई रास्ता अवश्य ही मिल जावेगा। वाल्गा नदी के मार्ग से वे दक्षिण की ओर गए और वहां से रेगिस्तान को पार कर बुखारा पहुँच गए। बुखारा अत्यन्त वैभवशाली और सुंदर नगर था। दोनों बन्धु वहां तीन वर्ष तक ठहरे रहे और यह प्रयत्न करते रहे कि किसी तरह अपने घर वापस लौट सकें लेकिन उनकी सारी कोशिशें बेकार हो गईं। उसी समय हलाकू का एक सामन्त जो कुबलेखां के दरबार में दूत के रूप में जा रहा था बुखारा आया और उसने उन्हें कुबलेखां के दरबार में चलने को कहा। दोनों भाई घुमक्कड़ तो थे ही एशिया के देशों के वैभव को आंखों से देखने की उनकी लालसा तीव्र थी और हृदय में साहस था। दोनों भाइयों ने कुबलेखां के दरबार में चलना स्वीकार कर लिया और उनके साथ हो लिए। तातार सामन्त के साथ दोनों भाई उत्तर पूर्व की ओर बढ़े। मार्ग विकट था। कहीं बर्फ के गिरने के कारण रुकना पड़ता तो कहीं नदियों की प्रबल बाढ़ उनके मार्ग को रोक देती। इसी तरह लगातार एक वर्ष तक चलते रहने के बाद वे पेकिंग पहुँचे जो उस समय पूर्व का छोर समझा जाता था। महान खान ने उनका अच्छा स्वागत किया और दोनों भाइयों से उनके देश

के सम्बन्ध में बहुत सी बातें पूछीं। दोनों भाइयों ने इस बीच तातारी भाषा चलते चलते सीख ली थी इस कारण उन्होंने तातारी भाषा में ही कुबलेखाँ को अपने देश का सब हाल सुनाया। उनकी चतुराई से कुबलेखाँ बहुत खुश हुआ और उसके दरबार में दोनों भाइयों की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई। कुबलेखाँ इन दोनों भाइयों से ईसाई धर्म के वर्णन से इतना प्रभावित हुआ कि उसने उनको अपना दूत बनाकर पोप के पास इसलिए भेजा कि पोप चीन में ईसाई धर्म का उपदेश देने के लिए सौ विद्वान धर्मोपदेशक भेजे। महान खान ने दोनों भाइयों को पोप के नाम पत्र देकर एक सोने की मुहर दी जो उसका राजचिह्न थी। साथ में सभी प्रान्तों के शासकों को एक आज्ञा-पत्र था कि दोनों भाइयों को मार्ग में सभी तरह की सुविधा और आराम का प्रबंध किया जावे। दोनों भाई देश की ओर लौटे। तीन वर्ष तक लगातार चलने के बाद वे जब देश पहुंचे तो उन्हें मालूम हुआ कि पोप मर चुका है। इसलिए वे अपने घर वेनिस चले आए और वहां इसलिए ठहरे रहे कि जब नये पोप का चुनाव हो जावे तो उससे कुबलेखाँ का संदेश कहा जावे।

दोनों पोलो बन्धु पंद्रह वर्षों के बाद अपने घर पहुंचे। जिस वर्ष वे इस लम्बी यात्रा को निकले थे उसी वर्ष निकोलो की पत्नी की मृत्यु हो गई थी और उसने एक पुत्र को जन्म दिया था। यही बच्चा प्रसिद्ध यात्री मार्को पोलो था।

उस समय मार्को पोलो पंद्रह वर्ष का हो चुका था। बालक मार्को पोलो अपने पिता और चाचा से चीन के वैभव और महान

ने उस भेंट को स्वीकार कर लिया और उन दोनों भाइयों को दुगने मूल्य के हीरे जवाहरात देकर अपने दरबार से विदा किया। उसी समय बरका और हुलागू में युद्ध छिड़ गया। दोनों भाइयों के लिए अब पीछे लौटना सम्भव नहीं था। इसलिए दोनों भाइयों ने सोचा कि पूर्व की ओर बढ़ा जाये। उन्हें आशा थी कि पूर्व से उन्हें देश लौटने का कोई न कोई रास्ता अवश्य ही मिल जायेगा। वाल्गा नदी के मार्ग से वे दक्षिण की ओर गए और वहां से रेगिस्तान को पार कर बुखारा पहुंच गए। बुखारा अत्यन्त वैभवशाली और सुंदर नगर था। पोलो बन्धु वहां तीन वर्ष तक ठहरे रहे और यह प्रयत्न करते रहे कि किसी तरह अपने घर वापस लौट सकें लेकिन उनकी सारी कोशिश बेकार हो गई। उसी समय हुलागू का एक सामन्त जो कुबलेखां के दरबार में दूत के रूप में जा रहा था बुखारा आया और उसने उन्हें कुबलेखां के दरबार में चलने को कहा। दोनों भाई घुमक्कड़ तो थे ही एशिया के देशों के वैभव को आंखों से देखने की उनकी लालसा तीव्र थी और हृदय में साहस था। दोनों भाइयों ने कुबलेखां के दरबार में चलना स्वीकार कर लिया और उसके साथ हो लिए। तातार सामन्त के साथ दोनों भाई उत्तर पूर्व की ओर बढ़े। मार्ग विकट था। कहीं बर्फ के गिरने के कारण रुकना पड़ता तो कहीं नदियों की प्रबल बाढ़ उनके मार्ग को रोक देती। इसी तरह लगातार एक वर्ष तक चलते रहने के बाद वे पेकिंग पहुंचे जो उस समय पूर्व का छोर समझा जाता था। महान खान ने उनका अच्छा स्वागत किया और दोनों भाइयों से उनके देश

के सम्बन्ध में बहुत सी बातें पूछीं। दोनों भाइयों ने इस बीच तातारी भाषा चलते-चलते सीख ली थी इस कारण उन्होंने तातारी भाषा में ही कुबलेखाँ को अपने देश का सब हाल सुनाया। उनकी चतुराई से कुबलेखाँ बहुत खुश हुआ और उसके दरबार में दोनों भाइयों की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई। कुबलेखाँ इन दोनों भाइयों के ईसाई धर्म के बखान से इतना प्रभावित हुआ कि उसने उनको अपना दूत बनाकर पोप के पास इसलिए भेजा कि पोप चीन में ईसाई धर्म का उपदेश देने के लिए सौ विद्वान धर्मोपदेशक भेजे। महान खान ने दोनों भाइयों को पोप के नाम पत्र देकर एक सोने की मुहर दी जो उसका राजचिह्न थी। साथ में सभी प्रान्तों के शासकों को एक आज्ञा-पत्र था कि दोनों भाइयों को मार्ग में सभी तरह की सुविधा और आराम का प्रबंध किया जावे। दोनों भाई देश की ओर लौटे। तीन वर्ष तक चलते रहने के बाद वे जब देश पहुँचे तो उन्हें मालूम हुआ कि पोप मर चुका है। इसलिए वे अपने घर वेनिस चले आए और वहाँ इसलिए ठहरे रहे कि जब नये पोप का चुनाव हो जावे तो उससे कुबलेखाँ का संदेश कहा जावे।

दोनों पोलो बन्धु पन्द्रह वर्षों के बाद अपने घर पहुँचे। जिस वर्ष वे इस लम्बी यात्रा को निकले थे उसी वर्ष निकोलो की पत्नी की मृत्यु हो गई थी और उसने एक पुत्र को जन्म दिया था। यही बच्चा प्रसिद्ध यात्री मार्को पोलो था।

उस समय मार्को पोलो पन्द्रह वर्ष का हो चुका था। बालक मार्को पोलो अपने पिता और चाचा से चीन के बारे और खान

खान के दरबार की शान-शौकत की कहानी सुनते नहीं थकता था। उसके मन में यह इच्छा बलवती होती जा रही थी कि वह भी उस महान देश की यात्रा करे।

पोलो बंधुओं को वेनिस में ठहरे हुए दो वर्ष हो गए लेकिन पोप का चुनाव नहीं हो सका। यह सोचकर कि कहीं कुबलेखाँ यह न सोचे कि उन्होंने धोखा दिया वे चल पड़े। इस बार उनके साथ सत्रह वर्ष का युवक मार्को पोलो भी था। वे आयास के बन्दरगाह से थोड़ा ही आगे बढ़े थे कि खबर मिली कि पोप का चुनाव हो गया है। वे पोप की राजधानी आकर लौटे। पोप ने उन्हें कुबलेखाँ के नाम एक पत्र दिया तथा दो पादरियों को उनके साथ कर दिया। लेकिन जैसे ही पोलो बन्धु आगे बढ़े पादरियों का साहस टूट गया वे मार्ग की कठिनाइयों से घबरा गए और वापस लौट गए। अब दोनों भाई युवक मार्को पोलो को साथ लेकर चीन देश की ओर चल पड़े।

अब तीनों यात्री आरमीनिया में पहुँचे। उस समय वहां भयंकर युद्ध छिड़ा हुआ था। आगे बढ़ना जान को खतरे में डालना था। लेकिन पोलो बन्धु जीवट के आदमी थे विपत्तियों से लड़ना उन्होंने सीख लिया था। इसलिए वे घबराए नहीं। आरमीनिया में स्थित माउंट अरारात पर्वत को पार कर कास्पियन समुद्र तथा उसमें गिरने वाली यूफ्रेटीज़ और टाइग्रीज नदियों को पार करते हुए, वे बगदाद पहुँचे। बगदाद उस समय अत्यन्त वैभवशाली और समृद्धिशाली नगर था। इस्लाम धर्म उस समय समस्त पश्चिमी एशिया और अफ्रीका में फैल चुका

था। बगदाद इस्लाम के महान खलीफा की राजधानी था। परन्तु जिस समय यह पोलो यात्री बगदाद पहुँचे उस समय उस की शान मिट चुकी थी। बर्बर हुलाकू के नेतृत्व में तातार सेना ने उसको विध्वंस कर दिया था और अन्तिम खलीफा की निर्दयतापूर्वक हत्या करदी गई थी। किन्तु पोलो यात्री किसी तरह बचते हुए ईरान में घुसे और ईरान की मरुभूमि को पार करते हुए ओरमुज के बन्दरगाह पहुँचे। उनका विचार वहां से जहाज लेकर समुद्र के रास्ते चीन जाने का था। लेकिन जहाज का प्रबंध न हो सका और उन्हें अपना विचार बदलना पड़ा। अतएव वे फिर स्थल-मार्ग से उत्तर पूर्व की ओर बढ़े।

पोलो यात्री अब ईरान की विस्तृत मरुभूमि के दक्षिणी किनारे पर पहुँच गए। यह बड़ा रेगिस्तान आठ सौ मील तक तेहरान से अफगानिस्तान तक फैला हुआ है। मार्को पोलो ने इस सूखे प्रदेश का नीचे लिखे शब्दों में वर्णन किया है—

"कई दिनों तक इस सूखे रेगिस्तान में ऊँट पर चलना पड़ता है। पेड़ या फलों के वृक्षों का कहीं निशान भी नहीं दिखलाई पड़ता। सारा प्रदेश वीरान है। पानी बहुत कम मिलता है और जो थोड़ा बहुत मिलता है वह इतना कड़वा है कि उसको कोई पी नहीं सकता। यदि कोई थोड़ा भी पानी पी ले तो उसको दस्त लग जावें। इस प्रदेश में पशु और पक्षी भी नहीं दिखलाई पड़ते। इस प्रदेश में कभी कभी जहरीली हवा भी चलती है। जो उस हवा में पड़ जाता है वह वहीं मर कर गिर पड़ता

है। वास्तव में यह मृत्यु का देश है।

इस प्रदेश को पोलो परिवार पार तो कर गया किन्तु युवक मार्को पोलो को ज्वर रहने लगा। इस कारण उन्हें बदख्शान में एक वर्ष तक ठहरना पड़ा। बदख्शान के पहाड़ों पर वहां उस ऊँचे प्रदेश पर ठंडी हवा और हरियाली भी रहने के कारण मार्को पोलो का ज्वर जाता गया। एक वर्ष वहां ठहर कर वे फिर चल पड़े। अब वे पामीर के ऊँचे पठार पर थे। यह 'पृथ्वी की छत' कहलाता है। पामीर के पठार से जब वे उतर कर खोतान आए तो उनके सामने विशाल गोबी का रेगिस्तान दूर दूर तक फैला हुआ था।

तीस दिन तक लगातार पोलो परिवार इस रेगिस्तान में चलता रहा। सारा प्रदेश रेतीला वनस्पति का नाम नहीं और समस्त प्रदेश में मृत्यु की निस्तब्धता छाई हुई थी। जीवन का कोई चिह्न नहीं था। उसको पार करके पोलो परिवार तांगुत प्रान्त के एक नगर में पहुंचे। वहां उन्हें महान सम्राट कुबलेखां के भेजे हुए आदमी मिल गए। सम्राट कुबलेखां के विशाल और दूर दूर फैले हुए साम्राज्य में डाक का अच्छा प्रबंध था। साम्राज्य के हर एक हिस्से से सम्राट के पास समाचार ले जाने वाले संदेश-वाहक रहते थे। इन्हीं संदेश वाहकों के द्वारा सम्राट को पोलो परिवार के आने की सूचना पहले ही मिल चुकी थी। पोलो बन्धुओं को कोई कष्ट न हो इसलिए सम्राट ने अपने आदमी भेज दिए थे। पोलो परिवार अब बिना किसी कठिनाई के यात्रा करने लगा। चालीस दिन यात्रा करने के बाद वे शांगटू पहुंचे जो सम्राट कुबलेखां की ग्रीष्मकालीन

राजधानी थी। लगातार वर्षों तक यात्रा करने के बाद तीनों सकुशल चीन पहुंच गए।

जब पोलो परिवार कुबलेखां के दरबार में पहुंचा तो सम्राट ने उनका स्वागत किया। मार्को पोलो को देखते ही सम्राट ने पूछा यह युवक कौन है। निकोलो पोलो ने उत्तर दिया— 'प्रभो यह मेरा लड़का और आपका सेवक है।' सम्राट ने उसको देखकर बहुत प्रसन्नता प्रकट की। तीनों पोलो बड़े सम्मान के साथ सम्राट कुबलेखां के दरबार में रहने लगे।

प्रारम्भ से ही युवक मार्को पोलो सम्राट कुबलेखां के मन में बस गया। वह मार्को पोलो से बहुत अधिक प्रसन्न था। इसका एक बड़ा कारण यह था कि मार्को पोलो ने बड़ी जल्दी ही उस देश की भाषाओं को सीख लिया और मंगोलों के रीति रिवाजों और रहन सहन को जान लिया। सम्राट राजकीय कार्य से मार्को पोलो को भिन्न भिन्न भागों में भेजता था। मार्को जब यात्रा से लौट कर आता तो सम्राट के सामने उस देश का ऐसा सजीव और जानकारी से पूर्ण चित्र खींचता कि सम्राट मुग्ध हो जाते। इसका परिणाम यह हुआ कि सभी कठिन और महत्वपूर्ण कार्यों के लिए सम्राट मार्को पोलो को ही भेजता था। सम्राट की कृपा से मार्को पोलो को पूर्व के सभी देशों को जानने तथा देखने का अपूर्व अवसर मिला और उसने समूचे एशिया की खोज निकाला।

मार्को पोलो सम्राट कुबलेखां के व्यक्तित्व और उसके वैभव से बहुत अधिक प्रभावित था। सम्राट की ग्रीष्मकालीन राजधानी

शांदुग के महलों का वर्णन करते हुए मार्को कहता है 'सम्राट के महलों का घेरा सोलह मील में है जिसके अन्दर अनेक झरने नदियां और सुंदर चरागाह और उद्यान हैं।"

परन्तु सम्राट कुबलेखाँ का वास्तविक वैभव उसकी मुख्य राजधानी पेकिंग के वर्णन में मिलता है। यह साम्राज्य की राजधानी है। यह नगर चौकोर बसा हुआ है। उसकी लम्बाई और चौड़ाई ६ मील है और चारों ओर नगर परकोटा है। चारों कोनों पर चार बड़े महल हैं और प्रत्येक भाग बीच में एक बड़ा महल है। इन आठों महलों में युद्ध की सामग्री भरी रहती है। नगर की बाहरी दीवार के अन्दर एक और दीवार या परकोटा है। उसमें भी आठ महल हैं। इनमें भी युद्ध सामग्री भरी रहती है। इनके बीचों बीच एक बहुत बड़ा महल है। मार्को का कथन है कि ऐसा विशाल और भव्य महल पृथ्वी में कहीं नहीं है। उस महल के अन्दर की दीवारें सोने और चांदी से मढ़ी हुई हैं। उन स्वर्ण और रजत से ढकी हुई दीवारों पर विचित्र वीरों पशुओं और पक्षियों के चित्र अंकित हैं। बीच का बड़ा हाल इतना विशाल था कि उसमें ६ हजार आदमी बैठ कर भोजन कर सकते थे। यह हाल इतना विशाल और भव्य था कि पृथ्वी पर वैसा दूसरा हाल नहीं बनाया जा सकता। उसकी ऊँची छत लाल हरे नीले पीले तथा अनेक रंगों से पोती गई थी। वह ऐसी चमकदार थी कि मानो शीशा चमकता हो। बड़े महल के पीछे बड़े बड़े मकान और हाल थे जिनमें सम्राट की पत्नियां और हीरे जवाहरात रहते थे।

नगर में बारह बड़े फाटक थे। सड़कें सीधी और इतनी चौड़ी थीं कि एक फाटक से दूसरा फाटक दिखलाई देता था। प्रत्येक फाटक पर एक हजार और सैनिक पहरा देते थे।

सम्राट के निवास महल के सामने एक विस्तृत उद्यान था जिसमें फल फूलों के वृक्षों के अलावा शिकार भी प्रचुर मात्रा में मिलता था।

जब सम्राट कोई भोज देते थे तो हजारों की संख्या में अतिथि निमंत्रित होते थे। हर एक अतिथि को सोने का एक प्याला दिया जाता था जिसमें सोने की सुराहियों से शराब डाली जाती थी। प्रत्येक अतिथि की मेज पर शराब से भरी हुई एक सोने की सुराही रक्खी जाती थी।

नव वर्ष के दिन जो फरवरी में होता था प्रत्येक दरबारी सफेद पोशाक धारण करता था। जनता की प्रजा उस दिन अपने सम्राट को सोना चांदी मोती हीरे जवाहरात की भेंट देती थी। उस दिन सम्राट को एक लाख बढ़िया सफेद नस्ल के घोड़े भेंट किए जाते थे। उस दिन सम्राट के पांच हजार हाथी जिन पर कारचोबी की झूलें पड़ी होती थीं लाए जाते थे। उनके अतिरिक्त असंख्य ऊँटों पर भोज की सामग्री लाद कर लाई जाती थी।

मार्को पोलो ने अपने वर्णन में लिखा है कि उस समय चीन में कागजी मुद्रा प्रचलित थी। सम्राट कुबलेखां ने कागजी मुद्रा देकर देश का समस्त सोना और जवाहरात खरीद लिए थे। सम्राट की विशाल सेना को कागजी मुद्रा में ही वेतन दिया जाता था।

मार्को पोलो अपने स्वामी कुबलेखाँ के वैभव और ऐश्वर्य का वर्णन करते नहीं थकता। नव वर्ष के भोज का वर्णन वह इस प्रकार करता है।

सम्राट के भोजों में चालीस हजार अतिथि एक साथ भोजन करते थे। सम्राट सबसे ऊँचे स्थान पर बैठता था। उसके पुत्र और पुत्रियों की मेजें इस तरह रक्खी जाती थीं कि उनके सिर सम्राट के पैरों तक पहुँचते थे। कुबलेखाँ को भोजन उसके सूबेदार और बड़े सामन्त ही परसते थे। उनके मुँह पर कीमती कारचोबी के काम का कपड़ा लिपटा रहता था जिससे कि उनकी साँस सम्राट के भोजन को स्पर्श न करे।

सम्राट कुबलेखाँ का साम्राज्य चौंतीस सूबों में फैला था। उसका शासन बारह बड़े सामन्तों के द्वारा होता था जो कि राजधानी में रहते थे। इतने बड़े साम्राज्य के समाचार जानने के लिए डाक का बहुत अच्छा प्रबंध था। सभी सूबे सड़कों द्वारा राजधानी से जुड़े हुए हैं। प्रत्येक सड़क पर हर पच्चीस मील पर एक विश्राम घर है जहाँ सर्विस-वाहक के ठहरने का सभी प्रबंध होता है। उनके बिछौने मुलायम रेशम के होते हैं और उनके खाने-पीने का बहुत सुंदर प्रबंध रहता है। इन विश्राम-घरों में बहुत तेज घोड़े रक्खे जाते हैं। इस प्रकार सभी महत्वपूर्ण मार्गों पर विश्राम घर और घोड़े रहते हैं जिनका यह सर्विस वाहक उपयोग करते हैं। इन स्थानों के बीच हर तीन मील पर हरकारों के घर होते हैं। यह हरकारे सरकारी पत्रों को लेकर दौड़ते हैं। उनकी कमर में एक पेटी

होती है जिसमें घंटियां बंधी रहती हैं जो बजती हैं और दूर से उनकी आवाज सुनाई देती है। जब यह हरकारे सरकारी पत्र लेकर दौड़ते हुए एक गांव से दूसरे गांव तक जाते हैं तो घंटी की आवाज सुन कर वहां का हरकारा तैयार रहता है और कागज को लेकर तुरन्त अगले स्थान पर पहुंचा देता है। कुबलेखां को इन पैदल दौड़ने वाले हरकारों से उन स्थानों के समाचार जिन तक पहुंचने में साधारण यात्री को दस दिन लगते हैं एक दिन और रात्रि में मिल जाते हैं।

मार्को पोलो की पहली यात्रा सम्राट कुबलेखां के आदेश से दक्षिण पश्चिम सुदूर युनान प्रान्त की ओर हुई। चार महीने चलकर वह युनान पहुंचा। राजधानी से दस मील पर सान-कान नदी पर बने हुए संगमरमर के सुंदर पुल की उसने बहुत अधिक प्रशंसा की है। युनान प्रान्त के मुख्य नगर तैयुआन तक मार्को पोलो को बहुत से सुंदर वैभवशाली नगर व्यापारिक केन्द्र कारीगरी के स्थान विस्तृत हरे भरे खेत और अंगूर की बेलों से भरे हुए बाग दिखलाई दिए।

हांगहो महानद को देखकर मार्को पोलो ने लिखा कि यह नदी इतनी चौड़ी है कि उस पर पुल नहीं बन सकता।

शान्सी प्रान्त में जब मार्को पोला पहुंचा तब उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उस प्रान्त में रेशम बहुत अधिक उत्पन्न किया जाता है तथा रेशम और सोने के तार मिलाकर वहां बहुमूल्य कपड़ा बनाया जाता है। सारे प्रान्त में जीवन की आवश्यकता की सभी

चीजें बहुत बड़ी मात्रा में और बहुत सस्ते दामों में मिलती हैं।

इसके बाद मार्को पोलो चीन के पहाड़ी प्रदेश हानचुंग में घुसा। यहां जंगलों में शेर भालू तथा अन्य जंगली जानवर बहुत बड़ी संख्या में थे।

बीस दिन लगातार घोड़े पर उस पहाड़ी प्रदेश में चलने के बाद पोलो सांची प्रान्त के चेंग-नगर में पहुँचा और उसको पार करने के उपरान्त बीस दिन फिर पहाड़ी प्रदेश को पार करता हुआ पोलो 'बेंगफू' पहुँच गया। यह नगर यांगसिक्यांग नदी पर स्थित था और समुद्र से सौ दिन की यात्रा की दूरी पर था। पोलो लिखता है कि यह नदी इतनी बड़ी थी जिसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। 'बेंगफू' तक सैकड़ों जहाज समुद्र के रास्ते आते थे। इस कारण यह नगर एक बहुत बड़ी मंडी बन गया था।

मार्को चीन के इन उपजाऊ प्रान्तों को पार करता हुआ तिब्बत में पहुँचा। उसने लिखा है युद्ध के कारण तिब्बत वीरान प्रदेश बन गया है। यहां खाने पीने की वस्तुओं का भी अभाव है। तिब्बत में उसने स्त्रियों को तथा देव मूर्तियों को कौड़ी का जेवर पहने देखा जो वहां शोभा की वस्तु समझी जाती थी। समुद्र से इतनी दूर देश में कौड़ियों की इतनी बहुतायत पोलो के लिए एक अचम्भे की बात थी। इसके बाद पोलो पामीर और काश्मीर भी गया। पामीर और काश्मीर की सुन्दरता की उसने अपनी पुस्तक में बहुत अधिक सराहना की है। परन्तु उसने लिखा है कि यहां यात्रा करना मानो अपने प्राणों से खेलना है। गगनचुम्बी पहाड़ पतली

पगडंडियाँ और गहरे खड्ड तनिक पैर फिसलने पर यात्री की हड्डियों का भी पता नहीं लग सकता। इनको पार कर मार्को पोलो पूर्वी तिब्बत में घुसा जहाँ चीनचांव प्रदेश में उसे नमक की झील मिली। यहाँ उसने देखा कि नमक की गोल रोटियाँ जिन पर कुबलेखाँ की मुहर होती थी सिक्के के रूप में चलती थीं। उस प्रदेश में सोने की बहुतायत थी। नदी के रेते से सोना निकलता था।

चलते चलते पोलो युनान के प्रान्त में पहुँचा। वह लिखता है कि यह प्रान्त सात राज्यों के बराबर बड़ा है। यहाँ उसने एक विशाल झील देखी और जीवन में पहली बार मगर देखा। मगर को देख कर वह घबड़ा गया। उसने लिखा है कि वह सांप जितना बड़ा था व उसकी आंख बड़ी रोटी के बराबर थीं और मुंह इतना बड़ा था कि वह समूचे आदमी को निगल जाता था। पश्चिम की तरफ बढ़ते हुए वह युनान प्रान्त में पहुँचा। वहाँ उसे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि हर एक ही पुरुष अपने दांतों को सोने से मढ़ाता था। युनान से दक्षिण चलकर पोलो बर्मा पहुंचा। बर्मा के सम्बन्ध में उसने लिखा। "मैं पंद्रह दिन तक उस कठिन मार्ग पर चलता रहा इस देश में घने वन हैं जिनमें हाथियों की भरमार है। इस देश की राजधानी व मंदिरों के स्तूप और गुम्बज सोने-चांदी के हैं। बर्मा को भी मंगोलों ने विजय कर लिया था और यह सम्राट कुबलेखाँ का एक प्रान्त था।

साहसी मार्को पोलो मंजे (चीन) को छोड़कर मांजी की तरफ मुड़ा। उस प्रान्त की राजधानी 'हांगचाऊ' थी जिसे स्वर्ग की

राजधानी कहते थे। मार्को ने उस नगर का वर्णन इस प्रकार किया है 'नगर के एक ओर शुद्ध मीठे जल की एक सुंदर भील है। दूसरी ओर एक बहुत बड़ी नदी है। उससे निकाली गई नहरें नगर के प्रत्येक भाग में बहती हैं। नगर के बड़े बड़े चौकोर भाग हैं जो एक मील लम्बे चौड़े हैं। उनके सामने मुख्य सड़क है जिसकी चौड़ाई चालीस गज है। वह सड़क नगर के एक सिरे से दूसरे सिरे तक जाती है।

मार्को पोलो ने लिखा है कि पृथ्वी पर यह सबसे बड़ा नगर है। इस नगर का घेरा सौ मील का है। नहरों पर इधर से उधर जाने के लिए बारह हजार पत्थर के पुल हैं। इनमें से अधिकांश पुल इतने बड़े और ऊँचे हैं कि उनके नीचे से बड़ा जहाज निकल सकता है। नगर सारा का सारा नहरों के किनारे बसा है और नगर के चारों ओर पानी है। वनिस की भांति ही यह नगर भी पानी के किनारे बसा है। यहां के सौदागर इतने धनी हैं कि उनके धन के बारे में न बताया जा सकता है और न कोई उस पर विश्वास ही कर सकता है। फिर ऐसे धनी व्यापारी इने-गिने नहीं बहुत बड़ी संख्या में हैं। ये तथा उनकी स्त्रियां हाथ से कोई काम नहीं करते और राजाओं की भांति शान-शौकत से रहते हैं। उनकी महिलायें अनुपम सुंदरी हैं और उनके सौंदय और वसन को देख कर चकित रह जाना पड़ता है। यहां के लोग मूर्तिपूजक हैं। कागजी मुद्रा का यहां चलन है। सम्राट कुबलेखां ने कुछ समय पूर्व इस प्रदेश को विजय कर अपने साम्राज्य में मिला लिया है। नगर में चार हजार

हम्माम (स्नान-गृह) हैं जहां को पुरुष प्रति दिन स्नान करते हैं। पृथ्वी भर में किसी देश में इतने बड़े और सुंदर स्नान-गृह नहीं हैं। एक एक स्नान-गृह इतना बड़ा है कि उसमें सौ स्त्री या पुरुष एक साथ स्नान कर सकते हैं। इस नगर के अधिकांश निवासी सदैव रेशमी वस्त्र पहिनते हैं। इसका कारण यह है कि रेशम का कपड़ा यहां बहुत बड़ी मात्रा में तयार होता है। इस नगर में कारीगरी बहुत उन्नत अवस्था में है। कारीगरों के बारह बड़े संघ हैं। प्रत्येक मुख्य उद्योग का एक बड़ा कारीगर संघ है। यहां के कारीगर अपने उद्योग को बड़ी कुशलता और ईमानदारी से करते हैं। प्रत्येक कारीगर-संघ में बारह हजार कारखाने हैं और हर कारखाने में कम से कम दस कारीगर काम करते हैं। इस नगर की संख्या के बारे में मार्को पोलो कोई अन्दाज न कर सका। उसने लिखा है कि उस नगर की आबादी बीस पचीस लाख से भी अधिक थी। इस नगर से राज्य को दो करोड़ सोने के सिक्कों का राजकर मिलता था। मार्को पोलो ने लिखा है इसमें कोई भी संदेह नहीं कि यह नगर पृथ्वी पर सबसे धनी सभ्य तथा सुंदर है। इस नगर से २५ मील दूरी पर समुद्र है जहां एक अत्यन्त सुंदर बंदरगाह (निमपो) है जहां भारत तथा अन्य देशों से प्रति दिन सैकड़ों की संख्या में जहाज आते हैं जिनमें बहुमूल्य वस्तुएं भरी होती हैं।"

मार्को पोलो द्वारा चीन का यह वर्णन अत्यन्त आकर्षक है। इसको पढ़कर ऐसा आनन्द आता है कि छकने का मन ही नहीं करता। कोयले के बारे में मार्को पोलो ने लिखा है 'समस्त चीन

में एक प्रकार का काला पत्थर होता है। जो पृथ्वी के अन्दर से निकलता है और लकड़ी की तरह जलता है। उसकी आग लकड़ी की आग से तेज और देर तक रहती है। यदि रात्रि को कोयले जला दिए जावें तो वे प्रातःकाल तक जलते हुए मिलेंगे।

बात यह थी कि मार्को पोलो के योरोप में तो कोयला पैदा ही नहीं था। तब तक योरोप वाले खनिज कोयले को जानते ही नहीं थे। इसी प्रकार मार्को ने नदी के ऊपर कुछ संगमरमर के अद्भुत पुल का वर्णन किया है जिसमें चौबीस महराबें हैं और जो इतना चौड़ा है कि उस पर दस घुड़सवार एक साथ चल सकते हैं। वह कहता है कि यह पुल पृथ्वी की अत्यन्त सुंदर और महत्त्वपूर्ण वस्तु है। 'ह्वांगहो' नदी की विशालता का वर्णन करते हुए मार्को पोलो लिखता है कि वह इतनी चौड़ी है कि उस पर कोई पुल ही नहीं बन सकता। वह अपनी पुस्तक में शहतूत के असंख्य वृक्षों का अत्यन्त विस्तृत वर्णन करता है जिन पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं और जिनसे चीन का प्रसिद्ध रेशम तैयार होता है। चीन में रेशम की बहुतायत का कारण यही शहतूत के पेड़ हैं जो कि देश भर में पाये जाते हैं। पोलो ने चीनी मिट्टी के बर्तनों की भी बहुत प्रशंसा की है। उसने लिखा है कि चीनी मिट्टी के ढेर के ढेर इकट्ठे कर दिए जाते हैं। चालीस साल तक उस मिट्टी को छुआ नहीं जाता। इस तरह उसको पड़ा रखने के बाद उसके सुंदर चीनी के बर्तन बनाए जाते हैं। हवा और पानी में चालीस साल तक पड़ी रहने के कारण यह मिट्टी इतनी अच्छी बन जाती है।

पोलो को जापान का भी पता था। वह पहला योरोप निवासी था जिसने जापान का पता लगाया। जापान के सम्बंध में लिखते हुए उसने कहा है यह द्वीप चीन से दूर है। यहां के निवासी गोरे और सभ्य हैं। इस द्वीप में सोना और चांदी बहुतायत से मिलता है। जापानी मूर्तिपूजक हैं और उनका एक राजा है। कुबलेखां ने इस द्वीप पर वहां के सोने के लिए आक्रमण किया परन्तु वह वहां से सोना न ला सका।

इस प्रकार अपने स्वामी के आदेश से एक के बाद दूसरी लम्बी यात्रा करते हुए मार्को पोलो ने सत्रह वर्ष तक कुबलेखां की सेवा की। कुबलेखां मार्को पोलो से बहुत प्रसन्न था। उसके दरबार में मार्को की बहुत इज्जत थी। उनके पास अनन्त धन सम्पत्ति इकट्ठी हो गई थी क्योंकि कुबलेखां ने उनको बहुत कुछ दिया था। अब पोलो लोग अपने देश को लौटने की बात सोचने लगे। बात यह थी कि उनको अपना देश छोड़े बहुत समय व्यतीत हो गया था। देश की याद आने लगी थी। दूसरी बात यह थी कि सम्राट कुबलेखां अब वृद्ध हो गया था। उसके अन्य दरबारी और मंत्री इन विदेशियों की बढ़ती हुई प्रतिष्ठा के प्रति ईर्षा करते थे। पोलो लोग जानते थे कि सम्राट के मरने पर उनका जीवन ही खतरे में पड़ जायेगा। इस कारण अब वे देश वापस लौटने के लिए छटपटाने लगे। परन्तु कुबलेखां किसी तरह भी उनको जाने नहीं देना चाहता था। इस कारण वे विवश थे। जब जब वे देश वापस जाने की आज्ञा मांगते तब तब कुबलेखां उनकी प्रार्थना को अस्वीकार कर देता।

उसी समय परशिया (ईरान) के बादशाह के दूत कुबलेखाँ के दरबार में आए और उन्होंने सम्राट की सेवा में अपने बादशाह का पत्र दिया। परशिया के बादशाह की अनन्य सुंदरी मलका बुलगाना का देहान्त हो गया। वह मंगोल वंश की अन्यतम सुंदरी थी। परशिया के बादशाह की इच्छा थी कि उसी वंश की किसी सुंदरी को वह अपनी मलका बनाए। इसीलिए उसने कुबलेखाँ को पत्र लिखा था। अपनी भावी मलका को लाने के लिए परशिया के बादशाह ने बहुत से कर्मचारी तथा सैनिक भेजे थे।

पत्र पाकर कुबलेखाँ ने उस वंश की एक कुलीन सुंदरी को जिसकी उमर सत्रह वर्ष की थी बुलाकर फारस के दूत के सुपुर्द कर दिया। सुंदरी शहजादी को लेकर फारस के राजदूत चल दिए। किन्तु आगे जाने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि स्थल-मार्ग से फारस जाना सम्भव नहीं था क्योंकि बीच में अशान्ति थी और युद्ध हो रहा था। वे शहजादी को लेकर वापस कुबलेखाँ की राजधानी लौट आए। उसी समय मार्को पोलो सम्राट की आज्ञा से भारत की यात्रा करके लौटा था। उसने फारस के राजदूत को बतलाया कि फारस को समुद्र के रास्ते भी जाया जा सकता है। फारस के राजदूत ने सम्राट कुबलेखाँ से प्रार्थना की कि पोलो लोगों को उनके साथ कर दिया जावे तो वे समुद्र के रास्ते फारस पहुँच सकते हैं क्योंकि मार्को पोलो को ही समुद्री मार्ग का ज्ञान था। बहुत अनिच्छा पूर्वक सम्राट कुबलेखाँ ने पोलो परिवार को देश लौटने और फारस की भावी मलका को फारस तक पहुँचा देने की आज्ञा दी।

उस अनुपम सुन्दरी फारस की भावी मलका को पहुंचाने के लिए चौदह बड़े समुद्री जहाजों का एक बेड़ा तयार किया गया और सैकड़ों नाविकों की देख रेख में सुन्दरी महारानी को लेकर ६०० सैनिक तथा राजकर्मचारी समुद्री यात्रा को चल पड़े।

तीन महीने की समुद्री यात्रा करने के उपरान्त जहाजी बेड़ा जावा द्वीप पहुंचा। मार्को पोलो ने लिखा है कि यह द्वीप बहुत धनी है। इस सुन्दर द्वीप की प्रशंसा करते हुए वह लिखता है कि लौंग इलायची काली मिर्च तथा सभी कीमती मसाले यहां बहुतायत से उत्पन्न होते हैं। वास्तव में यह मसालों का द्वीप है और पृथ्वी के सभी देशों को मसाले इसी द्वीप से जाते हैं।

जावा को पार कर पोलो का जहाजी बेड़ा सुमात्रा पहुंचा जहां गैंडा देखकर पोलो आश्चर्यचकित हो गया। रसद इत्यादि इकट्ठी करने के लिए तथा जहाजों की मरम्मत करने के लिए यहां पांच महीने जहाज ठहराये गए। किनारे पर उन्होंने मजबूत किलेबंदी की और सैनिक अपनी रक्षा करते रहे क्योंकि यहां के निवासी नर भक्षी थे और मनुष्यों को मार कर खा जाते थे।

सुमात्रा से चल कर ये लोग लंका (सीलोन) पहुंचे। मार्को पोलो ने इस वनस्पति से लहलहाते देश की तो प्रशंसा की ही है परन्तु यहां के राजा के पास पृथ्वी का सबसे बड़ा और सुन्दर माणिक (लाल) की प्रशंसा उसने बड़े उत्साह से की है। उसने लिखा है कि यह अनमोल माणिक हथेली के बराबर चौड़ा और उतना ही मोटा है। उसने शाक्य मुनि भगवान बुद्ध का भी उल्लेख

किया है और लिखा है कि यहां के निवासी भगवान बुद्ध की मूर्ति की पूजा करते हैं। उसने प्राद्म की चोटी का भी उल्लेख किया है।

श्री लंका को पार कर पोलो ने कारोमंडल तट पर भ्रमण किया। यहां वह मोती के उद्योग का उल्लेख करता है। जब वह यहां के राजा के दरबार में गया तो उसके मुकुट गले कानों हाथ, अंगुलियों और पैरों में पहने हुए हीरे और जवाहरात देख कर वह आश्चर्य चकित हो गया। ऐसे बहुमूल्य हीरे उसने जीवन में पहली बार देखे थे। मार्को पोलो ने अपनी पुस्तक में मोती के उद्योग का तो वर्णन किया ही है परन्तु हीरे प्राप्त करने का अत्यन्त सजीव वर्णन किया है। उसने लिखा है कि हीरे की खानों में ऐसी गहरी कन्दराएं हैं और उनके ढाल इतने भयंकर हैं कि उनमें कोई भी व्यक्ति अन्दर नहीं उतर सकता। हीरा इकट्ठा करने वाले पशुओं को मार कर उनका खून से लथपथ मांस इन गहरी पहाड़ी कंदराओं में फेंक देते हैं। इन पहाड़ों पर हजारों की संख्या में चीलें रहती हैं जो तुरन्त कदराओं में जाकर उस मांस को लेकर उड़ती हैं। हीरा इकट्ठा करने वाले उन चीलों को देखते रहते हैं और मांस को लेकर वे जहां बठती हैं वहीं दौड़ कर पहुंच जाते हैं। चीलों को वे डरा कर भगा देते हैं और चीलें मांस वहीं छोड़ उड़ जाती हैं। उन मांस के टुकड़ों में बहुमूल्य हीरे चिपके रहते हैं जो कि हीरा इकट्ठा करने वाले प्राप्त कर लेते हैं। कारोमंडल तट पर स्थित क्विलिन बंदरगाह को भी मार्को ने देखा और काली मिर्च के इस सुन्दर देश की उसने बहुत प्रशंसा की है। वहां के प्राकृतिक दृश्यों की तो उसने प्रशंसा

की ही है। उसने पशु पक्षियों का भी बहुत सजीव वर्णन लिखा है। उसने लिखा है 'इस देश में बहुत से विचित्र पशु होते हैं जो अन्य किसी देश में नहीं पाए जाते। यहाँ काले शेर होते हैं, जिनके शरीर पर और किसी रंग का निशान तक नहीं होता। यहाँ बहुत तरह के तोते होते हैं। कुछ बर्फ की तरह सफेद होते हैं और कुछ लाल होते हैं कुछ हरे होते हैं। संसार में इतने सुन्दर पक्षी कहीं नहीं होते। यहाँ [illegible] और अन्य सभी स्थानों के मोरों से बड़े और अधिक सुन्दर होते हैं।

कारोमंडल से आगे बढ़ कर पोलो का जहाजी बेड़ा गुजरात पहुँचा। यहाँ के ब्राह्मणों को देख कर पोलो बहुत प्रभावित हुआ। उसने लिखा है कि वे लोग मांस नहीं खाते शराब नहीं पीते पशु पक्षियों को नहीं मारते और यहाँ के योगी डेढ़ सौ और दो सौ वर्षों तक जीवित रहते हैं। वे भोले लोग हिंसा नहीं करते। ऐसे पवित्र लोग पृथ्वी में कहीं नहीं मिलते। उनका जीवन बहुत शुद्ध और पवित्र होता है।

गुजरात की खाड़ी से निकल कर मार्को पोलो का बेड़ा सोमनाथ होता हुआ आगे बढ़ा। पोलो ने सोमनाथ के मंदिर की मूर्ति पूजा का भी उल्लेख किया है। अन्त में वह हुरमुज के बंदरगाह पहुँचा। यहाँ लम्बी यात्रा समाप्त हो गई। परन्तु यह यात्रा बहुत महँगी पड़ी। सैकड़ों नाविक मर गए। ६०० यात्रियों में केवल १८ यात्री शेष बचे और सब बीच में ही मर गए। फारस के तीन दूतों में से केवल एक जीवित बचा। लावण्यमय अनुपम सुंदरी राजकुमारी

सहीसलामत फारस पहुँच गई। परन्तु तब तक उसका होने वाला पति वृद्ध फारस का बादशाह मर चुका था। उसका पुत्र गाजान सिंहासन पर बैठ चुका था। उसने उस मंगोल सुंदरी को अपनी मुख्य मलका बना लिया। मंगोल शहजादी युवक बादशाह की मलका बनने से बहुत प्रसन्न थी। मार्को पोलो लिखता है कि जब शहजादी को फारस के बादशाह के रनिवास में पहुंचाकर चलने लगे और शहजादी से विदा मांगी तो उसकी आंखों में आंसू आ गए और उसने उन तीनों को बहुत सम्मान के साथ विदा किया।

देश-विदेशों में पच्चीस वर्ष भटकने के बाद तीनों पोलो १२९५ में वेनिस अपने घर पहुँचे। जब वे अपने घर पहुंचे जिस पर उनके सम्बंधियों ने अधिकार जमा लिया था तो किसी ने विश्वास ही नहीं किया कि वे पोलो हैं (पिता चाचा और पुत्र)। बात यह थी कि कठिन यात्रा के कारण उनके चेहरों का रंग तांबे जैसा हो गया था। पच्चीस वर्ष तक तातारी भाषा बोलने के कारण वे अपनी भाषा को भी ठीक तरह से नहीं बोल पाते थे। उनकी वेश भूषा मंगोलों जैसी थी। किसी प्रकार वे अपने घर में घुसे और उन्होंने सार्वजास को एक बड़ा भोज दिया जिसमें अपने सभी सम्बंधियों और मित्रों को आमंत्रित किया। वे अत्यन्त सुंदर रेशमी वस्त्रों में भोज में आए और ज्योंकि सब मेहमान मेजों पर बैठ गए तो मार्को पोलो अन्दर गया और उन तीन मंगोल लबादों को ले आया जो वे उस समय पहिने हुए थे जब वे वेनिस में यात्रा से लौटने पर घुसे थे। पोलो ने कैंची से उन भारी लबादों की तहों और सीवन को काटना

प्रारम्भ किया। सभी मेहमानों ने आश्चर्य चकित होकर देखा कि उन फटे कपड़ों में से ढेर का ढेर हीरे, माणिक पन्ना, नीलम पुखराज निकलने लगे। देखते देखते बहुमूल्य हीरों और जवाहरातों का एक बड़ा ढेर लग गया। सारे शहर में तेजी से यह खबर फैल गई तो वेनिस के सभी लोग अपने उन प्रसिद्ध और साहसी देश-वासियों का आदर और स्वागत करने के लिए उनके घर दौड़ आए। उसके बाद तो तीनों पोलो का ऐसा भव्य स्वागत हुआ जैसा कि वेनिस में किसी का भी नहीं हुआ था।

सर हेनरीयूल ने मार्को पोलो का एक सुंदर जीवन चरित्र लिखा है। उसका नीचे लिखा अंश मार्को पोलो के महत्व का अच्छा चित्र खींचता है वह पहला यात्री था जिसने समस्त एशिया को स्थल के मार्ग से पार किया और रास्ता खोज निकाला। उस लम्बे रास्ते पर चलते हुए जो एक के बाद बहुत से राज्य मिले उनका उसने बहुत रोचक वर्णन किया है। फारस के रेगिस्तान बदख्शान का लहलहाता सुंदर पठार खोतान की तूफानी नदियां मंगोलिया के हरे भरे मैदान जहां मंगोलों के सम्राट निवास करते थे जिसने सारे योरोप और एशिया को भयभीत कर दिया चीन तथा उसके सम्राट की शान-शौकत का उसने जैसा सजीव चित्र खींचा है वैसा कम यात्रियों ने किया होगा। उसने योरोप वालों को चीन की धन दौलत उसकी नदियों और बड़े नगरों के बारे में पहली बार सही जानकारी दी। यही नहीं उसने तिब्बत बर्मा स्याम सेमास कोचीन चीन तथा जापान सभी को खोज निकाला और उनके बारे

में सबसे पहले दुनिया को बतलाया। उसने भारत के बारे में भी लिखा और उसमें पूर्वी द्वीपों जावा सुमात्रा तथा अफ्रीका के अबीसीनिया देश मैडागास्कर और जंजीबार की भी यात्रा की। यही नहीं मार्को पोलो ने योरोप से चीन तक जाते समय साइबेरिया और उत्तरी महासमुद्र के बारे में भी लिखा है। वास्तव में मार्को पोलो एक महान साहसी पर्यटक था। और वह सदैव यात्रियों को प्रेरणा देता रहेगा। पर्यटन के इतिहास में मार्को पोलो का नाम सदैव अमर रहेगा।



# दूसरा परिच्छेद

## इब्न बतूता की यात्रा

एशिया को खोजने वालों में इब्न बतूता का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। इब्न बतूता ने मार्को पोलो से भी अधिक क्षेत्र की यात्रा की। वह मुस्लिम पर्यटकों में सबसे महान और सफल पर्यटक था। इब्न बतूता अफ्रीका में टैंजियर का रहने वाला था। १३२५ में जब वह बीस वर्ष का युवक था तब वह अपनी आश्चर्य जनक और महत्वपूर्ण यात्रा के लिए निकल पड़ा। उसकी यह महत्वपूर्ण यात्रा बत्तीस वर्षों तक चलती रही।

वास्तव में इब्न बतूता मक्का की धार्मिक यात्रा के लिए निकला था। वह टैंजियर के स्थल मार्ग से उत्तरी अफ्रीका में अलेक्जेंड्रिया तक आया। वहाँ उसने अलेक्जेंड्रिया का जगत प्रसिद्ध प्रकाश-गृह देखा जो बंदरगाह के समीप समुद्री जहाजों को भयंकर चट्टानों के खतरे से सूचित करता था। अलेक्जेंड्रिया में उसे एक पवित्र आत्मा और विद्वान व्यक्ति मिला जिसका नाम इमाम था। उसने इब्न बतूता से पूछा "मैं देख रहा हूं कि तुम्हें देश विदेशों की यात्रा का शौक है।"

बगदाद की यात्रा की। इस यात्रा के सम्बंध में बतूता ने लिखते हुए कहा है "हम मदीना से चलकर नज्द के प्रदेश में आए जो विशाल चौरस मैदान है और हमने उसकी सुगंधित वायु में सांस ली। फैद जो नज्द की राजधानी है मक्का और बगदाद के बीच में है। फैद तक प्रसिद्ध हारून रशीद की पत्नी जुबैदा ने जहां जहां पानी मिलता था वहां उसके तालाब बनवा दिए थे इस कारण फैद तक पानी का अधिक कष्ट नहीं हुआ। फैद से आगे बढ़ने पर 'शैतान का दर्रा' पार करना पड़ा जो कि बहुत कठिन है। उसके उपरान्त वसीका पहुंचे जहां के तालाबों की रक्षा के लिए अच्छी इमारतें बनाई गई हैं। इराक में घुसने पर बतूता ने करबेलिया के पवित्र रण-स्थल को भी देखा जहां फारस से मुस्लिम सेनाओं का युद्ध हुआ था और जिसमें हुसैन ने इस्लाम धर्म को विजयी बनाया था। आगे बढ़ने पर मश्हद नगर पड़ा जहां अली का मकबरा था जिसकी सीढ़ियां चांदी की हैं और जिसे प्रत्येक धार्मिक मुसलमान चूमता है।

मश्हद से आगे चलकर बतूता बसरा पहुंचा जहां ताड़ वृक्षों की शीतल छाया और निर्मल जल ने बतूता की थकावट को दूर कर दिया। बसरा से वह मध्य पर्शिया (ईरान) में घुसा जहां उसने तुस्तर का भव्य और मनमोहक बांध देखा और समस्त प्रसिद्ध इस्फहान और शीराज नगरों की रंगीली सौंदर्य और वैभव से अपनी आंखों को सफल किया। शीराज के बारे में इब्न बतूता ने लिखा है "समस्त पूर्व में बाजारों बागों और नदियों की सुंदरता के लिए शीराज अद्वितीय है' यहां उसको रुक्नाबाद की प्रसिद्ध और

प्राकृतिक दृश्यों से भरपूर नदी मिली जिसकी उसने बहुत अधिक प्रशंसा की है। इसी नदी के सम्बंध में प्रसिद्ध कवि हाफिज ने गाया है 'उससे कहो कि उसका ऐश्वर्य रुकनाबाद नदी सुंदर और पुष्प ललित-धारा नहीं बिखरा सकता।

इब्न बतूता ने यहां संसार प्रसिद्ध कवि और गायक शेख सादी की समाधि पर अपनी श्रद्धांजलि चढ़ाई और उसके स्वरों में अपना स्वर मिलाकर उसने शीराज की सुंदरता की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। शेख सादी ने शीराज की प्रशंसा करते हुए लिखा था 'इस शहर को देख कर परदेसी भी मुग्ध हो जाता है और अपने घर को भूलकर उसका प्रशंसक बन जाता है।"

शीराज से इब्न बतूता मैसोपोटामिया गया और कूफा का प्राचीन नगर देखा। एक समय यह नगर खलीफा की राजधानी था। बतूता बगदाद भी गया किन्तु बगदाद का वैभव हलाकू की लूट के कारण नष्ट हो चुका था। बगदाद हलाकू के आक्रमण से सम्भला नहीं था। वहां की मस्जिदें और महाविद्यालय सब नष्ट हो चुके थे। इब्न बतूता यहां फारस के बादशाह अबू-सैयद से मिला और उसके लश्कर के साथ तबरेज गया। १३२७ में इब्न बतूता बगदाद से फिर मक्का लौट गया और वहां तीन वर्ष तक ठहरा। वहां उसने इस्लाम धर्म-शास्त्र का अध्ययन किया।

१३३० में वह फिर पर्यटन के लिए निकल पड़ा और उसने यमन को खोज निकाला। उसने इस प्रदेश के सम्बंध में लिखा है कि यहां वर्षा केवल गर्मियों में ही होती है। खास बात यह थी कि उसको

मानसून हवाओं के बारे में कोई ज्ञान नहीं था। यमन से बतूता अदन के बन्दरगाह आया। उसने लिखा है कि अदन का बन्दरगाह चारों ओर से पहाड़ों के द्वारा घिरा है केवल एक ओर से ही उस तक पहुंचने का मार्ग है। वहां न कोई फसल पैदा होती है न वहां फल है और न वहां कोई नदी है। केवल तालाब या बांध हैं जहां वर्षा का जल इकट्ठा कर लिया जाता है।

अदन से समुद्री जहाज द्वारा चल कर बतूता ने अफ्रीका के पूर्वी तट का रास्ता पकड़ा और जैला नामक स्थान पर ठहरा। उसने लिखा है कि इस नगर में बाजार बड़ा है और हब्शी लोग रहते हैं। किन्तु यह दुनिया का सबसे गंदा शहर है। वहां से बतूता मुमबासा और किलवा पहुंचा। किलवा से पंद्रह दिन की यात्रा की दूरी पर सोफाला नामक स्थान था जहां सोने की धूल बहुत मिलती थी।

अफ्रीका के समुद्री तट को छोड़कर इब्न बतूता अमन पहुंचा और फारस की खाड़ी में दाखिल हुआ। फारस की खाड़ी में तट पर हरमुज का शहर था जिसे मार्को पोलो ने दो बार देखा था। उसका वर्णन करते हुए बतूता ने लिखा है कि वह एक बड़ा और सुन्दर शहर है। हरमुज से इब्न बतूता बसरा की ओर मुड़ा। उसके उपरान्त उसने बेहरिन में मोती इकट्ठा करने का धंधा देखा। इसके सम्बंध में बतूता ने लिखा है कि फारस की खाड़ी में केवल यही एक ऐसा स्थान है जिसे देख कर मन प्रसन्न हो गया। बतूता फिर स्थल पर उतरा और एक बार फिर उसने अरब की मरुभूमि को दूसरी ओर से पार किया। इब्न बतूता के साहस और पर्यटन की

लालसा की बिना प्रशंसा किए नहीं रहा जा सकता क्योंकि वही ऐसा पर्यटक था जिसने एक यात्रा में ही दो बार अरब की मरुभूमि को पार किया।

इसके उपरान्त वह अनातोलिया गया। वहां से वह प्रसिद्ध संत जलालउद्दीन रूमी के मकबरे का दर्शन करने गया। जिसने नाचने वाले दरवेशों (मेवलेवी) का सम्प्रदाय चलाया और जो महान इस्लामी रहस्यवादी कवि था। चलते चलते वह ऐकसिस पहुँचा जहां उसने चालीस दीनार में एक लड़की (दास) खरीदी। आगे बढ़ कर वह ब्रूसा पहुंचा जहां उसने ओममनाजी फकीरों को देखा। ब्रूसा का सुलतान ओरखान-बेग था। उसके पिता ने ब्रूसा को यूनानियों से छीन लिया था। आगे बढ़ कर उसने काले सागर को पार किया और काफा पहुंचा। वहां से वह सराय तथा कोंस्टेन्टिनोपिल गया और उस भाग की यात्रा की जिसका वर्णन मार्को पोलो ने किया था।

यह न थकनेवाला पर्यटक अपने आगे खीवा के उपजाऊ और लहलहाते जल स्रोत के पास पहुंचा। उसकी राजधानी उरगंज के बारे में उसने लिखा है कि 'यह तुर्कों का सबसे बड़ा सबसे महत्त्वपूर्ण और अत्यन्त सुंदर नगर है।' इस नगर को चंगेजखाँ ने नष्ट भ्रष्ट कर दिया। वहां से बढ़ता बुखारा गया और समरकंद की सैर की। आगे चलकर समरकंद तैमूर की राजधानी बना।

समरकंद से आगे बढ़कर उसने आक्सस नदी को पार किया और खुरासान प्रान्त में घूम कर बलख पहुँचा। बलख जैसा सुंदर नगर

भी चंगेजखाँ ने ध्वंस कर दिया था, वहाँ से चल कर वह हिरात पहुँचा जिसे चंगेजखाँ ने ध्वंस कर दिया था। किन्तु जब बतूता वहाँ पहुँचा तो उसका नव निर्माण हो चुका था और वह फिर सुंदर नगर बन गया था। हिरात को पीछे छोड़ कर बतूता मशहद पहुँचा जहाँ इमाम रिज़ा और हारून-अलरशीद की समाधियाँ थीं जिनके गुम्बजों पर सोना मढ़ा हुआ था।

इब्न बतूता ने भारत की सभ्यता यहाँ की कला और सुंदरता के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। अतएव उसने निश्चय किया कि भारत की ओर चला जावे। इसी उद्देश्य से उसने हिन्दुकुश पर्वत को पार किया और गजनी होता हुआ सिंध नदी के किनारे १३३३ में पहुँच गया। सिंध नदी के किनारे पहुँच कर उसको अत्यन्त प्रसन्नता हुई और उसने लिखा है कि मैंने वहाँ पहुँच कर खुदा को सकुशल यात्रा के लिए धन्यवाद दिया।

इब्न बतूता का भारत में आने का उद्देश्य यह था कि वह मुहम्मद बिन तुगलक के दरबार में नौकरी करे जो कि अपने दरबार में विद्वानों का आदर करता था। जब वह मुलतान में था तो उसे सुलतान के दरबार में आने का निमंत्रण मिला। वह प्रसन्न होकर दिल्ली की ओर चल पड़ा। उसने देखा कि भारत में जाति प्रथा है लोग खाते समय एकान्त में रहते हैं किसी के सामने नहीं खाते। एक जाति वाला दूसरी जाति वाले के साथ नहीं खाता। उसने देखा कि हिन्दू स्त्रियाँ अपने पतियों के साथ जल कर सती हो जाती हैं। एक ऐसे अवसर पर वह बेहोश हो गया। उसने देखा कि हिन्दू

पवित्र गंगा में स्नान करना सबसे बड़ा धार्मिक कार्य मानते हैं।

जब बतूता दिल्ली दरबार में पहुँचा तो सुलतान ने उसका बहुत आदर और सम्मान किया। सुलतान के बारे में उसने लिखा है "सुलतान को युद्ध करने और भेंट देने का बहुत शौक है" सुलतान ने उसे काज़ी बना दिया और सुलतान कुतुबुद्दीन के मकबरे का संरक्षक नियुक्त कर दिया। सुलतान की बतूता पर बहुत अधिक कृपा थी। जब इब्न बतूता देहली पहुँचा तो देहली वीरान हो गया था। सुलतान ने आज्ञा दे दी थी कि लोग देहली छोड़कर दौलताबाद चले जावें। इब्न बतूता ने सुलतान की इस विचित्र आज्ञा का सजीव वर्णन किया है। उसने लिखा है कि अधिकांश देहली वासी दिल्ली छोड़कर चले गए किन्तु कुछ घरों में छिप गए। सुलतान ने आज्ञा दी कि छिपे हुए लोगों की खोज की जावे। सुलतान के गुलामों को दो व्यक्ति सड़क पर मिल गए। एक लूला था और दूसरा अंधा था। सुलतान ने आज्ञा दी कि लूले को तोप में लटका कर और अंधे को घसीट कर दौलताबाद तक ले जाया जावे। सुलतान की आज्ञा का पालन किया गया। अंधे का शरीर रास्ते में ही टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गया। केवल उसकी एक टांग दौलताबाद पहुँची।

उस क्रूर सुलतान के दरबार में बतूता आठ वर्षों तक रहा। अधिकांश समय सुलतान की उस पर कृपा बनी रही परन्तु वह सैलानी पर्यटक एक बार सुलतान का कोप भाजन बन गया। बात यह थी कि उत्कण्ठा वश यह एक ऐसे शेख से मिलने चला गया जिस पर सुलतान को संदेह था। किसी प्रकार बतूता की जान बची नहीं तो

भी चंगेज़ख़ाँ ने ध्वंस कर दिया था वहाँ से चल कर वह हिरात पहुँचा जिसे चंगेज़ख़ाँ ने ध्वंस कर दिया था। किन्तु जब बतूता वहाँ पहुँचा तो उसका नव निर्माण हो चुका था और वह फिर सुंदर नगर बन गया था। हिरात को पीछे छोड़ कर बतूता मशहद पहुँचा जहाँ इमाम रिज़ा और हारुन अलरशीद की समाधियाँ थीं जिनके गुम्बजों पर सोना मढ़ा हुआ था।

इब्न बतूता ने भारत की सम्पन्नता वहाँ की कला और सुंदरता के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। अतएव उसने निश्चय किया कि भारत की ओर चला जावे। इसी उद्देश्य से उसने हिन्दूकुश पर्वत को पार किया और पश्ती होता हुआ सिंध नदी के किनारे १३३३ में पहुँच गया। सिंध नदी के किनारे पहुँच कर उसको अत्यन्त प्रसन्नता हुई और उसने लिखा है कि मैंने यहाँ पहुँच कर खुदा को सकुशल यात्रा के लिए धन्यवाद दिया।

इब्न बतूता का भारत में आने का उद्देश्य यह था कि वह मुहम्मद बिन तुग़लक़ के दरबार में नौकरी करे जो कि अपने दरबार में विद्वानों का आदर करता था। जब वह मुलतान में था तो उसे सुलतान के दरबार में आने का निमंत्रण मिला। वह प्रसन्न होकर दिल्ली की ओर चल पड़ा। उसने देखा कि भारत में जाति प्रथा है, लोग खाते समय एकान्त में रहते हैं किसी के सामने नहीं खाते। एक जाति वाला दूसरी जाति वाले के साथ नहीं खाता। उसने देखा कि हिन्दू स्त्रियाँ अपने पतियों के साथ जल कर सती हो जाती हैं। एक ऐसे अवसर पर वह बेहोश हो गया। उसने देखा कि हिन्दू

पवित्र गंगा में स्नान करना एवमी बड़ा धार्मिक कार्य मानते हैं।

जब बतूता दिल्ली दरबार में पहुँचा तो सुल्तान ने उसका बहुत आदर और सम्मान किया। सुल्तान के बारे में उसने लिखा है "सुल्तान को पुण्य करने और भेंट देने का बहुत शौक है"। सुल्तान ने उसे काज़ी बना दिया और सुल्तान कुतुबुद्दीन के मकबरे का संरक्षक नियुक्त कर दिया। सुल्तान की बतूता पर बहुत अधिक कृपा थी। जब इब्न बतूता देहली पहुँचा तो देहली वीरान हो गया था। सुल्तान ने आज्ञा दे दी थी कि लोग देहली छोड़कर दौलताबाद चले जावें। इब्न बतूता ने सुल्तान की इस विचित्र आज्ञा का सजीव वर्णन किया है। उसने लिखा है कि अधिकांश देहली वासी दिल्ली छोड़कर चले गए किन्तु कुछ घरों में छिप गए। सुल्तान ने आज्ञा दी कि छिपे हुए लोगों की खोज की जावे। सुल्तान के गुलामों को दो व्यक्ति सड़क पर मिल गए। एक लूला था और दूसरा अंधा था। सुल्तान ने आज्ञा दी कि लूले को तोप में रखकर उड़ा दो और अंधे को घसीट कर दौलताबाद तक ले जाया जावे। सुल्तान की आज्ञा का पालन किया गया। अंधे का शरीर रास्ते में ही टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गया। केवल उसकी एक टांग दौलताबाद पहुँची।

इस प्रकार सुल्तान के दरबार में बतूता आठ वर्षों तक रहा। अधिकांश समय सुल्तान की उस पर कृपा बनी रही परन्तु यह सैलानी पर्यटक एक बार सुल्तान का कोप भाजन बन गया। बात यह थी कि बतूता यहाँ एक ऐसे शेख से मिलने चला गया जिस पर सुल्तान को संदेह था। किसी प्रकार बतूता की जान बची नहीं तो

उसको फांसी निश्चित थी। परन्तु कचौरी लेकर और अपने मन
फकीरों में बांट कर उसने फिर सुलतान को प्रसन्न कर लिया।

एक दिन सुलतान ने उसे बुलाया और कहा कि मैं तुम्हें अप
राजदूत बनाकर चीन के सम्राट के दरबार में भेजना चाहता
क्योंकि मैं जानता हूं कि तुम विदेशों में भ्रमण करने के शौ
हो।

बात यह थी कि चीन के सम्राट ने भारत के सम्राट के लि
कुछ उपहार भेजे थे। सुलतान भी चीन के सम्राट को कु
उपहार भेजना चाहता था। भारत के सुलतान ने चीन
सम्राट के लिए एक सौ उत्तम जाति के घोड़े एक सौ सुं
नर्तकियां और सौ बढ़िया सूती रेशमी और ऊनी कपड़े के था
बढ़िया तलवारें सोने के शमादान चांदी के सुन्दर बर्तन जरी
काम की पोशाकें और मोती के बड़े दस्ताने इत्यादि बहुमूल्य उपह
देकर इब्न बतूता को विदा किया। उसके साथ चीन के पंद्रह राजदू
थे। साथ में एक हजार सैनिक सवार थे। देहली से इब्न बतू
केवल ८ मील ही गया होगा कि कुछ विद्रोहियों ने आक्रमण क
दिया। इब्न बतूता पकड़ा गया। विद्रोहियों ने सब कुछ लूट लि
और इब्न बतूता किसी प्रकार अपनी जान बचा कर निकल भागा
वहां से बचकर वह जंगल में भाग गया और भूखा प्यासा भ्रमण
देहली लाया गया। दूसरी बार फिर उपहार लेकर सभी लो
ग्वालियर धार दौलताबाद होते हुए खम्भात की खाड़ी में पहुंचे
वहां से जहाजों के द्वारा गान्धार पहुंचे जो कि कासी मिर्च का बे

है। इब्न बतूता ने इस प्रदेश की प्राकृतिक सुन्दरता की बहुत प्रशंसा की है। कालीकट के बन्दरगाह पर उतर कर व चीन की यात्रा के लिए अनुकूल मौसम की प्रतीक्षा में तीन महीने ठहरे रहे। कालीकट के बन्दरगाह में बहुत से बड़े बड़े और मजबूत चीनी जहाज थे। जब कालीकट से चीन चलने का समय आया तो तेरह बड़े चीनी जहाजों पर दिल्ली सुल्तान के भेजे हुए उपहारों को लादा गया। प्रातःकाल चलने की सारी तैयारियां करली गई। इब्न बतूता तट पर मस्जिद में प्रार्थना कर रहा था। उस रात्रि को एक भयंकर तूफान आया और बन्दरगाह में खड़े सारे जहाज नष्ट हो गए। जिस जहाज पर इब्न बतूता जाने वाला था उसके मल्लाहों ने जब यह देखा तो वे भी पाल चढ़ाकर जहाज को लेकर भाग गए। इब्न बतूता का धन दास दासियां कर्मचारी सुल्तान द्वारा दिए गए उपहार या तो समुद्र में डूब गए अथवा वे भाग गए। केवल इब्न बतूता अकेला रह गया।

इब्न बतूता को फिर यह साहस नहीं हुआ कि वह देहली लौटे। एक जहाज जा रहा था वह उसी पर सवार होकर "मालद्वीप" पर जो हिन्द महासागर में है उतर गया। इब्न बतूता ने लिखा है कि यह द्वीप जो संख्या में दो हजार हैं संसार का महान आश्चर्य हैं। उन द्वीपों पर एक रानी राज्य करती थी। उसने इब्न बतूता को अपने राज्य का काजी बना दिया। इब्न बतूता ने वहां के वजीर की लड़की से विवाह कर लिया और अन्य तीन सुंदर स्त्रियों को भी अपनी पत्नी बना लिया। उसने लिखा है

कि इन द्वीपों में सुन्दर स्त्रियां पाना बहुत आसान है। उक्त द्वीप की मुख्य पैदावार नारियल कौड़ी और नारियल की जटा से बने रस्से थे। उसने उन द्वीपों के निवासियों को मस्जिद में ले जाने और स्त्रियों को कपड़ा पहिनाने का बहुत प्रयत्न किया किन्तु वह सफल नहीं हुआ। उस देश की रानी उसका आदर करती थी किन्तु उसका वजीर उसके बढ़ते हुए प्रभाव के कारण उससे जलता था। इस कारण इब्न बतूता का मन अशान्त हो गया और वह फिर यात्रा के लिए निकल पड़ा। वहां से चल कर बतूता लंका आया। वहां के राजा ने उसका आदर किया और आदम की चोटी पर जाने का प्रबन्ध कर दिया। इब्न बतूता ने लिखा है कि लंका का पहाड़ पृथ्वी के सबसे ऊंचे पहाड़ों में से है। उसकी चोटी बादलों से बहुत ऊंची थी और पहाड़ पर बहुत रंगों के फूल और भांति भांति के हरे वृक्ष थे। वहां गुलाब हथेली के बराबर होता है।

लंका से इब्न बतूता कारोमंडल तट की ओर बढ़ा। बीच में उसका जहाज टकरा कर डूब गया किन्तु बतूता सकुशल कारोमंडल तट पर पहुंच गया। वहां का सुलतान उसकी देहली वाली पत्नी का सम्बन्धी था। इस कारण सुलतान ने उसका उचित सम्मान किया। वहां उसको बहुत तेज बुखार आया लेकिन वह बच गया और स्वस्थ होने पर फिर समुद्र यात्रा के लिए चल पड़ा। परन्तु समुद्री डाकुओं ने रास्ते में ही उसके जहाज को लूट लिया। उसके पास जो भी हीरे जवाहरात थे वे सब डाकुओं ने लूट लिए। वह फिर कालीकट दीन-हीन अवस्था में लौट आया। अत्यन्त निर्धन

हो जाने पर भी इब्न बतूता ने साहस नहीं छोड़ा और वह फिर मालद्वीप गया। यद्यपि वहां उसका फिर आदर और सम्मान हुआ परन्तु वह वहां ठहरा नहीं और बंगाल की ओर चल दिया। वह आसाम में सिलहट एक प्रसिद्ध संत जलालउद्दीन के दर्शन करने गया। संत ने उसको बकरी के बाल दिए जो कि बहुत चमत्कारी थे। वहां से जावा सुमात्रा होता हुआ इब्न बतूता चीन पहुंचा।

चीन के बारे में इब्न बतूता लिखता है यह एक विशाल देश है। इसमें तरह तरह की मूल्यवान वस्तुएं मिलती हैं। रेशम फल अनाज सोना और चांदी यहां बहुत मिलता है। इस देश में एक बहुत बड़ी नदी है। इस देश में अगणित गांव हैं, और खेती से देश लहलहाता है। इस देश में रेशम बहुत होता है क्योंकि यहां रेशम का कीड़ा बड़ी सरलता से पाला जाता है। रेशम की चीन में इतनी बहुलता है कि यहां के निर्धन व्यक्ति और भिखारी भी रेशमी कपड़ा पहिनते हैं। चीन में सोने और चांदी के सिक्कों का चलन नहीं है। यहां कागज की मुद्रा चलती है जिस पर सम्राट की मुहर होती है। इब्न बतूता ने चीन की चित्रकला की भी बहुत प्रशंसा की है। जो कोई परदेशी यहां आता है उसका चित्र बनाकर शहर की दीवार पर लगा दिया जाता है। यदि कोई परदेशी कोई अपराध करके भागना चाहे तो उसका चित्र सभी प्रान्तों में भेज दिया जाता है और वह पकड़ लिया जाता है। वह लिखता है कि यात्री के लिए चीन पृथ्वी के सभी देशों में सबसे अधिक सुरक्षित और आनन्ददायक देश है। यदि तुम्हारे पास हीरे जवाहरात भी क्यों न हों अकेले यात्रा करने में यहां

कोई भय नहीं है। जिस समय इब्न बतूता चीन में था उस समय प्रान्त के भागों में युद्ध छिड़ा हुआ था। महान खान मर चुका था जिसको बड़ी शान-शौकत से दफनाया गया। पृथ्वी में एक बड़ा तहखाना बना कर एक सुंदर पलंग पर खान का मृत शरीर रक्खा गया। उसके साथ उसके हथियार और उसके कीमती वस्त्र रख दिए गए और उस पर इतनी मिट्टी डाली कि एक बड़ी पहाड़ी बन गई।

इब्न बतूता की अन्तिम यात्रा अफ्रीका में हुई। वह जिब्राल्टर पर उतरा और उसने सहारा की यात्रा की। सहारा मरुभूमि की यात्रा कर चुकने के बाद उसने पश्चिमी सूडान की यात्रा की। जिस समय बतूता अफ्रीका की यात्रा कर रहा था तब वहां 'माली' राज्य बहुत उन्नत अवस्था में था। टिम्बक्टू उसकी राजधानी थी। मरक्को ट्रिपोली और ईजिप्ट (मिस्र) से उसका व्यापार होता था। उसने नील नदी के उद्गम स्थान की ओर नील नदी के देश में उस नदी में नावों द्वारा यात्रा की। जब इब्न बतूता 'तम्बारा' में था तो उसको मरक्को सुलतान का संदेश मिला कि वह उसकी राजधानी में आए। यह आज्ञा सुनकर वह फिर चल दिया और मरक्को की राजधानी फैज़ पहुंच गया। वहां वह सुलतान के दरबार में हाजिर हुआ और वह उसकी संरक्षता में रहने लगा। इस प्रकार १३५४ में वह फिर अपने देश पहुंच गया।

इब्न बतूता बत्तीस लम्बे वर्षों तक यात्रा करता रहा और उसने लगभग पचहत्तर हजार मील की यात्रा की। इब्न बतूता

ने अपने समय की प्रायः समस्त जानी हुई भूमि की यात्रा की। यद्यपि उससे पूर्व मार्को पोलो ने चीन यात्रा की थी और उसका विशद् वर्णन लिखा था परन्तु मरक्को तथा पश्चिमी सूडान की सब प्रथम उसने ही खोज की और उस यात्रा का अत्यन्त सजीव वर्णन लिखा।

# तीसरा परिच्छेद

## भारत की खोज — वास्को डी गामा

विभिन्न देशों की खोज करने वालों में वास्कोडीगामा का नाम सदैव अमर रहेगा क्योंकि उसने सबसे पहले भारत तक पहुंचने के लिए समुद्री मार्ग खोज निकाला। बात यह थी उस समय पृथ्वी भर में भारत के धन कारीगरी की वस्तुओं और यहां की ऊंची सभ्यता और संस्कृति की धूम थी। जो भी देश भारत से व्यापार करता था वह मालामाल हो जाता था। भारत की बनी हुई सुंदर कारीगरी की वस्तुओं की योरोप की राजधानियों में बहुत मांग थी। मध्य एशिया में तुर्कों का साम्राज्य स्थापित हो जाने से भारत से व्यापार करने का पुराना कारवां मार्ग योरोप के देशों के लिए बन्द हो चुका था। इसलिए योरोप के देश भारत के लिए जलमार्ग ढूंढ निकालने के लिए बहुत इच्छुक थे।

पुर्तगाल का राजकुमार हेनरी जो समुद्री मार्गों की खोज करने वालों का सबसे बड़ा नेता था और जिसने योरोप में समुद्री मार्गों की खोज निकालने की अमिट प्यास पैदा करदी उसकी यह सबसे बड़ी अभिलाषा थी कि भारत पहुंचने के लिए समुद्री मार्ग खोज

निकाला जावे। जो कार्य उसके जीवन काल में नहीं हो सका वह उसके मरने के बाद वास्को डी गामा ने पूरा किया और राजकुमार हेनरी का स्वप्न पूरा हुआ।

वास्को डी गामा का जन्म १४६ में साइन नामक समुद्र के किनारे एक छोटे से कस्बे में हुआ जहां मछुए रहते थे। बचपन से ही समुद्र में रहने के कारण गामा साहसी नाविक बन गया। उसको समुद्र यात्रा की बहुत लालसा थी और उसने सुन रक्खा था कि पुर्तगाल के बादशाह भिन्न भिन्न देशों की खोज करवाने के लिए साहसी नाविकों को भेजा करते हैं। इसलिए उसने पुर्तगाल के बादशाह के यहां नौकरी करली। गामा को पुर्तगाल के बादशाह ने भारत के समुद्री मार्ग की खोज निकालने के लिए कैसे चुना इसकी भी एक अनोखी कहानी है। पुर्तगाल के बादशाह इम्मैनुअल के मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि भारत के लिए समुद्री मार्ग खोज निकालने के लिए साहसी नाविकों को भेजना चाहिए। वह जानता था कि भारत एक धनी देश है। समुद्री मार्ग ढूंढ निकालने पर उसके व्यापार से पुर्तगाल मालामाल हो जावेगा। लेकिन वह यह भी जानता था कि अफ्रीका के दक्षिण में आशा-अन्तरीप को पार कर हिन्द महासागर में पहुंचना बड़ा कठिन और बड़े जोखिम का काम है। भारत के लिए समुद्री मार्ग खोज निकालने की उसकी इच्छा इतनी प्रबल हो गई कि उसने इस कठिन यात्रा के लिए जहाज़ बनाने की आज्ञा दे दी। जहाज़ बनाने वालों को यह भी आज्ञा दी गई कि वे उसी तरह के जहाज़ बनावें जिन्हें लेकर बारथोलोम्यू-डियाज़ ने

यात्रा अन्तरीप तक की समुद्र से यात्रा की थी। जब जहाज़ बन कर तैयार हो गए तो पुर्तगाल के राजा को यह चिन्ता हुई कि इस खोज का नेता या कप्तान कौन हो। उसको कोई ऐसा साहसी नज़र नहीं आता था। दिन बीतते गये। एक दिन राजा अपने दरबारियों के साथ सभा भवन में बैठा था। राजा ने जब आँख उठा कर देखा उसी समय वास्को डी गामा सभा भवन में आया। राजा की नज़र उस पर पड़ी। एकायक उसके मन में यह विचार उठा कि भारत की खोज के लिए वास्को डी गामा को भेजना चाहिए। राजा ने वास्को डी गामा को बुलाया और उसको भारत यात्रा का नेता और कमांडर नियुक्त कर दिया। वास्को डी गामा ने घुटने के बल झुक कर राजा को अभिवादन किया और इस महान पद को स्वीकार किया। राजा ने उसको एक रेशमी झंडा दिया जिस पर ईसाई धर्म चिह्न क्रास बना हुआ था। वास्को डी गामा उस समय छत्तीस वर्ष का था उसने विवाह नहीं किया था और उसमें साहस और आत्म विश्वास कूट कूट कर भरा था। यात्रा के लिए जहाज़ तैयार किए गए, खाने-पीने की चीजें भारी मात्रा में भरली गईं। उस समय तक भूगोल का जो भी ज्ञान योरोप वालों को था उसके बारे में लिखी गईं पुस्तकें—जैसे टोलेमी का भूगोल मार्को पोलो की यात्रा का वर्णन चित्र इत्यादि सभी वस्तुएं रखली गईं। जहाज़ों को अस्त्रों और शस्त्रों से लैस किया गया। वास्को डी गामा ने अपने साथ चलने के लिए १७ आदमियों को चुना। सब तैयारियां कर चुकने के बाद वास्को डी गामा अपने साथियों के साथ रात्रि में

गिर्जाघर में भगवान से यात्रा की सफलता के लिए प्रार्थना करता रहा।

आठ जुलाई १४९७ को प्रातःकाल वास्को डी गामा गिर्जाघर से अपने साथियों के साथ निकला। सभी के हाथों में जलती हुई मोम बत्तियाँ थीं। पादरी लोग धार्मिक मंत्रों का उच्चारण कर रहे थे। जलूस समुद्र के किनारे आया जहाँ जहाज खड़े थे। समुद्र के किनारे बहुत भीड़ थी। सभी की आँखों में आँसू भरे हुए थे। बहुत से तो दुःख विह्वल विलाप कर रो रहे थे। वास्को डी गामा और उसके साथियों ने सभी को झुककर प्रणाम किया और उनसे विदा लेकर जहाज पर चढ़ गया। चारों जहाज तैयार खड़े थे। वास्को डी गामा ने जहाज पर पहुँचते ही रेशमी लाल झंडे को जिस पर क्रास बना था फहराया। जहाजों के पाल खोल दिए गए, लंगर उठा लिए गए, और जहाज चल पड़े। भीड़ देर तक वास्को डी गामा के उन चार जहाजों को जो उसकी लम्बी और विकट तथा महत्वपूर्ण यात्रा के लिए निकले थे तब तक देखती रही जब तक कि वे आँखों से ओझल नहीं हो गए।

मौसम अच्छा था और हवा अनुकूल थी इसलिए कनारी द्वीप तक बड़ी आसानी से जहाज् आ गए। कोई कठिनाई नहीं हुई। बहुत गहरा कोहरा था इस कारण चारों जहाज् एक दूसरे से दूर होकर भटक गए लेकिन केप वर्डी द्वीप के पास सब मिल गए। केप वर्डी द्वीप को पार कर वास्को डी गामा ने समुद्र तट छोड़ दिया। वास्को डी गामा के मुख्य बारथोलोम्यू डियाज् तथा अन्य यात्री समु

तट के पास पास ही चलते थे जिससे कि भूमि आँख से ओझल न हो जावे। परन्तु वास्को डी गामा ने साहस के साथ दक्षिण अटलांटिक महासागर को पार कर आशा अन्तरीप तक पहुंचने के लिए समुद्र तट छोड़ कर दक्षिण-पश्चिम का रास्ता पकड़ा। उसको यह मालूम नहीं था कि एक समय वह दक्षिण अमेरिका के तट से केवल ६ सौ मील ही दूर रह गया था। समुद्र-तट छोड़ कर अटलांटिक महासागर को पार करने के लिए वास्को डी गामा ने बड़े साहस का काम किया। कारण यह था कि अभी तक किसी भी नाविक ने समुद्र-तट को छोड़कर खुले समुद्र में इतनी लम्बी यात्रा नहीं की थी। कोलम्बस ने भी समुद्र तट को छोड़कर खुले समुद्र में केवल दो हजार ६ सौ मील की ही यात्रा की थी। ऐसी दशा में वास्को डी गामा द्वारा चार हजार पांच सौ मील की समुद्र तट से दूर खुले समुद्र में यात्रा करना बड़े साहस का काम था। दिन पर दिन बीतने लगे। फैला हुआ दूर दूर तक समुद्र का जल और आकाश के सिवाय और कुछ नजर नहीं आता था। छियानबे दिन लगातार भूमि के दर्शन किए बिना वास्को डी गामा साहस के साथ चलता चला गया। तब कहीं जाकर उसके जहाज दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका के तट पर पहुँचे। नवम्बर का महीना था वास्को डी गामा ने उस स्थान का नाम 'सेंट हेलना' रक्खा। यहां के आदिवासियों से थोड़ा झगड़ा हो गया जिसमें कुछ चोटें आईं। यहां से वास्को डी गामा आगे बढ़ा और आशा अन्तरीप की ओर चल पड़ा।

आगे समुद्र बहुत भयंकर था। तेज तूफान में समुद्र की लहरें

ऊँचे पहाड़ों की भाँति भयानक दिखलाई पड़ती थीं। और गर्जन के कारण एक दूसरे को आवाज नहीं सुनाई देती थी। दिन बहुत छोटे होते थे इस कारण ज्यादातर अंधेरे में ही चलना पड़ता था। समुद्र का ऐसा डरावना रूप देखकर मल्लाह डर गए। उन्होंने साहस छोड़ दिया और पुर्तगाल लौट चलने के लिए शोर मचाने लगे। वास्को डी गामा ने क्रोध और आवेश में कहा कि वह पीछे लौटने के बजाय मर जाना अच्छा समझता है। लोग चुप हो गए। लेकिन अब हालत और भी बिगड़ने लगी। जाड़ों की वर्षा के कारण उनका बुरा हाल हो गया। जहाजों में पानी भरने लगा और नाविक जाड़े की वर्षा के कारण ठिठुरने लगे। सभी अपने जीवन से निराश हो गए। हर क्षण वे मृत्यु की बाट जोह रहे थे। विपत्ति के उन क्षणों में सभी ने भगवान से दया की प्रार्थना की। धीरे धीरे समुद्र का तूफान शान्त हुआ। नाविकों ने फिर प्रभु को याद किया। उन्होंने देखा कि बिना जाने ही उस तूफान में ही उन्होंने केप आफ गुड होप (आशा अन्तरीप) को पार कर लिया है।

परन्तु उनके कष्टों का अन्त नहीं हुआ क्योंकि समुद्र अब भी [illegible]ति खराब था और जाड़ा तेज होता जा रहा था। एक बार फिर वास्को डी गामा के सहायकों ने उसे पुर्तगाल वापस लौट चलने को [illegible]हा। इस बार वास्को डी गामा आपे से बाहर हो गया। उसने [illegible]हा 'लिस्बन' में मैंने अपने हृदय में भगवान को वचन दिया था कि [illegible]म पीछे नहीं लौटूंगा। इसलिए अब यदि कोई यह बात फिर दोहरायेगा तो मैं उसको समुद्र में फेंक दूंगा। वास्को डी गामा की

तट के पास पास ही चलते थे जिससे कि भूमि आँख से ओझल न हो जावे। परन्तु वास्को डी गामा ने साहस के साथ दक्षिण अटलांटिक महासागर को पार कर आशा अन्तरीप तक पहुंचने के लिए समुद्र तट छोड़ कर दक्षिण-पश्चिम का रास्ता पकड़ा। उसको यह मालूम नहीं था कि एक समय वह दक्षिण अमेरिका के तट से केवल पाँच सौ मील ही दूर रह गया था। समुद्र-तट छोड़ कर अटलांटिक महासागर को पार करने के लिए वास्को डी गामा ने बड़े साहस का काम किया। कारण यह था कि अभी तक किसी भी नाविक ने समुद्र-तट को छोड़कर खुले समुद्र में इतनी लम्बी यात्रा नहीं की थी। कोलम्बस ने भी समुद्र तट को छोड़कर खुले समुद्र में केवल दो हजार पाँच सौ मील की ही यात्रा की थी। ऐसी दशा में वास्को डी गामा द्वारा चार हजार पाँच सौ मील की समुद्र तट से दूर खुले समुद्र में यात्रा करना बड़े साहस का काम था। दिन पर दिन बीतने लगे। जैसा हुआ दूर दूर तक समुद्र का जल और आकाश के सिवाय और कुछ नज़र नहीं आता था। छियानवे दिन लगातार भूमि के दर्शन किए बिना वास्को डी गामा साहस के साथ चलता चला गया। तब कहीं जाकर उसके जहाज दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका के तट पर पहुँचे। नवम्बर का महीना था। वास्को डी गामा ने उस स्थान का नाम सेंट हेलना रक्खा। यहाँ के आदिवासियों से थोड़ा झगड़ा हो गया जिसमें कुछ चोटें आईं। यहाँ से वास्को डी गामा आगे बढ़ा और आशा अन्तरीप की ओर चल पड़ा।

आगे समुद्र बहुत भयंकर था। तेज तूफान में समुद्र की लहरें

ऊँचे पहाड़ों की भाँति भयानक दिखलाई पड़ती थीं। घोर गर्जन के कारण एक दूसरे की आवाज नहीं सुनाई देती थी। दिन बहुत छोटे होने के इस कारण ज्यादातर अंधेरे में ही चलना पड़ता था। समुद्र का ऐसा डरावना रूप देखकर जहाजी डर गए। उन्होंने साहस छोड़ दिया और पुर्तगाल लौट चलने के लिए शोर मचाने लगे। वास्को डी गामा ने क्रोध और आवेश में कहा कि वह पीछे लौटने के बजाय मर जाना अच्छा समझता है। लोग चुप हो गए। लेकिन अब हालत और भी बिगड़ने लगी। ओलों की वर्षा के कारण उनका बुरा हाल हो गया। जहाजों में पानी भरने लगा और नाविक जाड़े की वर्षा के कारण ठिठुरने लगे। सभी अपने जीवन से निराश हो गए। हर क्षण वे मृत्यु की बाट जोह रहे थे। विपत्ति के उन क्षणों में सभी ने भगवान से रक्षा की प्रार्थना की। धीरे धीरे समुद्र का तूफान रुका समुद्र शान्त हुआ। नाविकों ने फिर प्रभु को याद किया। उन्होंने देखा कि बिना जाने ही उस तूफान में ही उन्होंने केप आफ गुड होप (आशा अन्तरीप) को पार कर लिया है।

परन्तु उनके कष्टों का अन्त नहीं हुआ क्योंकि समुद्र अब भी बहुत खराब था और जाड़ा तेज होता जा रहा था। एक बार फिर वास्को डी गामा के सहायकों ने उसे पुर्तगाल वापस लौट चलने को कहा। इस बार वास्को डी गामा आपे से बाहर हो गया। उसने कहा 'लिस्बन' में मैंने अपने हृदय में भगवान को वचन दिया था कि मैं पीछे नहीं लौटूँगा। इसलिए अब यदि कोई यह बात फिर दोहरायेगा तो मैं उसको समुद्र में फेंक दूँगा। वास्को डी गामा की

इस दृढ़ इच्छा के सामने फिर किसी को बोलने का साहस नहीं हुआ। वे आगे बढ़े और मोसल की खाड़ी को पार किया जिसे डियाज़ ने पहले ही ढूंढ निकाला था। मोसल की खाड़ी में वे भूमि पर उतरे, और ताजे मांस को पाकर बहुत प्रसन्न हुए, क्योंकि महीनों से वे नमकीन मांस तथा अन्य खाद्य पदार्थ खाते खाते उकता गए थे। किन्तु रुकने का समय नहीं था। वे आगे बढ़ते गए और उन्होंने उस अन्तिम पत्थर को भी पार कर लिया जिसे डियाज़ ने अपनी यात्रा के अन्त में चिह्न रूप से खड़ा किया था।

आगे सब कुछ नया था। किसी भी योरोपनिवासी ने इस समुद्र में जहाज़ नहीं चलाया था और न किसी योरोपियन ने अफ्रीका के इस तट को कभी देखा ही था। बड़े दिन पर उन्हें समुद्रतट दिखाई पड़ा जिसका नाम उन्होंने नेटाल रक्खा। वे आगे बढ़ते गए, और उत्तर की ओर चलने पर वह 'किल्लोमेनी' नदी के मुहाने पर उतरे। यहां के बंटू जाति के लोगों ने इन विदेशियों की खूब आव भगत की। वे लोग तीर कमान और भाले रखते थे। यहां तांबे की बहुतायत देखकर वास्को डी गामा ने उस नदी को तांबे की नदी का नाम दिया और इस देश को भले लोगों का देश कह कर याद किया है। यहां वास्को डी गामा ने अपने जहाज़ों की सफाई और मरम्मत की। इस कारण एक महीने ठहरना पड़ा। यहां आने पर सभी नाविकों में पहली बार एक भयंकर रोग फूट पड़ा। जिसे 'स्कर्वी' कहते हैं। आदमियों के हाथ पांव सूज गए, मसूड़े फूल गए, और दांतों में बेहद पीड़ा होने लगी। इसका कारण यह था कि उन्होंने महीनों

तक नमक लगा हुआ मांस और अन्य रखते हुए पदार्थ लाए थे। बाद में इस रोग का इलाज कैप्टेन कुक ने निकाला। वास्को डी-गामा इस रोग की परवाह न करके आगे बढ़ता ही गया और मोज़ैम्बिक पहुँचा। यहाँ उसको चार अरब जहाज मिले जिनमें सोना चाँदी मोती हीरे लाल तथा पन्ना तथा अन्य जवाहरात और लौंग काली मिर्च तथा अन्य मसाले भरे हुए थे जिन्हें अरब व्यापारी पूर्व से लाए थे।

यहाँ वास्को डी गामा ने सुना कि अफ्रीका की तरफ प्रेस्टर जोन के राज्य में हीरा जवाहरात और मसाले इतनी अधिक मात्रा में होते हैं कि कोई चाहे तो टोकरियों में भर सकता है। लेकिन वहाँ तक केवल ऊँटों द्वारा ही जाया जा सकता है। इस खबर से वास्को डी गामा के आदमी खुशी से नाच उठे। लेकिन उनके वहाँ तक जाने का प्रबन्ध न हो सका। इस कारण वे लोग उस रहस्यमय देश में न जा सके।

मोज़ैम्बिक में पहले तो इन विदेशियों का स्वागत हुआ क्योंकि वहाँ के सुलतान तथा निवासियों ने उन्हें मुसलमान समझा किन्तु जब उन्हें मालूम हुआ कि वे ईसाई हैं तो उनका विरोध हुआ। वास्को डी गामा ने जब यह देखा तो वह आगे बढ़ा किन्तु हवा अनुकूल नहीं थी इस कारण उसे फिर वापस मोज़ैम्बिक आना पड़ा। यहाँ सुलतान के आदमियों से लड़ाई हुई और वास्को डी गामा ने छोटी तोपों का उपयोग कर उन्हें परास्त कर दिया। कुछ आदमियों को उसने बंदी बना लिया और कुछ जहाज उससे छीन लिए।

इस दृढ़ इच्छा के सामने फिर किसी को बोलने का साहस नहीं हुआ। वे आगे बढ़े और मोसम की खाड़ी को पार किया जिसे डियाज़ ने पहले ही ढूंढ निकाला था। मोसल की खाड़ी में वे भूमि पर उतरे और ताजे मांस को खाकर बहुत प्रसन्न हुए, क्योंकि महीनों से वे नमकीन मांस तथा अन्य खाद्य पदार्थ खाते खाते उकता गए थे। किन्तु रुकने का समय नहीं था। वे आगे बढ़ते गए, और उन्होंने उस अन्तिम पत्थर को भी पार कर लिया जिसे डियाज़ ने अपनी यात्रा के अन्त में चिह्न रूप से खड़ा किया था।

आगे सब कुछ नया था। किसी भी योरोपनिवासी ने इस समुद्र में जहाज़ नहीं चलाया था और न किसी योरोपियन ने अफ्रीका के इस तट को कभी देखा ही था। बड़े दिन पर उन्हें समुद्रतट दिखाई पड़ा जिसका नाम उन्होंने नेटाल रक्खा। वे आगे बढ़ते गए और उत्तर की ओर बढ़ने पर वह लिम्पोपो' नदी के मुहाने पर उतरे। यहां के बंटू जाति के लोगों ने इन विदेशियों की खूब आव भगत की। ये लोग तीर कमान और भाले रखते थे। वहां तांबे की बहुतायत देखकर वास्को डी गामा ने उस नदी को तांबे की नदी का नाम दिया और बंटू देश को अच्छे लोगों का देश कह कर याद किया है। यहां वास्को डी गामा ने अपने जहाज़ों की सफाई और मरम्मत की। इस कारण एक महीने ठहरना पड़ा। यहां आने पर सभी नाविकों में पहली बार एक भयंकर रोग फूट पड़ा। जिसे 'स्कर्वी' कहते हैं। आदमियों के हाथ पांव सूज गए, मसूड़े फूल गए, और दांतों में बेहद पीड़ा होने लगी। इसका कारण यह था कि उन्होंने महीनों

तक नमक लगा हुआ मांस और अन्य रखे हुए पदार्थ खाए थे। बाद में इस रोग का इलाज कप्तेन कुक ने निकाला। वास्को डी-गामा इस रोग की परवाह न करके आगे बढ़ता ही गया और मोजैम्बिक पहुँचा। यहाँ उसको चार अरब जहाज मिले जिनमें सोना चाँदी मोती हीरे लाल तथा पन्ना तथा अन्य जवाहरात और लौंग काली मिर्च तथा अन्य मसाले भरे हुए थे जिन्हें अरब व्यापारी पूर्व से लाए थे।

यहाँ वास्को डी गामा ने सुना कि समुद्र की तरफ प्रेस्टर जॉन के राज्य में हीरा जवाहरात और मसाले इतनी अधिक मात्रा में होते हैं कि कोई चाहे तो अंजलियों में भर सकता है। लेकिन वहाँ तक केवल ऊँटों द्वारा ही जाया जा सकता है। इस खबर से वास्को डी गामा के आदमी खुशी से नाच उठे। लेकिन उनके वहाँ तक जाने का संयोग न हो सका। इस कारण वे लोग उस रहस्यमय देश में न जा सके।

मोजैम्बिक में पहले तो इन विदेशियों का स्वागत हुआ क्योंकि वहाँ के सुल्तान तथा निवासियों ने उन्हें मुसलमान समझा किन्तु जब उन्हें मालूम हुआ कि वे ईसाई हैं तो उनका विरोध हुआ। वास्को डी गामा ने जब यह देखा तो वह आगे बढ़ा, किन्तु हवा अनुकूल नहीं थी इस कारण उसे फिर वापस मोजैम्बिक आना पड़ा। वहाँ सुल्तान के आदमियों से लड़ाई हुई और वास्को डी गामा ने अपनी तोपों का उपयोग कर उन्हें परास्त कर दिया। कुछ आदमियों को उसने कैदी बना लिया और कुछ जहाज उससे छीन लिए।

२१ मार्च को वास्को डी गामा मोम्बासा की ओर चला। मोम्बासा में रात्रि को मुसलमानों ने उन पर आक्रमण कर दिया। अगर वास्को डी गामा और उसके आदमी सावधान नहीं होते तो सब मारे जाते। वहां वास्को डी गामा के आदमियों को ताजा मांस मछली तथा फल खाने को मिला इस कारण 'स्कर्वी' रोग मिट गया और वे प्रसन्न और स्वस्थ हो गए। मोम्बासा से एक दिन की समुद्र यात्रा करके वे लोग मालिन्दी पहुँचे। वहां का राजा एक ईरानी था उसने इन विदेशियों की अच्छी खातिर की और एक हिन्दू कुशल नाविक भारत तक ले जाने के लिए साथ कर दिया। वास्को डी-गामा तथा उसके साथी आखिर तक यह समझते रहे कि हिन्दू ईसाई होते हैं।

२४ एप्रिल को वास्को डी गामा उस हिन्दू नाविक के बताए मार्ग से कालीकट की ओर चल पड़ा। तेईस दिन तक लगातार उनके जहाज समुद्र में चलते रहे। तेईस दिन तक उन्हें कोई भूमि नहीं दिखलाई दी। अचानक दूर पर भूमि दिखलाई दी और सारे नाविक डेक पर चढ़ कर उसे देखने लगे। नाविकों को ऊंचे पहाड़ों की पंक्ति दिखलाई दी। वे भारत के पश्चिमीय घाट के पहाड़ थे। अभी वे इस दृश्य को देख ही रहे थे कि भीषण वर्षा और अंधड़ शुरू हो गया और वह सुंदर दृश्य पानी के कारण ओझल हो गया।

अन्त में २१ मई १४९८ को वास्को डी गामा कालीकट के बंदरगाह पर उतरा। करीब ग्यारह महीने के बाद वास्को डी गामा की यात्रा सफल हुई। उसने भारत का समुद्री मार्ग खोज निकाला।

जब यह लोग कालीकट पर उतरे तो वहां के रहने वालों ने उनसे पूछा कि तुम किस देश के रहने वाले हो और यहां क्यों आए हो ? पुर्तगालियों ने उत्तर दिया हम ईसाईयो और मसाले की खोज में आए हैं। वहां के निवासियों ने वास्को डी गामा से कहा कि तुम अत्यन्त भाग्यशाली हो कि तुम उस देश में आए हो जहां कि हीरे पन्ने की बहुतायत है और जो बहुत धनी है। वास्को डी गामा अपने तेरह साथियों के साथ अपने देश का झंडा कंधे पर रखे हुए राजा के महल की ओर चला। कालीकट की गलियों में नर नारी इन विदेशियों को देखने के लिए इकट्ठे हो गए। राजा ने २८ मई १४९८ को सायंकाल इन विदेशियों से बात करना स्वीकार किया। राजा ने उन्हें अपने माल को बाजार में बेचने और बदले में भारतीय माल को लेने की आज्ञा दे दी। किन्तु भारतीयों ने पुर्तगाल के बने हुए माल को देखकर नाक भौं सिकोड़ली कोई भी उस घटिया माल को लेने के लिए तैयार नहीं था। राजा ने कहा कि मेरा देश बहुमूल्य जवाहरातों और मसालों के लिए धनी है। मुझे सोना चांदी और रेशमी कपड़ा चाहिए। वास्को डी गामा ने थोड़ा मसाला जहाजों में भरा और वह अपने देश वापस लौट पड़ा। दो वर्षों के बाद वास्को डी गामा अपने देश वापस पहुँचा। इस लम्बी यात्रा में उसका भाई और उसके कई साथी मर गए, लेकिन उसकी यात्रा सफल हुई और उसने भारत का समुद्री मार्ग खोज निकाला। उस समय स्वयं वास्को डी गामा को भी यह ध्यान नहीं था कि उसकी खोज इतनी महत्वपूर्ण होगी।

जब वास्को डी गामा अपने देश पुर्तगाल पहुँचा तो वहाँ का बादशाह इतना खुश हुआ कि उसने अपना एक सामन्त और बड़े राजकर्मचारियों को उसको आदर के साथ दरबार में लाने को भेजा। जब वास्को डी गामा बादशाह के दरबार में पहुँचा तो रास्ते में उसको देखने के लिए बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई। बादशाह ने उसकी इस देश सेवा के लिए उसको डान की उपाधि दी जो उसके वंश वाले भविष्य में अपने नाम के साथ जोड़ सकते थे। उसके वंश चिन्ह के साथ राजा का चिन्ह जोड़ दिया गया। उसको तीन हजार क्रूजेडस की वार्षिक पेंशन दी गई आगे चलकर उसको और अधिक सम्मान दिया गया।

यह स्वाभाविक ही था कि पुर्तगाल के शासक इस खोज का लाभ उठाने के लिए भारत को फिर दूसरी बार अपने आदमी भेजते। आश्चर्य की बात है कि दूसरी बार वास्को डी गामा यात्रा पर नहीं गया। इसका क्या कारण था इस बारे में किसी को कुछ नहीं मालूम। इतिहास चुप है। दूसरी यात्रा का नेता पैड्रो कैब्राल था। उसके साथ तेरह बड़े और मजबूत जहाज थे जो अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित थे और जिन पर कुशल सैनिक तथा व्यापारी और पादरी थे। कुल मिला कर उन जहाजों पर पंद्रह-सौ आदमी थे। उनमें केप आफ-गुड-होप ( आशा-अन्तरीप ) को पहली बार पार करने वाला प्रसिद्ध बारथोलाम्यू डियाज भी था। पुर्तगाल का बादशाह इन जहाजों को विदा करने के लिए स्वयं समुद्र के किनारे तक आया। कैब्राल ने जहाज पर पहुँच कर पुर्तगाल का झंडा उड़ाया और

पश्चिम की ओर चल पड़ा। वह पश्चिम की ओर बढ़ता चला गया और इसलिए अमेरिका जा पहुँचा। अनजाने में ही उसने एक नया महाद्वीप खोज निकाला। कैबाल के आदमी जो कि दक्षिण अमेरिका की भूमि पर उतरे वे यह खबर लाए कि वह सघन वनों से भरा हुआ देश है, यहाँ काफी आबादी है। यहाँ के निवासी तीर कमान का उपयोग करते थे। उसी रात्रि को एक भयंकर तूफान उठा और वे लोग भाग कर एक सुरक्षित जगह पर पहुँच गए। यह ब्राजील था यहाँ कैबाल ने एक क्रास का चिन्ह स्थापित किया जो तीन सौ साल के बाद जब कोई यहाँ पहुँचा तब भी मौजूद था।

कैबाल को यह तनिक भी ध्यान नहीं था कि उसने इतने बड़े महादेश को खोज निकाला है। इस कारण वह वहाँ न रुक कर 'केप-आफ-गुड-होप' ( आशा अन्तरीप ) की ओर चल पड़ा। बीच में ही भयंकर तूफान आया। इस तूफान में चार जहाज डूब गए और जो आदमी समुद्र में डूबे उनमें वृद्ध 'बारथोलोम्यू-डियाज' भी था। जिस आदमी ने सबसे पहले आशा-अन्तरीप की खोज की थी वह वहीं मरा।

दिसम्बर के महीने में कैबाल कालीकट पहुँचा और कालीकट के राजा से मिला। राजा के वैभव को देखकर वह दंग रह गया। उसने ऐसी शान-शौकत जीवन में कभी नहीं देखी थी। उसने लिखा है—राजा अपने सर पर सोने का मुकुट पहने था। उसके कानों में हीरे जवाहरात और मोती जड़ित कुंडल लटक रहे थे। मोटी सुपारी के बराबर थे। उसकी कलाई से कोहनी तक जो सोने के कड़े थे

उनमें अपरिमित रत्न हीरे पन्ने लाल इत्यादि जड़े थे। वह पैरों में नीचे से ऊपर तक रत्न जड़ित आभूषण पहिने हुआ था। उसके अंगूठे में एक बहुत बड़ा लाल था जो बहुत ज्यादा चमक रहा था। उसकी कमर में जो सोने की पेटी थी उसमें इतने बड़े हीरे और अन्य जवाहरात जड़े थे कि उनकी चमक से आंख चौंधिया जाती थी। कैब्राल ने ऐसे कीमती हीरे जवाहरात कभी भी जीवन में नहीं देखे थे।

राजा ने कैब्राल को कालीकट में पुर्तगाल के माल का गोदाम स्थापित करने की आज्ञा दे दी। कैब्राल ने अपना गोदाम स्थापित किया और उस पर पुर्तगाल का झंडा फहराने लगा। लेकिन करीब जिल्दी में कुछ झगड़ा हुआ। वहां के निवासियों ने गोदाम पर हमला कर दिया वहां का सामान लूट लिया और कई पुर्तगालियों को मार डाला। बदले में कैब्राल ने भी नगर पर गोलों की वर्षा की और वहां से दक्षिण की ओर कोचीन के बंदरगाह चला गया। कोचीन से वह कालीमिर्च अपने जहाजों में भर कर लिस्बन' पुर्तगाल की राजधानी को १५ १ में लौट आया। उसके बाद खोज के इतिहास में कैब्राल का किसी ने नाम नहीं सुना। कहते हैं कैब्राल जैसा मूल्यवान माल लाया वैसा तब तक पुर्तगाल में कोई नहीं लाया था।

कब्राल के साथ कालीकट में जो दुर्घटना हुई उसकी खबर पाकर पुर्तगाल से एक बहुत बड़ा जहाजी बेड़ा वास्को डी गामा के नेतृत्व में भेजा गया। पंद्रह बड़े जहाजों को लेकर १५ २ में

वास्को डी गामा भारत की ओर चल पड़ा। जब वास्को डी गामा मालाबार तट के समीप पहुंचा तो उसे एक बड़ा जहाज़ मिला जिसमें बहुत से मुसलमान मक्का तीर्थ यात्रा करके लौट रहे थे। वास्को डी गामा को यह मालूम हुआ कि उस जहाज़ पर अपार धन है। एक डाकू की तरह उसने उन यात्रियों से उनका धन मांगा। मना करने पर पुर्तगालियों ने उस जहाज़ पर गोलियों की बौछार की और जहाज़ में आग लगा दी गई। जहाज़ में जो भी स्त्री पुरुष थे सभी जल कर भस्म हो गए। वास्को डी गामा का यह नीच कार्य अत्यन्त निन्दनीय था।

वास्को डी गामा ने कालीकट पर आक्रमण किया वहां के मुसलमानों की निर्दयता पूर्वक हत्या कर दी। कालीकट पर गोला बारी करके वास्को डी गामा दक्षिण में मालाबार की ओर बढ़ा और वहां भी जबरदस्ती गरीब किसानों से उनकी काली मिर्च तथा अन्य मसाले छीन कर अपने जहाजों पर लाद कर पुर्तगाल लौट आया। वास्को डी गामा का यह कार्य किसी लुटेरे से कम न था। आज भी गोआ में पुर्तगाली जिस बर्बरता का प्रदर्शन करते हैं और वहां के निवासियों पर जैसा अत्याचार करते हैं उससे यह सिद्ध होता है कि पुर्तगाल वासियों की वह लुटेरों की प्रवृत्ति समाप्त नहीं हुई है।

अब पुर्तगाल के बादशाह ने अफ्रीका और भारत में अपना राज्य स्थापित करने का प्रयत्न करना आरम्भ किया। एक के बाद दूसरे कमांडरों की अधीनता में जहाजी बेड़े भेजे जाने लगे। १५ ५ में फ्रैंसिस्को-अलमिडा एक बहुत शक्तिशाली और बड़े जहाजी

बेड़े को लेकर भारत की ओर चला। उसको भारत का पहला वायसराय नियुक्त किया गया। जब वह कालीकट के समीप पहुंचा तो वहां के शासक सामुरी ने अरब के मुसलमानों का एक जहाजी बेड़ा तैयार किया। पुर्तगाल के जहाजों पर हमला करने की वे तयारी कर ही रहे थे कि एक व्यक्ति ने अल्मिडा को होनेवाले आक्रमण की खबर दे दी। अल्मिडा ने अपने लड़के लौरेन्सो को उस जहाजी बेड़े को नष्ट करने के लिए भेजा। युद्ध हुआ कालीकट का जहाजी बेड़ा नष्ट हो गया। किन्तु पुर्तगालियों की इस विजय से उनकी कठिनाइयां समाप्त नहीं हुईं। मिस्र के एक जहाजी बेड़े ने १५०८ में लौरेन्सो के बेड़े पर आक्रमण किया। लौरेन्सो मारा गया और यह मिस्री बेड़ा द्यू के बंदरगाह में जम गया। १५०९ में अल्मिडा ने उस मिस्री जहाजी बेड़े पर हमला किया। भयंकर युद्ध हुआ और पुर्तगालियों की विजय हुई।

अल्मिडा के वायसराय-काल में हिन्दमहासागर में पुर्तगालियों की धाक बैठ गई। अल्मिडा के वीर पुत्र लौरेन्सो ने लंका को भी खोज निकाला। उसने लंका में एक स्तम्भ स्थापित किया और पोर्तुगाल की ओर से लंका पर अधिकार कर लिया। वहां से उसने एक हाथी पुर्तगाल को भेजा जो योरोप में पहला हाथी था। अब लंका तक पुर्तगाल का झंडा फहराने लगा। लौरेंसो २१ वर्ष की उमर में मारा गया। वह साहसी और वीर था। यदि वह जीवित रहता तो पुर्तगाल का साम्राज्य एशिया में और दूर दूर तक फैल जाता। जब उसके मरने का समाचार उसके बाप को सुनाया गया

तो अपने अकेले प्रिय पुत्र की मृत्यु का समाचार उसने शान्ति और धैर्य से सुना। उसने कहा शोक मनाना औरतों का काम है बदला लेना बहादुरों का काम है। उसने अपने पुत्र की मृत्यु का बदला युद्ध करके लिया।

अल्मिडा का वायसराय काल समाप्त हुआ और अल्बुकर्क भारत का वायसराय बना कर भेजा गया। अल्बुकर्क साहसी वीर क्रूर किन्तु दूरदर्शी और महत्वाकांक्षी था। उसने आते ही कालीकट पर आक्रमण किया और उसको जला कर राख कर दिया। उसके बाद उसने गोवा को विजय किया और उसे भारत में पोर्तुगीज साम्राज्य की राजधानी बनाया। थोड़े दिनों में ही गोवा वैभवशाली नगर बन गया।

अब अल्बुकर्क की नजर भारत के पूर्व की ओर गई। उसने अपने एक सहायक 'सैक्युरा' को पूर्व में खोज करने के लिए भेजा। उसने बंगाल की खाड़ी की ओर पूर्वीय द्वीप समूह के द्वीपों की यात्रा की। वहां से लौटकर उसने अल्बुकर्क को सुनाया कि उन द्वीपों में इतने मसाले उत्पन्न होते हैं जिसकी कोई कल्पना नहीं कर सकता और वहां की धन-दौलत का कोई पार नहीं है।

अल्बुकर्क ने उन्नीस जहाज तैयार किए, और वह मलाका आया। उसके जहाजों में चौदह सौ चुने हुए सैनिक थे। उसने मलाका पर आक्रमण किया। वहां के लोग लड़े लेकिन पुर्तगालियों के तोपों और शस्त्रों के सामने वे युद्ध न कर सके। पुर्तगाल की विजय हुई। शहर के हर एक स्त्री और पुरुष को निर्दयतापूर्वक

मार डाला गया और वहां से बहुत सा सोना चांदी और जवाहरात भर कर अल्बूकर्क लौटा। वहां उसने एक किला और मिनार बनवा कर कुछ पुर्तगाली सैनिकों को देख-रेख में बना कर छोड़ दिया। वह खजाना पूरा का पूरा तो पुर्तगाल नहीं पहुंच पाया क्योंकि लौटते समय सुमात्रा के समीप एक तेज अंधड़ और तूफान आया जिससे कुछ जहाज डूब गए। परन्तु फिर भी बहुत सा धन पुर्तगाल पहुंचा।

मलक्का पर विजय प्राप्त कर लेने से पुर्तगाल का पूर्व में प्रभाव बहुत बढ़ गया। बात यह थी कि यह हिन्द महासागर का द्वार था जिससे होकर चीन जापान पूर्वी द्वीपों का मसाला तथा टेक्सटाइल्स का व्यापार होता था। एशिया में यह सबसे बड़ा व्यापार का केन्द्र था। अब अल्बूकर्क का नाम सारे पूर्व में मशहूर हो गया लेकिन अल्बूकर्क केवल मलक्का से संतुष्ट होने वाला नहीं था। मसालों को उत्पन्न करने वाले द्वीपों को वह जीतना चाहता था। मलक्का के सेनानायक को १५११ में उसने आज्ञा दी कि वह मसाले के द्वीपों को खोज निकाले और उन पर अधिकार करले। जब उसके सेनानायक फ्रांसिसको सेरानो ने जावा की यात्रा की तो वह आश्चर्य में पड़ गया। उसने अपने जीवन में इतना अधिक मसाला उत्पन्न करने वाला देश नहीं देखा था। उसने अपने मित्र मैगलान को लिखा 'मैंने एक और नया महादेश खोज निकाला है जो कि वास्को डी गामा द्वारा खोज किए हुए देशों से भी बड़ा और धनी है।" इन मसालों के द्वीपों के बारे में पुर्तगाल में बड़ा कौतूहल फैल गया। कोलम्बस द्वारा नई पृथ्वी अमेरिका की खोज से जैसा

कौतूहल नहीं उत्पन्न हुआ जैसा इन मसाले के द्वीपों की खोज से उत्पन्न हुआ।

पुर्तगाल वालों की इन खोजों का परिणाम यह हुआ कि व्यापार का मार्ग ही बदल गया। अभी तक पूर्व से मसाले इत्र तथा अन्य वस्तुओं का व्यापार फारस की खाड़ी और लाल सागर के द्वारा होता था और यह व्यापार मुसलमानों के हाथ में था। पुर्तगाल वालों की इन खोजों के कारण हिन्द महासागर से होते हुए जहाज 'आशा-अन्तरीप' को पार कर योरोप पहुँचने लगे। उस समय पुर्तगाल का वैभव सूर्य अद्भुत प्रकाशमान था और पुर्तगाल योरोप का सबसे धनी देश बन गया था।



# चौथा परिच्छेद

## नई दुनिया की खोज — क्रिस्टोफ़र कोलम्बस

क्रिस्टोफर कोलम्बस के द्वारा नई दुनिया (अमेरिका महाद्वीप) की खोज के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण घटना थी। इस खोज के कारण दुनिया का नक्शा ही बदल गया और उसके साथ कोलम्बस का नाम भी अमर हो गया।

कोलम्बस का जन्म १४५१ में इटली देश के जिनोआ नगर में हुआ था। उसका परिवार बुनकर था। एक निर्धन परिवार में जन्म लेने के कारण कोलम्बस को बचपन में कोई शिक्षा नहीं मिली। वह जब तक अपने देश के बाहर नहीं गया तब तक वह लगभग अशिक्षित था।

यद्यपि कोलम्बस अपने पिता के साथ कपड़ा बुनने का काम करता था लेकिन उसका मन उस काम में नहीं लगता था। वह समुद्र यात्रा के स्वप्न देखता था। जिनोआ के बन्दरगाह में रात्रि देशों से आने और जानेवाले जहाजों को देखकर उसके मन में भी समुद्र यात्रा की इच्छा जाग उठती थी।

१४७४ में कोलम्बस जब चौदह वर्ष का था तब वह एक

जहाज पर पहली बार समुद्र-यात्रा के लिए 'खियोस' गया जो जिनोआ के अधिकार में था। १४७६ में वह व्यापारिक जहाजों के साथ लिस्बन इङ्गलैंड और स्काटलैंड की यात्रा पर गया। कोलम्बस की इच्छा यह थी कि वह भी कोई लम्बी यात्रा करे और किसी नये देश को खोज निकाले। उस समय दुनिया में पुर्तगाल खोजों के लिए प्रसिद्ध था अतएव कोलम्बस १४७७ में लिस्बन आ गया। वहां उसने एक मृत समुद्री कप्तान की पुत्री से विवाह कर लिया जिसने प्रिंस हेनरी की सेवा की थी और जो पोर्टो-सैंटो का कप्तान नियुक्त किया गया था। उसने यहां लिखना पढ़ना सीखा और विज्ञान की जानकारी प्राप्त की। जब बारथोलम्यू-डियाज़ ने अपनी आशा-अन्तरीप की यात्रा का वर्णन पुर्तगाल के बादशाह को सुनाया था उस समय वह वहां मौजूद था।

कोलम्बस ने उस समय का खोज का जितना भी साहित्य था सब पढ़ डाला। उसने सभी प्रसिद्ध नाविकों समुद्र यात्रा करने वालों और खोज करने वालों से बात की। लिस्बन में उसने जो भी चार्ट और नक्शे थे उन सभी का गहरा अध्ययन किया और उन सभी औजारों की पूरी जानकारी प्राप्त करली जो कि समुद्र यात्रा में काम आते हैं।

बहुत दिनों से उसके मन में एक योजना घूम रही थी। वह सोचता था कि पश्चिम की ओर जाकर भारत पहुँचा जा सकता है। जैसे जैसे वह इस बारे में अधिक सोचता और अध्ययन करता रहा वैसे उसका यह विश्वास मजबूत होता गया कि पश्चिम की ओर

जाकर भारत पहुँचा जा सकता है। १४८४ में कोलम्बस ने पुर्तगाल के बादशाह से अपना विचार प्रकट किया और कहा कि मैं पश्चिम की ओर यात्रा करके भारत पहुँचना चाहता हूं। उसने बादशाह को अपने विचार के पक्ष में कुछ सबूत भी दिए। उसने बतलाया कि पश्चिमीय हवाओं के द्वारा पश्चिम से बहाकर लाए हुए बहुत से लकड़ी के टुकड़े मिले हैं जिन पर बहुत सुंदर नक्काशी और खुदाई है। *इससे यह सिद्ध होता है कि पश्चिम में कोई ऐसा देश जरूर है* जहाँ की कारीगरी बहुत अच्छी है। उसने यह भी बतलाया कि पुर्तगाल के समुद्री किनारे पर दो मनुष्यों के शव बहते हुए पश्चिम से आए, जिनका चेहरा चौड़ा था और जो योरोपियन लोगों से बहुत भिन्न थे। आयरलैंड के समुद्री तट पर गरम देशों में पाए जाने वाले पौधों के बीज मिले हैं। इन बातों से यह सिद्ध होता है कि पश्चिम में कोई देश अवश्य है। बादशाह को कोलम्बस की बातें सुनकर उसकी योजना पर भरोसा हो गया। लेकिन उसके दरबारियों ने राजा को यह सलाह दी कि वह कोलम्बस से उसकी पूरी योजना ले ले और उससे कह दे कि थोड़े समय बाद उसको उत्तर दिया जायेगा। इसी बीच में जबकि कोलम्बस बादशाह के उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था बादशाह के दरबारियों ने गुप्त रूप से पश्चिम की ओर जहाज भेजे। जब वे जहाज पश्चिम की ओर थोड़ी दूर गए, उन्हें एक भयंकर तूफान का सामना करना पड़ा और वे लिस्बन लौट आए। लिस्बन लौटकर उन्होंने कोलम्बस की योजना की बहुत मजाक उड़ाई। जब कोलम्बस को यह खबर मिली तो वह बहुत

नाराज हुआ और उसने निश्चय कर लिया कि वह पुर्तगाल से आगे कोई मतलब नहीं रखेगा। उसने पुर्तगाल छोड़ दिया और वह सीधा स्पेन की रानी इसेबेला के पास गया। रानी इसेबेला ने उसकी सारी योजना सुनी और उस योजना पर राय देने के लिए उसने एक शाही कमीशन बिठाया। कमीशन ने उस योजना के विरुद्ध राय दी। लेकिन फिर भी रानी 'इसेबेला' ने कोलम्बस को ना नहीं कहा। उसने कोलम्बस को यह कह कर टालने के लिए कहा कि इस समय स्पेन मूर लोगों से युद्ध करने में फंसा हुआ है इसलिए स्पेन इस समय ऐसी योजनाओं को हाथ में नहीं ले सकता। कोलम्बस ने फिर एक बार प्रयत्न किया कि पुर्तगाल का बादशाह उसकी योजना ले ले लेकिन वह सफल नहीं हुआ। उसने यह भी कोशिश की कि इङ्गलैंड का बादशाह हेनरी सातवां उसकी मदद करे लेकिन वहां भी वह असफल हुआ। उसी समय जनवरी १४६२ में मूरों की हार हो गई और स्पेन विजयी हुआ। मूर युद्ध समाप्त होते ही रानी इसेबेला ने कोलम्बस को बुलवा भेजा। १४६१ में कोलम्बस रानी इसेबेला तथा उसके पति राजा फरडिनेंड के सामने उपस्थित हुआ। एक बार फिर उसकी मनोरथी योजना को सुन कर उसके दरबारियों ने उसकी मजाक उड़ाई और उसको दरबार से निराश लौटना पड़ा। कोलम्बस को अपनी इस असफलता से बहुत क्षोभ हुआ। उसके मित्रों को भी बहुत बुरा लगा क्योंकि उनका विश्वास था कि कोलम्बस की योजना ठीक है। उन्होंने एक बार फिर रानी इसेबेला को कोलम्बस को एक अवसर देने के लिए कहा। पहले तो रानी थोड़ा हिचकिचाई क्योंकि

कठिन समय था। एक ओर तो उसे अपनी यात्रा को सफल बनाने की धुन थी और दूसरी ओर उसके नाविक विद्रोही हो रहे थे। किसी प्रकार उसने उन्हें समझाकर और धमका कर आगे बढ़ने को राजी कर लिया। जैसे जैसे दिन व्यतीत होते गए आशा धूमिल होती गई किन्तु ६ अक्तूबर १४९२ को पुनः आशा बंधी। कारण यह था कि रात्रि भर कोलम्बस ने हवा में चिड़ियों को उड़ते हुए सुना। ११ अक्तूबर १४९२ के सायंकाल दूर पर रोशनी दिखलाई दी। अपने जहाज 'सांटा-मैरिया' के ऊँचे डेक से कोलम्बस को रोशनी साफ दिखलाई दे रही थी। १२ अगस्त १४९२ के प्रातःकाल कोलम्बस बहामा के 'ग्वाना-हनी' द्वीप पर उतरा। हथियारों [illegible] लैस जब कोलम्बस और उसके साथी जहाजों से उतर कर भूमि पर आए तो किनारे पर कौतूहलवश जो बहुत से नग्न नर-नारी उन्हें देखने के लिए इकट्ठे हो गए थे भाग गए। कोलम्बस ने स्पेन का शाही झंडा फहराया और एक बड़ा क्रास स्थापित किया। उसके उपरान्त उस महान नाविक ने घुटने के बल बैठकर प्रभु को धन्यवाद दिया कि उसने उस लम्बी जोखिम भरी यात्रा को सफल बनाया। खोज के इतिहास में यह पहला अवसर था कि तैंतीस दिन लगातार बिना भूमि देखे किसी ने समुद्र की यात्रा की हो। उसने उस द्वीप का नाम सैन-सलवेडर रखा और स्पेन के लिए उस पर अधिकार स्थापित कर लिया। इस प्रकार वह महान साहसिक यात्रा समाप्त हुई। किन्तु उसके परिणाम उससे भी अधिक महान थे।

कोलम्बस अभी तक यही समझ रहा था कि उसने भारत को

खोज निकाला। पूर्व के लिए और मार्कोपोलो की यात्रा में वर्णित चीन ( कैथे ) के लिए यह नया मार्ग है। उसको यह कल्पना भी नहीं थी कि उसने उससे भी अधिक महत्वपूर्ण काम किया है। उसने एक नई दुनिया को ही खोज निकाला है। उसने तीन हजार मील बिना भूमि को देखे लगातार समुद्र में यात्रा की थी। समुद्री खोज के इतिहास में यह अभूतपूर्व घटना थी।

भयभीत द्वीप निवासियों से उसने थोड़े दिनों में ही मित्रता करली। उसने लिखा "मेरा विश्वास है कि उन्हें आसानी से ईसाई बनाया जा सकता है। यदि प्रभु की इच्छा हुई तो अब मैं यहां से वापस स्पेन जाऊंगा तो इनमें से ६ आदिवासियों को साथ लेता जाऊंगा जिससे कि वे हमारी भाषा बोलना सीख जावें।" उसने यह भी लिखा है कि वे अच्छे दास साबित होंगे।

अब कोलम्बस ने उन द्वीप निवासियों की सहायता से एक द्वीप से दूसरे द्वीप की यात्रा करनी प्रारम्भ की। उसको आशा थी कि उसको सोना मिलेगा उसे कैथे ( चीन ) का वैभव देखने को मिलेगा। वह रानी इसेबेला तथा राजा फरडिनण्ड का यह महान काम के लिए आया था। इन द्वीपों का प्राकृतिक सौंदर्य और लहलहाता प्रदेश कोलम्बस के लिए बहुत ही सुखदायक थे। कोलम्बस ने इन द्वीपों के बारे में लिखा है "छोटी चिड़ियों का मधुर संगीत ऐसा सुखकारी है कि मनुष्य का यहां से कभी जाने का मन ही नहीं होता। यहां तोते इतने अधिक हैं कि जब वे झुंड में उड़ते हैं तो सूर्य को ढक देते हैं। क्यूबा का द्वीप तो मानो पृथ्वी पर स्वर्ग है।" यह

तब होते हुए भी कोलम्बस एक द्वीप से दूसरे द्वीप को जाते हुए यह नहीं सुन सका कि वह वहां सोने पूर्व के मसालों और मार्को पोलो द्वारा वर्णित वैभवशाली देश कथे ( चीन ) की खोज में आया है। कोलम्बस का एक साथी मार्टिन पिन्ज़ान बिना ऐडमिरल को बतलाए गुप्त रूप से एक जहाज को लेकर सोने की खोज में जाने किधर चला गया। दुर्भाग्य से बड़े दिन एक और बड़ी दुर्घटना हो गई। हैटी द्वीप की चट्टानों से टकरा कर कोलम्बस का जहाज सेंटामेरिया टूट गया। अब केवल चार सौ टन का छोटा सा 'नीना' जहाज रह गया। लेकिन उस छोटे से जहाज में इतने लोग नहीं आ सकते थे। कोलम्बस ने उसी द्वीप पर एक छोटा सा किला बनवाया क्योंकि उस द्वीप का राजा उसका मित्र बन गया था और उसने कुछ लोगों को उस किले में ही छोड़ दिया।

अब कोलम्बस ने स्पेन लौटने की तैयारी शुरू की और जनवरी १४९३ में वह स्पेन की ओर चल पड़ा। उस समय तक पिंटा जहाज जिसे मार्टिन पिन्ज़ान सोने की खोज में लेकर चला गया था लौट आया और दोनों जहाज देश की ओर चल पड़े। कुछ सप्ताह की यात्रा कुशलपूर्वक हुई परन्तु उसके बाद हवा तेज हो गई। एक भयंकर तूफान उठा समुद्र भयानक हो गया समुद्र की लहरें उन छोटे जहाजों से भी अधिक ऊंची उठने लगीं। जहाज लकड़ी के हल्के तख्ते की तरह लहरों द्वारा उछाले जाने लगे। एकाएक 'पिंटा' जहाज गायब हो गया। पिंटा अपने नाविकों सहित समुद्र के गहरे जल में डूब गया। हवा और भी तेज हो गई तथा समुद्र और

भी अधिक भयानक हो उठा। चालीस टन का छोटा सा जहाज नीना बहुत खतरे में था। कोलम्बस और उसके साथियों को जीवन की कोई भी आशा नहीं रही। जहाज में खाने पीने का सामान भी लगभग समाप्त हो चुका था। मृत्यु सामने खड़ी थी। कोलम्बस को इस बात का दुःख था कि यदि वह डूब गया तो उसकी नई खोज की खबर कभी स्पेन नहीं पहुँच सकेगी। उसने एक मोमजामी कागज लिया और उस पर किसी प्रकार उछलते हुए जहाज में अपनी खोज का सारा हाल लिखकर मोम के कपड़े में लपेट कर एक खाली लोहे के डिब्बे में रखकर उसको मोम से बंद कर समुद्र में फेंक दिया। उसने सोचा कि यदि मैं डूब भी जाऊँ तो जिस किसी को यह डिब्बा मिलेगा वह मेरी खोज का समाचार स्पेन तक पहुँचा देगा। उसके बाद पहाड़ के समान उठती हुई लहरों को देखते हुए प्रभु की प्रार्थना करते हुए वह विनाश की प्रतीक्षा करने लगा।

धीरे धीरे तूफान रुक गया और १८ फरवरी को कोलम्बस का जहाज अज़ोर्स पहुँचा। कुछ दिन रुक कर वहाँ उसने आराम किया और खाने पीने की वस्तुएँ लीं और आगे बढ़ गए। कोलम्बस को इस बात की उतावली थी कि वह शीघ्र स्पेन पहुँचकर इस सुखद समाचार को रानी को सुनाए। लेकिन ८ मार्च को हवा फिर इतनी तेज हो गई कि उसने भयंकर अंधड़ का रूप धारण कर लिया और एक बार फिर नाविकों के सामने मृत्यु नाचने लगी। फिर भी कोलम्बस ने साहस नहीं छोड़ा और किसी प्रकार वह बढ़ता ही गया। अन्त में उसका जहाज टैगस नदी के मुहाने में पहुँच गया।

कोलम्बस के लौटने की खबर बड़ी तेजी से फैल गई। उत्तेजित भीड़ समुद्र के किनारे उस छोटे से जहाज को देखने के लिए उमड़ पड़ी जिसने भयंकर अटलांटिक महासमुद्र को पार कर लिया था। मारकोलम्बू-पिन्ज़ोन नीना जहाज पर आया और उस शताब्दी के दोनों प्रसिद्ध महान खोजी एक दूसरे से मिले। स्पेन में कोलम्बस का अपूर्व स्वागत हुआ। जब वह समुद्र तट से रानी के महल की ओर चला तो ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे किसी विजयी राष्ट्रीय वीर पुरुष का जुलूस निकल रहा हो। सारे रास्ते में दोनों ओर उत्तेजित भीड़ उसका स्वागत करने के लिए एकत्रित हो गई थी और वे हर्ष से चिल्ला रहे थे। जब रविवार को कोलम्बस सेविली की सड़क से गुजरा तो उसके आगे आगे एक बड़ा जलूस चल रहा था उसमें आगे ६ रेड इंडियन चल रहे थे उसके बाद नई दुनिया से लाई हुई चिड़ियों और रंगीन तोतों इत्यादि को लेकर आदमी चल रहे थे। कोलम्बस स्वयं घोड़े पर सवार होकर स्पेन के सैनिक अफसरों के साथ चल रहा था। उसको देखने के लिए खिड़कियों और मकानों की छतों पर लोग जमा थे। वहां से वह 'बारसीलोना' गया जहां रानी और राजा ने उसका स्वागत किया। उस समय तक सभी का यही विचार था कि कोलम्बस ने एशिया के तट के समीप द्वीपों की खोज की है और वे महान् जापान देश से अधिक दूर नहीं हैं। यही कारण है कि इन द्वीपों का नाम वेस्ट इंडीज रक्खा गया जो आज तक भी प्रचलित है। यह समस्त धारणा उस समय केवल स्पेन वालों की ही नहीं थी वरन् समस्त संसार की भी यही धारणा थी।

६ महीने बाद जब कोलम्बस दूसरी बार यात्रा के लिए चला तो स्थिति ही दूसरी थी। नया जहाजी बेड़ा सितम्बर १४९३ तक बनकर तैयार हो गया। तीन बहुत बड़े जहाज जिनमें से हर एक चार सौ टन का था बनाए गए और चौदह छोटे जहाज तैयार किए गए। उन जहाजों पर पंद्रह हजार नाविक थे। इस बार यात्रा में जाने वालों की कोई कमी नहीं थी। स्पेन के संभ्रांत कुलों के युवकों ने पश्चिम की यात्रा के लिए अपनी सेवाएँ दीं। कोलम्बस इस बार अपने भाई जेम्स को और पोप द्वारा चुने हुए एक पादरी को साथ ले गया। कोलम्बस ने नारंगी और नींबू के बीज भी साथ में ले लिए क्योंकि वह उनको नये द्वीपों में बोना चाहता था। इनके अतिरिक्त घोड़े सुअर बैल गाय भेड़ बकरे तथा मुर्गे और मुर्गियाँ भी साथ में ले ली गईं।

इस बार बड़ी प्रसन्नता और आशा के साथ यह जहाजी बेड़ा यात्रा के लिए चल पड़ा। कोलम्बस ने दूरी और दीप का ऐसा ठीक हिसाब लगाया कि वह ३ नवम्बर को फिर उन द्वीपों के किनारे पहुँच गया। वह एक दूसरा ही द्वीप था और क्योंकि वह रविवार था उसने उस द्वीप का नाम डोमीनिका रक्खा। वहां से वह हैटी द्वीप गया जहां कि वह अपने साथियों को छोड़ गया था। लेकिन हैटी में उन छोड़े हुए स्पेनवासियों का कोई चिह्न नहीं था। वहाँ के आदि वासियों ने जो पहले मित्र दिखाई देते थे उन स्पेनवासियों को मार डाला था। कोलम्बस ने एक दूसरा स्थान चुना और एक नगर का निर्माण किया जिसका नाम उसने रानी इसेबैला के नाम पर

इसेबेला' रक्खा।

प्रारम्भ में ही इस नवीन स्पेन के उपनिवेश में आपसी झगड़े और कलह प्रारम्भ हो गये लेकिन कोलम्बस ने उसकी परवाह न कर उन द्वीपों की पूरी तरह खोज करने के लिए तैयारी की। तीन जहाज १२ नाविक और ६ महीने का खाने पीने का सामान लेकर वह चीन (कथे) के तट की खोज में निकल पड़ा। चीन तो उसको नहीं मिला किन्तु उसको एक नया द्वीप 'जमायका' मिला जो कि बहुत ही सुन्दर था। तब भी कोलम्बस का यही विश्वास था कि वह महान खान के देश चीन (कथे) के पास है। उसने क्यूबा को भी ढूंढ निकाला। उसको यह अनुमान ही नहीं हुआ कि वह एक द्वीप है। इसी प्रकार वह बहुत से द्वीपों को खोजता रहा और बीमार पड़ गया। उसको ज्वर आने लगा और उसके आदमी उसको इसेबेला ले आए क्योंकि उनका विश्वास हो गया था कि वह मर जायेगा। लेकिन कोलम्बस बच गया। बीमारी से ठीक होने पर उसने देखा कि उपनिवेश में बहुत असंतोष है। उसके पीछे उन असंतुष्ट उपनिवेशियों ने स्पेन में कोलम्बस की शिकायतों और उसकी भूलों की लम्बी सूची लिख भेजी थी। कोलम्बस ने निश्चय किया कि वह स्वयं स्पेन वापस जाये और रानी को इन द्वीपों में उपनिवेश स्थापित करने की कठिनाइयों से अवगत करे। वह स्पेन वापस लौटा।

जून १४९६ में कोलम्बस कैडिज् के बन्दरगाह में पहुंचा। बन्दरगाह में महान खोजी के स्वागत के लिए भारी भीड़ जमा थी। भीड़ की कल्पना यह थी कि द्वीपों से अनन्त धन सोना मसाले भर

कर उनके देशवासी खुशी खुशी लौटेंगे। उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उनकी कामना के विपरीत कमजोर रोगी और निर्धन लोगों का एक झुंड जहाजों से उतरा। कोलम्बस की पोशाक एक सादी ढीली थी उसकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी और वह बहुत ही कमजोर और बूढ़ा मालूम पड़ता था।

कोलम्बस स्पेन में दो वर्ष रहकर रानी को सब बातें बताकर तीसरी बार फिर यात्रा के लिए निकल पड़ा। उसने अपने साथ ६ जहाज लिए और इस बार उसने पश्चिम-दक्षिण की ओर बढ़ना शुरू किया। उसको आशा थी कि वेस्ट इंडीज के द्वीपों के दक्षिण में भी उसको नया देश मिलेगा। उसको नया देश अवश्य मिला किन्तु अपनी मृत्यु तक वह यह न जान सका कि उसने एक बड़े महाद्वीप को ढूंढ निकाला है। तेज धूप और गर्मी में वह लगातार चलता गया और अन्त में उसको पृथ्वी दिखलाई दी। कोलम्बस ने मन में यह निश्चय कर रक्खा था कि पहिली भूमि का नाम पवित्र तीन देवताओं के नाम पर रक्खेगा। उसे देखकर यह आश्चर्य हुआ कि उस भूमि पर तीन पहाड़ खड़े हैं उसने उसका नाम सन-ट्रिनीडाड रख दिया। उस भूमि के लहलहाते दृश्य को देखकर स्पेन निवासी बहुत प्रसन्न हुए। कोलम्बस जब दक्षिण अमेरिका के तट पर चल रहा था तो उसने सोचा कि यह एक बहुत बड़ा द्वीप है। उसने उसको 'इसला-संटा' का नाम दिया। वहाँ की मछलियाँ तोते तथा अन्य पक्षी बहुत बड़े थे। वह चलते चलते एक ऐसे स्थान पर आया जहाँ एक बहुत बड़ी जल की धारा समुद्र में गिर रही थी। क्योंकि जहाज वहाँ

अगर हाल रहे थे तो मीठे जल की उस धारा में भीषण बाढ़ आई और उससे कोलम्बस के जहाज़ नष्ट होते होते बचे। यह ओरिनिको नदी का मुहाना था जिसका नाम उन्होंने *ड्रैगन-माउथ* रक्खा। जब बाढ़ समाप्त हो गई और खतरा निकल गया तो वह आगे बढ़ा। समुद्र तट का प्रदेश अत्यन्त रमणीक था पहाड़ों की ऊंची पंक्ति बहुत भली मालूम पड़ती थी और यहां की शीतल वायु ने स्पेन वासियों की यात्रा की थकावट को दूर कर दिया।

कोलम्बस ने यह निश्चय किया कि यह पृथ्वी का केन्द्र होगा। उसकी बड़ी बड़ी नदियों को देखकर उसने अनुमान किया कि यह पृथ्वी का वही स्वर्ग है जिसके बारे में धर्मशास्त्रों ने घोषणा की थी कि वह सुदूर पूर्व में है और जो बहुत ऊंचा है।

अब वह हैटी की ओर बढ़ा जहां उसका भाई उपनिवेश का शासन कर रहा था। लेकिन उसके पीछे वहां विद्रोह और अशान्ति का बोलबाला था। कोलम्बस भी उस स्थिति में कुछ सुधार न कर सका। वह एक सफल नाविक था किन्तु सफल राजनीतिज्ञ नहीं था। उपनिवेश से शिकायतें स्पेन भेजी गईं और वहां से एक स्पेनिश अफसर वायसराय नियुक्त किया गया। हैटी में आते ही उस अफसर ने कोलम्बस को कैद कर लिया और एक जहाज़ पर उसे स्पेन भेज दिया। जब वृद्ध योद्धा कोलम्बस जिसके चेहरे पर कष्ट और दुख की रेखाएं बन गई थी रानी के सामने लाया गया तो रानी बहुत दुखी हुई। उसने कोलम्बस को फिर शाही सम्मान दिया और चौथी और अन्तिम बार उसको जहाज देकर यात्रा के लिए भेजा। लेकिन जीवन

में लगातार कठिनाइयों और खतरों को झेलते झेलते कोलम्बस थक गया था वह इ जीव को लम्बी यात्रा के योग्य नहीं रह गया था। फिर भी वह सकुशल हांडुरास पहुंच गया। वहां के निवासी उसके लिए नारियल लाए जिन्हें स्पेन वालों ने पहली बार चखा। वे कुछ बढ़िया मांस भी बेचने के लिए लाए जो कि कहीं दूर से वहां लाता था। इससे यह सिद्ध होता था कि पास ही कहीं ऊंची सभ्यता का कोई देश है। कोलम्बस को निश्चय हो गया कि वह सोने के देश पूर्व में पहुंच गया है जहां से सालोमन के मन्दिर के लिए सोना लाया गया था।

यदि कोलम्बस थोड़ा पश्चिम की ओर बढ़ गया होता तो वह मैक्सिको की खोज निकालता और उसके सोने चांदी से उसकी सफलता में चार चांद लग जाते। उसके बुढ़ापे में उसकी इस खोज से असीम वैभव सफलता और सम्मान प्राप्त होता। किन्तु उसके जीवन में उसको निराशा और उदासीनता ही हाथ लगी।

कोलम्बस सोने के पूर्वी देश की खोज में भटक रहा था कि मौसम खराब हो गया घन घोर मूसलाधार निरंतर वर्षा होने लगी। बिजली की कड़क और भीषण तूफान से समुद्र भयानक हो गया। आगे बढ़ना बहुत खतरनाक था फिर उसके पास भोजन समाप्त हो गया था। जो थोड़ा बहुत भोजन बचा था वह बहुत खराब हो गया था। बिस्कुटों में कीड़े ही कीड़े हो गए थे। लोग रात्रि के अंधेरे में ही उन्हें खाते थे जिससे कि वे दिखलाई न दें। कोलम्बस इतना बीमार हो गया था कि वह मानो मृत्यु की बाट जोह रहा हो। उसने लिखा

है "मैंने अपने जीवन में समुद्र की लहरों को उतना ऊँचा और उतना भयंकर कभी नहीं देखा था और न समुद्र पर इतना फेन ही मुझे कभी देखने को मिला। आकाश से जल वर्षा निरन्तर हो रही है रुकने का नाम नहीं ऐसी प्रलय का दृश्य उपस्थित है।'

ऐसी दशा में आगे खोज जारी रखना असम्भव समझ कर कोलम्बस स्पेन की ओर लौट पड़ा। जब १५०४ में स्पेन पहुंचा तो वह इतना बीमार था कि उसको उठा कर समुद्र तट पर लाया गया। स्पेन पहुंचने पर उसे मालूम हुआ कि स्पेन की रानी मर चुकी है। कोलम्बस का एक मात्र सहारा और मित्र उठ गया उसके पास एक कौड़ी भी नहीं रही और वह इतना बीमार था कि मृत्यु उसके नजदीक खड़ी थी।

कोलम्बस ने दुख भरे शब्दों में लिखा है। 'बीस वर्ष तक कठिन परिश्रम करते रहने और खतरों से जूझते रहने पर भी मेरे पास स्पेन में रहने के लिए एक झोंपड़ी भी नहीं है।

नई दुनिया के प्रथम खोजी की दयनीय दशा को उसके शब्दों में ही पढ़िये।

"मैं यहां रोग शय्या पर पड़ा हुआ अकेला मृत्यु की बाट जोह रहा हूं। राजा से लेकर साधारण लोग सभी मुझे उपेक्षा दृष्टि से देखते हैं और मैं इतना मोहताज हूं कि मेरे पास खाने को भी नहीं है।'

इस प्रकार वह महान खोजी क्रिस्टोफर कोलम्बस अत्यन्त दयनीय दशा में उपेक्षित और अपमानित होकर मर गया। उसे अपनी मृत्यु पर्यन्त तक यह मालूम न हो सका कि उसने एक

बड़े महाद्वीप—नई दुनिया को ही खोज निकाला है। मानव जाति की सेवा करने वालों तथा वीर पुरुषों की यही कहानी रही है। दुनिया इतनी कृतघ्न है कि जब एक वर्ष बाद दुनिया को यह मालूम हुआ कि कोलम्बस ने एक नई दुनिया को खोज निकाला तो भी किसी ने उस महाद्वीप का नाम कोलम्बस के नाम पर रखने की जरूरत नहीं समझी। कोलम्बस की मृत्यु के एक वर्ष बाद एक स्पेन के अलफ़ हौजेडा ने जो कोलम्बस के साथ दूसरी यात्रा पर गया था १४९९ में एक यात्रा की। उसके साथ एमेरिगो वेस्पुची नामक एक व्यक्ति था। वे कोलम्बस के मार्ग से दक्षिण अमेरिका पहुंचे। वहां से लौटकर एमेरिगो ने कहा कि यह महादेश न एशिया है और न अफ्रीका है यह नई दुनिया है। क्योंकि एमेरिगो ने यह बात कही कि यह नई दुनिया है उस महाद्वीप का नाम उसके नाम पर अमेरिका रख दिया गया। खोज के इतिहास में इससे बड़ा अन्याय नहीं हो सकता। जिस व्यक्ति ने अथक परिश्रम करके और जोखिम उठाकर उस महाद्वीप को खोज निकाला उस व्यक्ति को लोग उस महाद्वीप का नाम रखते समय भूल गए। जो भी हो कोलम्बस की मानव जाति के लिए की गई सेवा अमर रहेगी।

०

# पांचवां परिच्छेद

## बिल्बाओ की प्रशान्त महासागर की खोज

जब स्पेन को यह ज्ञात हो गया कि जिस महाद्वीप को कोलम्बस ने खोज निकाला था वह एक नई दुनियां है तबसे स्पेन वाले एक के बाद दूसरे साहसी नाविक को उस महाद्वीप की खोज के लिए भेजने लगे। साहसी नाविक खोजियों में से एक के बाद दूसरे ने अमेरिका के पूर्वी तट की पूरी खोज कर ली। इनमें पिन्जोन मेनडोजा बैस्टिडास ज्वान-डी-ला-कोसा और सोलिस मुख्य थे। यदि सोलिस का प्लाटा नदी के मुहाने के पास मार न डाला जाता तो सम्भवतः वह पहला व्यक्ति होता कि जो प्रशान्त महासागर को ढूंढ निकालता।

यह महान् खोज करनेवाला बल्बाओ था। उसने उस अजनबी नई दुनियां के आगे क्या है यह डेरियन की चोटी से देखा। उसकी इस खोज ने कि अमेरिका के पश्चिम में प्रशान्त महासागर है यह सिद्ध कर दिया कि भूमि के चारों ओर जल है और उसके कारण ही मैगेलान के दिमाग में पृथ्वी की परिक्रमा करने का विचार जागृत हुआ।

बिल्बाओ एक अच्छे परिवार का सुन्दर और स्वस्थ युवक था। वह स्पेन से हैटी के उपनिवेश चला आया था और वहां आकर बस गया था। किन्तु हैटी में उस पर कर्ज हो गया। वहां का नियम यह था कि किसी व्यक्ति को जो कर्जदार होता उस द्वीप से जाने नहीं दिया जाता था। लेकिन बिल्बाओ की लालसा थी कि वह नई खोजों में भाग ले। एक दिन उसकी यह लालसा इतनी तीव्र हो गई कि वह एक जहाज में चुपके से चढ़ गया और रोटी के बड़े खाली पीपे में छिप कर बैठ गया। जब जहाज हैटी से दूर खुले समुद्र में निकल गया तो वह अपने छिपने के स्थान से निकल कर बाहर आया। जहाज का कप्तान बहुत ही नाराज हुआ। वह इतना नाराज हुआ कि उसने उसे एक निर्जन द्वीप पर छोड़ देने का निश्चय कर लिया। लेकिन उसकी तथा अन्य नाविकों की दया प्रार्थना पर उसका क्रोध शान्त हो गया और उसने बिल्बाओ को जहाज पर रहने दिया। कप्तान का यह निर्णय बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ। यों कहना चाहिए कि इस निर्णय के कारण ही उस जहाज पर जितने भी लोग थे उनकी जान बच सकी। बात यह थी कि उसके ठीक थोड़ी देर बाद जहाज एक चट्टान के ऊपर चढ़ गया और टूट गया। उस समय बिल्बाओ ही था जिसने जहाज के लोगों को मृत्यु और विनाश से बचा लिया। वह जहाज के सभी नाविकों को एक नदी डेरियन के पास ले गया जिसके बारे में बिल्बाओ पहले से जानता था। उसको यह ज्ञात नहीं था कि वह स्थान एक पतली भूमि की पट्टी है जो दक्षिण और उत्तरी अमेरिका को जोड़ती है।

बनाकर वे सब लोग समुद्र तट पर पहुँचे। वहाँ उन्हें दो बड़ी नावें मिलीं वे खुशी से उछल पड़े और खुशी से चिल्ला उठे कि हम ही योरोपवासी हैं जो नये समुद्र में जायेंगे। बिल्बाओ ने अपनी तलवार निकाल ली और नाव में पैर रखते ही उसने घोषणा की कि वह दक्षिणी महासागर पर स्पेन के बादशाह के नाम पर अधिकार करता है। आदिवासियों ने उसे बतलाया कि दक्षिण में जो भूमि है उसका कोई अन्त नहीं है और उस पर शक्तिशाली जातियां रहती हैं और वहां बहुत मात्रा में सोना मिलता है। बिल्बाओ ने प्रशान्त महासागर को ही दक्षिणी महासागर कहा है।

यह खेद की बात है कि बिल्बाओ जिसने यह महान खोज की थी और पनामा जलडमरूमध्य के पश्चिम में प्रशान्त महासागर को खोज निकाला था उसको चार वर्ष बाद सार्वजनिक रूप से फांसी दे दी गई।

लेकिन यह समाचार कि नई दुनिया के पार दक्षिणी महासागर है मैगलान तक पहुंच गया। अब उसको निश्चय हो गया कि समुद्र के रास्ते मसाले के द्वीपों तक पहुँचा जा सकता है। उसने स्पेन के तरुण बादशाह को कहा कि इन मूल्यवान द्वीपों पर स्पेन का अधिकार होना चाहिए और उसने वचन दिया कि वह अमेरिका के दक्षिण में समुद्री मार्ग से पश्चिम में जाकर जहाजी बेड़ा ले जायेगा। तरुण बादशाह ने उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और उसको समुद्र के मार्ग से पश्चिम में मसाले के द्वीपों पर अधिकार करने के लिए भेजा गया।

# छठा परिच्छेद

## मैगलान की पृथ्वी परिक्रमा

फरडिनैंड-मैगलान का जन्म १४८  में पुर्तगाल के उत्तर में सबरोसा नामक स्थान पर हुआ था। उसने एक सामन्त परिवार में जन्म लिया था। कुछ दिनों तक पुर्तगाल के बादशाह के दरबार में नौकरी करने के बाद १५ ५ में उसने अपना नाम अलमेडा के जहाजी बेड़े में लिखा लिया और दो समुद्री युद्धों में घायल हुआ। जब सिक्वेरिया ने १५ ६ में मलक्का की खोज की तो वह उसके साथ था। १५११ में जब अलबुकर्क ने मलक्का पर अधिकार जमाया तब वह उसके साथ युद्ध में सम्मिलित हुआ और जावा की यात्रा में भी वह उसके साथ रहा। उसकी पूर्व में की गई सेवाओं के उपलक्ष में जब वह पोर्तुगाल लौटा तो उसका वेतन बढ़ा दिया गया।

१५१३ में मैगलान ने मराक्को के युद्ध में भाग लिया जिसमें वह जख्मी हो गया। जब वह पुर्तगाल लौटा तो उस पर यह आरोप लगाया गया कि लूट के माल को बांटने में उसने गड़बड़ की है। जब वह पुर्तगाल के बादशाह डामनैनुअल के सम्मुख गया तो उसने मैगलान का कोई सत्कार नहीं किया और उसकी घोर घोर

उदासीनता प्रकट की। मैगलान को राजा के इस व्यवहार और अपमान से बहुत दुख हुआ और यह सोचकर कि पुर्तगाल में उसके लिए अब कोई भविष्य नहीं रहा उसने सार्वजनिक रूप से पुर्तगाल की राष्ट्रीयता को छोड़ दिया और स्पेन चला गया और वहां उसने स्पेन के बादशाह चार्ल्स पांचवें की सेवा स्वीकार कर ली। बात यह थी कि मैगलान की साहसपूर्ण यात्राओं की सफलता के कारनामे और मसाले के द्वीपों की यात्रा के विवरण से चार्ल्स पांचवां बहुत प्रभावित हुआ। मैगलान ने अपनी मसाले के द्वीपों की खोज के प्रमाण में स्पेन के बादशाह को मसाले के द्वीपों के एक दास और दासी को जिन्हें वह अपने साथ ले आया था दिखलाया। यही कारण था कि दरबार में मैगलान को उचित आदर मिला। मैगलान की योजना यह थी कि वह दक्षिण अमेरिका के समुद्र तट के सहारे उस स्थान से भी दक्षिण में जाये जिसे अमेरिगो ने खोज निकाला था। उसका विश्वास था कि दक्षिण अमेरिका के दक्षिण में अटलांटिक महासागर से दक्षिण महासागर में जाने के लिए समुद्री मार्ग अवश्य होगा। यदि वह समुद्री मार्ग मिल गया तो मसाले के द्वीपों के लिए पश्चिमीय समुद्री मार्ग खुल जायेगा।

बहुत सोच विचार करने के बाद स्पेन के तरुण बादशाह ने पुर्तगाल के घोर विरोध करने पर भी मैगलान को खोज पर जाने की आज्ञा दे दी।

इस यात्रा के लिए लोगों को उत्साह नहीं था। कारण यह थी कि वेतन कम था और रास्ता अनजान था। सेविली की गलियों में

मैगलान के पारम्भी खोज की यात्रा के लिए जाने वालों को प्रायः जगह जगह पर भर्ती करते फिरते थे। यही कारण था कि मैगलान के साथ जो २८ लोग गए उनमें स्पेन पुर्तगाल जिनोवा फ्रांस जर्मन ग्रीस आदि देशों के निवासी और एक अंग्रेज भी था।

मैगलान को स्पेन के तरुण बादशाह ने पांच जहाज दिए थे। वे बहुत पुराने और मरम्मत किए हुए थे। मैगलान ने ११ टन के ट्रिनीडाड जहाज पर अपना झंडा लगाया। सबसे बड़े जहाज सैंट ऐन्टोनिया का कप्तान एक स्पेनवासी कारटेगना था। नब्बे टन के जहाज 'कन्सेप्शन' का कप्तान कैसपार क्वेसाडा बनाया गया। पचासी टन का विक्टोरिया जहाज जो अकेला यात्रा से कुशल-पूर्वक लौटा था उसका कप्तान विश्वासघाती मन्डोजा था और पचहत्तर टन का छोटा 'सन्टियागो' जहाज मैगलान के पुराने मित्र सैरानो के भाई की अधीनता में था।

मगलान को तरुण पत्नी और ६ महीने का नवजात पुत्र मैगलान को जोखिम भरी यात्रा पर जाने से नहीं रोक सके। खोज का भूत उस पर इतना अधिक चढ़ गया था कि सुन्दर तरुण पत्नी और ६ महीने के पुत्र का मोह भी उसको न रोक सका और वह पहली बार स्पेन के झंडे को अपने जहाज ट्रिनीडाड पर फहराता हुआ स्पेन से लम्बी यात्रा के लिए चल पड़ा। उसने फिर कभी अपनी पत्नी और पुत्र को नहीं देखा। क्योंकि जब वह तीन वर्ष बाद यात्रा से लौटा तो उसे मालूम हुआ कि उसकी पत्नी और पुत्र दोनों ही स्वर्गवासी हो गए। अपने जहाज पर उसने एक जलती हुई मशाल

रक्खी थी जिससे कि पीछे अन्य जहाज फ्लैगशिप की रोशनी को देखकर ठीक मार्ग पर चलते रहें। उसने अपने साथियों से कहा कि तुम मेरे जहाज के पीछे पीछे चले आओ और कोई प्रश्न न पूछो।

मैगलन ने २ सितम्बर १५१९ को सैविली से यात्रा आरम्भ की। एक सप्ताह के बाद वह कनारी द्वीप पहुंचा और फिर वहाँ अन्तरीप को पार करने पर भूमि आंख से ओझल हो गई। कुछ दिनों तक हवा अनुकूल थी इस कारण यात्रा में कोई कष्ट नहीं हुआ। उसके बाद हवा तेज हो गई और एक महीने तक तेज तूफान और अंधड़ चलता रहा। इटली का काकल्ड जो उस जहाजी बेड़े के साथ था उसने इस तूफान का और विपत्ति का विस्तार पूर्वक वर्णन लिखा है। वह लिखता है—

'इन भयंकर तूफानों के समय कई बार संत ऐल्मस की मूर्ति हमारे सामने प्रकट हुई। एक रात्रि को जब कि भयंकर तूफान उठ रहा था और गहन अंधकार था तब संत ऐल्मस बड़े मस्तूल के ऊपर जलती हुई अग्नि के रूप में प्रकट हुए और वहां दो घड़ी तक रहे। उससे हमें बहुत ढाढ़स बंधा। क्योंकि उस समय तूफान इतना भयानक था कि हम सब लोग रो रहे थे और प्रतिक्षण यह भय था कि अब जहाज डूब जायेंगे। जब वह पवित्र अग्नि हम से दूर जाने लगी तो उसकी रोशनी इतनी तेज हो गई कि हम सब अंधे हो गए और दया के लिए चिल्लाने लगे क्योंकि हममें से किसी को भी बचने की आशा नहीं थी। परन्तु उस रात्रि को जहाज़ नहीं डूबे और

हम लोग बच गए।"

किन्तु उससे भी कष्टों का अन्त नहीं हुआ। दो महीने तक लगातार मूसलाधार वर्षा होती रही और खाने पीने का सामान चुकने लगा। अब नाविकों में विद्रोह के चिह्न दिखलाई देने लगे। बात यह थी कि स्पेन वासी कप्तान पुर्तगालवासी कमांडर मैगलान की आधीनता से यों भी चिढ़ता था। परन्तु मैगलान ने बड़ी कड़ाई से काम लिया। उसने कहा कि मैं तुम्हारी इन धमकियों से डरनेवाला नहीं हूं। जो काम मैंने अपने जिम्मे लिया है उसका अवश्य करूंगा। उसकी दृढ़ता को देखकर सब चुप हो गए।

नवम्बर १५१९ में मैगलान ब्राजील दक्षिण अमेरिका के तट पर पहुंचा। वहां पर एक दुर्घटना हुई। स्पेनवासी कप्तान उससे संतुष्ट नहीं थे। एक दिन ऐन्टोनिया का कप्तान मैगलान के जहाज ट्रिनीडाड पर चढ़ गया और खुले रूप में उसकी बेइज्जती की। लेकिन मैगलान भयभीत नहीं हुआ। उसने उस विद्रोही कप्तान को गले से पकड़ लिया और कहा कि तुम मेरे कैदी हो। उसको कैद में रखकर उसने उस जहाज का दूसरा कप्तान नियुक्त कर दिया।

ब्राजील के तट पर ताजी भोजन वस्तुएं बहुत मात्रा में मिलीं। फल वहां बहुत होते थे मुर्गियां और पशु भी बहुत सस्ते थे। एक चाकू देकर वहां के आदिवासियों से वे लोग पांच छः मुर्गियां ले लेते थे। एक घंटी के बदले वे लोग एक टोकरी भरकर शकरकंदी दे देते थे। खाने पीने की ऐसी सुविधा हो जाने से नाविक प्रसन्न हो गए।

मैगलान जब यहाँ पहुँचा तो उससे पहले वहाँ बहुत लम्बे समय से सूखा पड़ा हुआ था। वर्षा नहीं होती थी। मैगलान के वहाँ पहुँचते ही वर्षा जोरों से होने लगी। भोले आदिवासियों को यह विश्वास हो गया कि यह विदेशी गोरे लोग वर्षा अपने साथ लाए हैं। वे उनको बड़ी श्रद्धा से देखने लगे। उनकी इस श्रद्धा का लाभ उठाकर मैगलान ने उन सबों को ईसाई बना लिया। वे भी स्पेनवासियों के साथ घुटने टेक कर श्रद्धा के साथ प्रार्थना करने लगे।

कई दिन के बाद मैगलान फिर आगे बढ़ा। वह दक्षिण की ओर दक्षिण अमेरिका के समुद्र-तट के साथ साथ चल रहा था। नये वर्ष के प्रारम्भ में वे *रायो-डी-लाप्लाटा* के मुहाने पर पहुँच गए जहाँ पाँच वर्ष पूर्व सोलिस को आदिवासियों ने मार कर खा लिया था। वह अमेरिगो के बाद स्पेन की ओर से दक्षिण अमेरिका की अधिक खोज के लिए नियुक्त किया गया था। वह जबकि समुद्र तट की खोज कर रहा था उस समय कुछ आदिवासी रेड इंडियन उस पर दौड़ पड़े और उसको मार कर भून डाला और उसका मांस खा गए।

फरवरी और मार्च के महीनों में मैगलान बराबर दक्षिण की ओर बढ़ता गया। उसे आशा थी कि कहीं दक्षिण अमेरिका का महाद्वीप समाप्त होगा और वह उसे पार कर पश्चिम की ओर मसाले के द्वीपों की ओर बढ़ेगा। जाड़ा प्रारम्भ हो गया लेकिन कोई मार्ग नहीं मिला। उन छोटे जहाजों पर एक के बाद दूसरा भयंकर तूफान

टूटने लगा। उन तूफानों के साथ घोर गर्जन के साथ बिजली भी कड़कती थी। उन तूफानों ने जहाजों को झकझोर डाला और नाविक सभी यह समझ कर कि उनका अन्त आ गया है रोने लगे और प्रभु से प्रार्थना करने लगे तो उन्हें संत अंसलाम की पवित्र मूर्ति दिखलाई दी और तूफान रुक गया।

अब पतझड़ के मौसम में और अधिक बढ़ना असम्भव था। एक सुरक्षित और बड़ा बन्दरगाह देखकर मगलान ने जाड़े में वहीं ठहरने का निश्चय किया। उसने उस बंदरगाह का नाम जूलियान बन्दरगाह रक्खा। मेंगलान जानता था कि उसे वहां चार पांच महीने ठहरना होगा। इसलिए उसने नाविकों को दैनिक राशन घटा दी जिससे कि खाने पीने का सामान समाप्त न हो जावे। नाविक वैसे ही संतुष्ट नहीं थे। यात्रा के भीषण कष्ट अटलांटिक महासमुद्र के भयंकर तूफान लम्बे दक्षिणी ध्रुव के भीषण शीत की सम्भावना और उस तट पर बेकार पड़े रहने के कारण नाविक क्षुब्ध हो उठे और उन्होंने मेंगलान से स्पेन लौट चलने को कहा। साहसी मगलान ने उन्हें फटकार दिया। वह विपत्तियों से घबड़ाने वाला नहीं था। दोनों स्पेनवासी कप्तान अन्तानियो जहाज पर चढ़ गए और उसके पुर्तगाली कप्तान को पकड़ कर बंदी बना लिया। उस जहाज में खाने पीने का भंडार था उसको तोड़ डाला गया और रोटी और शराब खूब बांटी गई। उसके बाद उन्होंने यह योजना बनाई कि त्रिनीडाड जहाज पर भी कब्जा कर लिया जावे और मेंगेलान को मार कर और उसके स्वामिभक्त कप्तान सैरेनो को कैद कर स्पेन की ओर लौटा जावे।

इस विद्रोह की खबर मैगलान के पास पहुंची। उसने तुरंत एक संदेशवाहक को पांच आदमियों के साथ उस विद्रोही कप्तान को बुला लाने के लिए भेजा। ये पांचों आदमी कपड़ों के नीचे अस्त्र शस्त्र छिपाए हुए थे। कप्तान ने मैगलान के पास जाने से साफ इनकार कर दिया। जैसे ही उसने मैगलान के पास जाने से इनकार किया संदेशवाहक ने झपट कर उसको मार डाला। विद्रोही कप्तान के मरते ही उसके सहायक विद्रोही नाविकों का साहस टूट गया और उन्होंने क्षमा की भिक्षा मांगी। मैगलान के साहस से विद्रोह समाप्त हो गया और फिर कभी भी किसी ने विद्रोह करने का साहस नहीं किया।

मैगलान के जहाज जूलियान बंदरगाह में दो महीने तक रहे किन्तु उन्हें एक भी आदिवासी दिखलाई नहीं दिया। परन्तु एक दिन समुद्र तट पर एक विशालकाय मनुष्य दिखाई दिया जो नाच और गा रहा था। वह इतना लम्बा था कि लम्बे से लम्बा स्पेनवासी भी केवल उसकी कमर तक आता। उसका चेहरा बहुत बड़ा था जिस पर लाल रंग पुता था। उसकी आंखों के चारों ओर पीला रंग लगा हुआ था। कुछ ही देर बाद ऐसे कई विशालकाय पुरुष वहां जमा हो गए। उन्हें स्पेनवासियों को देखकर बहुत आश्चर्य हो रहा था कि ऐसे छोटे आदमी भी होते हैं। स्पेनवासियों ने उन्हें खाने को दिया। उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि दो आदिवासियों ने एक डलिया भर कर बिस्कुट और चूहे खा लिए और आधी बाल्टी पानी पी लिया। उसके विशाल शरीर को देखकर मैगलान के आदमी

आ गए तो उन्हें अजीब सा लगा। मैगलान पहले उत्तर की ओर चला क्योंकि वह अपने आदमियों को ठंड से बचाना चाहता था। फिर वह उत्तर पश्चिम की ओर चलने लगा क्योंकि उसका विश्वास था कि उस ओर मसाले के द्वीप हैं।

उसके जहाज जर्जर हो गए थे। उसके नाविक थके हुए थे और ठंड से कांपते थे। फिर भी मैगलान प्रशान्त महासागर में चलता ही चला गया। किसी को भी प्रशान्त महासागर के विस्तार की कोई कल्पना ही नहीं थी। दिन पर दिन और सप्ताह पर सप्ताह निकलने लगे किन्तु शान्त जल के सिवाय भूमि का कहीं नाम भी नहीं दिखलाई दिया। इस तरह दो महीने निकल गए।

जनवरी में कहीं एक छोटा सा टापू मिला लेकिन उस पर मनुष्य का चिह्न भी नहीं था। उस वीरान टापू को छोड़कर वे आगे बढ़े किन्तु दूसरा टापू भी वीरान था। अब नाविकों को घोर निराशा हुई। उनका भोजन समाप्त हो गया। बिस्कुट बिस्कुट न रहकर कीड़ों का पाउडर बन गए थे। चूहे विलासिता की वस्तु बन गए थे। भोजन की इतनी कमी हो गई थी कि जहाज में लगे हुए चमड़े को आग पर सेंक कर खाना पड़ा। नाविकों में बीमारी फैल गई उन्नीस आदमी मर गये और तेरह बहुत अधिक बीमार हो गए।

अट्ठानवे दिन तक लगातार मैगलान अनजाने समुद्र में रात दिन चलता रहा। उसे कल्पना ही नहीं थी कि प्रशान्त महासागर इतना बड़ा होगा। अन्त में मैगलान फिलीपाइन द्वीप समूह में पहुँचा। वहां उसको चीन के व्यापारी मिले जिन्होंने उसे बतलाया कि मसाले

के द्वीप अब अधिक दूर नहीं हैं। मैगलान की यात्रा सफल हुई उसने पश्चिम में समुद्र के रास्ते मसाले के द्वीपों और चीन इत्यादि पूर्वी द्वीपों को जाने का मार्ग ढूंढ निकाला। लेकिन वह अपने परिश्रम का फल भोगने के लिए जीवित नहीं रहा।

उन द्वीपों पर खाने पीने की चीजों की बहुतायत थी। थके भूखे और बीमार नाविकों को जब अच्छा भोजन मिलने लगा तो उनका स्वास्थ्य जल्दी ही सुधर गया। अब मैगलान एक द्वीप से दूसरे द्वीप को जाता वहां से सोना इकट्ठा करता। वह धीरे धीरे मसाले के द्वीपों की ओर बढ़ता जा रहा था। उसने उन द्वीपों के शासकों से स्पेन के राजा के नाम पर कर उगाहना शुरू किया। मैगलान ने लोगों को ईसाई बनाने और सोना इकट्ठा करने में बहुत जल्दी की। ईस्टर आ गया मैगलान ने द्वीप के सबसे ऊंचे पहाड़ पर बड़ा क्रास का चिह्न और कांटों का मुकुट रख दिया जिससे सब उसको देख सकें और उसकी पूजा कर सकें। एप्रिल समाप्त हो गया किन्तु मैगलान सोना बटोरने और लोगों को ईसाई बनाने में ही लगा रहा। उसके उत्साह का यह फल हुआ कि उसका एक देशी राजा से झगड़ा हो गया। मैगलान उस टापू पर अपने थोड़े से सशस्त्र सैनिकों के साथ उतरा परन्तु वहां हजारों की संख्या में क्रुद्ध आदिवासी जमा थे। भयंकर युद्ध हुआ। क्रुद्ध आदिवासियों ने अपने भालों से मैगलान को मार डाला। उस साहसी नाविक का अपनी अद्भुत सफलता के बाद इस प्रकार दुखद अन्त हुआ।

दुखी और निराश नाविक जिनकी संख्या अब केवल एक सौ

पंद्रह रह गईं थी ट्रिनीडाड और विक्टोरिया जहाजों पर जमा हुए और स्पेन की ओर लौटे। सितम्बर १५२२ को वे मसाले के द्वीपों के पास पहुँचे वहां वे कुछ महीने आनन्द से रहे और जहाजों में मसाले भर कर वे आगे बढ़े। लेकिन ट्रिनीडाड जहाज इतना जर्जर हो चुका था और उस पर लौंग इत्यादि मसाले इतने अधिक भर लिए गए थे कि वह इतनी लम्बी यात्रा के लिए उपयुक्त नहीं था। ट्रिनीडाड को मरम्मत के लिए छोड़कर छोटा जहाज विक्टोरिया ६ नाविकों को लेकर स्पेन की ओर चला। उन साहसी नाविकों को उस लम्बी और भयंकर यात्रा में जो कष्ट और विपत्तियां उठानी पड़ीं और उन्हें जिस प्रकार भूख से लड़ना पड़ा उसकी कहानी कौन लिख सकता है। एक के बाद दूसरा आदमी मरता गया और जब जहाज् वर्डी अन्तरीप के द्वीपों के पास पहुंचा तो केवल १८ आदमी जीवित बच गए थे।

लम्बी यात्रा समाप्त हुई। स्पेन की भूमि के दर्शन हुए। मल्लाह भूखे थके और उदास नाविक अपने कप्तान डेल-कैनो के साथ उतरे। उन्होंने अपने कमांडर और नेता मैगलान द्वारा प्रथम बार पृथ्वी की परिक्रमा की गौरवपूर्ण गाथा स्पेन के लोगों को सुनाई।

मैगलान का पुत्र मर चुका था और उसकी प्रिय पत्नी बैटरिस ने जब अपने पति की दुखद मृत्यु का समाचार सुना तो वह उस आघात को न सह सकी और मर गई। पत्नी और पुत्र के मर जाने से मैगलान का परिवार समाप्त हो गया। अतएव स्पेन के बादशाह ने विक्टोरिया जहाज को लौटा कर लाने वाले कप्तान डेल-कैनो को

सम्मानित किया। यद्यपि मैगलान स्पेन के बादशाह से पृथ्वी की प्रथम बार परिक्रमा करने वाले विजेता नाविक के रूप में सम्मानित होने के लिए जीवित नहीं रहा किन्तु लोगों के इतिहास में उसका नाम सदैव आदर और श्रद्धा के साथ लिया जायेगा।



घायल कर दिया। कारडोवा भी घायल हो गया। उसने क्यूबा के गवर्नर को अपनी यात्रा का वर्णन लिख भेजा और कुछ दिनों के बाद वह मर गया।

कारडोवा ने जो विवरण भेजा वह बहुत प्रेरणादायक और रोचक था। इस कारण स्पेन वालों ने उस देश पर विजय प्राप्त करने के लिए फिर जहाजी बेड़ा भेजने का निश्चय किया। इस जहाजी बेड़े का नेता साहसी तरुण युवक जुआन-ग्रिजालवा था। उसके साथ ढाई सौ और योद्धा सैनिक थे और उसके जहाजों को चलाने वाला वृद्ध अनुभवी अलवराडो था जो कोलम्बस और कारडोवा की यात्राओं में उनके जहाजों की देखभाल कर चुका था। इस महान् धनी देश के समुद्र तट की सर्व प्रथम खोज ग्रिजालवा ने ही की।

जब ग्रिजालवा मैक्सिको के समुद्र तट पर पहुँचा और वहां के निवासियों से देश का नाम पूछा वे चिल्ला उठे 'मक्सिको मैक्सिको" उन्होंने तरुण ग्रिजालवा को सोने के आभूषणों से लाद दिया। उसके लिए उन्होंने सोने का कूट तैयार कर दिया। ग्रिजालवा को इसमें कोई संदेह नहीं रहा कि मार्को पोलो ने महान खान के जिस देश का वर्णन किया वह यही देश है। जब वह लौटा तो उसने गवर्नर को बहुत उत्साहपूर्वक सूचना दी और कहा कि इस महान धनी देश की खोज करना नितान्त आवश्यक है।

अब इस सोने के देश की खोज की क्यूबा में तैयारियां होने लगीं। मैक्सिको का विजेता 'हरनाण्डो-कोर्टेस' उस अभियान का

बैठा था। कोर्टेस तरुण साहसी और लगन वाला व्यक्ति था किन्तु उसका एक मात्र आदर्श सफलता प्राप्त करना भर था। वह किसी आदर्श या सिद्धान्त से बंधा हुआ नहीं था। महान् लाभ के सोने के देश की खोज के लिए स्पेन में बहुत अधिक उत्साह था। हर एक व्यक्ति इस खोज में जाना चाहता था। लोगों ने घोड़े और शस्त्र खरीदने के लिए अपनी भूमि बेच डाली। सुअर का मांस नमक लगाकर जहाजों में भर लिया गया। लोगों ने हथियार और कवच इकट्ठे कर लिए। तब तैयारी करके कोर्टेस ने अपना टोप पहना जिस पर सोने का तमगा लटक रहा था और उसमें सम्मान के चिह्न रूप पंख लगे हुए थे। जब सब तैयार हो गए तो उसने अपने जहाज पर मखमली झंडा फहराया जिस पर स्पेन का राज्य-चिह्न अंकित था और नीचे लिखा था "साथियो विश्वास के साथ क्रास का अनुकरण करो क्योंकि उसके मार्गदर्शन में हम विजय प्राप्त करेंगे।

उसने साथियों को सम्बोधित करते हुए कहा "साथियो मैं तुम्हारे लिए शानदार विजय और पुरस्कार प्राप्त करूंगा किन्तु तुम्हें उसके लिए कठिन परिश्रम करना होगा। महान् कार्य कठिन परिश्रम के द्वारा ही पूरे होते हैं। आलसियों और विलासियों को कभी वैभव और विजय प्राप्त नहीं होती। यदि मैंने इस अभियान के लिए कठिन परिश्रम किया है और जो कुछ मेरे पास था सब को दांव पर लगा दिया है तो केवल इसलिए कि मैं उस यश को प्राप्त करना चाहता हूं जो कि मेरी नजर में सबसे मूल्यवान है। परन्तु यदि आपमें से कुछ ऐसे हों जो यश से अधिक धन को मूल्यवान समझते हों तो मुझसे सच-सच

कह दें मैं आपको अनन्त धन और सम्पत्ति का स्वामी बना दूंगा जिसकी हमारे देशवासियों ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी। आप लोग संख्या में थोड़े हैं किन्तु आपका निश्चय दृढ़ है। आप विश्वास रखिये कि ईश्वर कभी भी स्पेनवासियों का बैर ईसाइयों से युद्ध में साथ नहीं छोड़ता वह स्पेनवासियों की रक्षा करता है और उन्हें विजयी बनाता है क्योंकि हम क्रास के झंडे के नीचे युद्ध करते हैं।"

ऐसे उत्साह के वातावरण में १८ फरवरी १५१९ को जहाजी बेड़ा क्यूबा के तट से रवाना हुआ। पायलट अलवराडो जहाजों को सावधानी से चला रहा था। कैटोचे अन्तरीप को पार कर और कम्पेचे की खाड़ी के तट पर चलते हुए कोर्टेस अपने पांच सौ सैनिकों सहित उस स्थान पर उतरा जहां आज वेरा क्रूज़ का नगर है। वहां पर मन को हरा कर देने वाली हवा चल रही थी। कोर्टेज़ को इसकी क्या कल्पना थी कि वह जिस वीरान भूमि पर उतर रहा है वहां एक दिन समृद्धिशाली नगर बसेगा जो पूर्व और योरोप के व्यापार का केन्द्र होगा और नये स्पेन की व्यापारिक राजधानी होगा।

कोर्टेस ने एक नीरस विस्तृत मैदान में अपना डेरा डाला। उसके सैनिकों ने वृक्षों की डालियों और पत्तों से अपने रहने के स्थान को छायादार बना लिया जिससे सूर्य की तेज किरणों से अपने को बचा सकें। मैक्सिको निवासी इन गोरे लोगों को देखकर समुद्र तट पर आए और परों के बने लबादे और सोने के आभूषण बेचने के लिए लाये। कोर्टेस वहां के बादशाह महान जाम के लिए कुछ भेंट

आया था क्योंकि स्पेन वालों का यह विश्वास था कि वह देश लाखों लोगों द्वारा वर्णित महान सोने का देश है। उसने बाद की उन वस्तुओं को मक्सिको के राजा के पास भेजकर यह कहल-वाया कि वह स्पेन के बादशाह की ओर से आया है और उसके दरबार में उपस्थित होना चाहता है। मैक्सिको के निवासियों को यह सुन कर बहुत आश्चर्य हुआ कि संसार में उनके राजा के अलावा और भी कोई दूसरा राजा है जो उनके राजा जैसा शक्तिशाली है। वह मैक्सिको निवासी अपने राजा को ईश्वर की तरह पूजते थे। वह सोने के थालों में खाता था उसकी ओर कोई आंख उठाकर देख नहीं सकता था और न बिना आज्ञा बोलने का साहस ही कर सकता था।

उन मैक्सिको वासियों को जिन्हें कोर्टेस ने अपना दूत बनाकर राजा के पास भेजने का निर्णय किया उन्हें अपनी शक्ति का प्रभाव बताने के लिए कोर्टेस ने अपने सैनिकों को सैनिक अभ्यास करने की आज्ञा दी। नम रेती के मैदान पर स्पेन के सैनिकों ने जब अपना सैनिक अभ्यास करना आरम्भ किया तो मैक्सिकोवासी चकित हो गए। सैनिकों की मार्च हथियारों की चमक और बिगुल की तेज घनघोरी आवाज ने वहाँ के निवासियों को चकित कर दिया। किन्तु जब उन्होंने तोप दगने की भयंकर और डरावनी आवाज सुनी उनमें से गोलों और धुयें को निकलते देखा तो वे घबड़ा गए। क्योंकि यह दृश्य कभी जीवन में नहीं देखा था। जब पासे घने जंगल में वृक्षों की डालियों को झकझोरते हुए तेजी से फूटते तो सारा वन

प्रवेश करपरा जाता था।

उन मैक्सिको निवासी दूतों ने उस सारे दृश्य को कन्वैस पर पेंसिल से खींच लिया और उनके जहाजों का चित्र भी बना लिया जिन्हें वे 'जल गृह' कहते थे। यह चित्र उन्होंने अपने राजा को दिखाने के लिए बनाया था।

अब वे अपने राजा के पास आए और उन गोरे विदेशियों के अद्भुत कारनामों का राजा से वर्णन किया। उन्होंने अपने राजा को वह चित्र भी दिखलाया। मौनटेजुमा' मैक्सिको का राजा यह सब देखकर बहुत चकित हो गया। उसने स्पेनवासियों से मिलना अस्वीकार कर दिया। उसने सोचा कि उसकी राजधानी इतनी दूर है और मार्ग इतना दुर्गम है कि विदेशी वहां तक आने का साहस ही नहीं करेंगे। लेकिन बदले में उसने जो भेंट भेजी वह आश्चर्यजनक और अत्यन्त मूल्यवान थी। भेंट में गाड़ी के पहिए के बराबर सोने का सूर्य था और उससे भी बड़ा चांदी का चंद्रमा था। इसके अतिरिक्त सोने के खिलौने कुत्ते शेर चीते बंदर चिड़ियां तथा अन्य बहुत से खिलौने थे। कोर्टस ने निश्चय किया कि राजा चाहे कुछ कहे उस नगर को अवश्य देखना चाहिए कि जहां इतना अधिक सोना और चांदी है।

भला जिस आदमी ने हजारों मील की लम्बी और खतरनाक समुद्र की यात्रा की हो उसे इस छोटी स्थल यात्रा का क्या डर होता। कोर्टस ने वैरा-क्रूज पर अपना शिविर लगाकर मैक्सिको की मार्च की तैयारियां करना शुरू कर दीं। यद्यपि कोर्टस के साथियों

में सोने और चांदी का बेहद लालच था किन्तु वे उस लम्बी और अज्ञात देश की खतरनाक यात्रा से घबड़ा रहे थे। वे जानते थे कि वे मुट्ठी भर हैं और उनको शक्तिशाली समूचे देश से युद्ध करना होगा। सैनिकों में घबड़ाहट फैल गई। इसकी सूचना कोर्टेस को मिली। कोर्टेस में अदम्य साहस था। उसने दृढ़तापूर्वक एक जहाज को छोड़कर सब जहाजों में आग लगवादी। जहाजों के नष्ट हो जाने से सैनिकों में बेहद घबड़ाहट फैल गई और वे विद्रोह करने पर उतारू हो गए।

कोर्टेस ने कहा "मैंने अपना रास्ता चुन लिया है मैं यहां। तब तक रहूंगा कि जब तक मेरे साथ एक भी साथी रहेगा। यदि आपमें से कोई ऐसे कायर हैं जो इस शानदार और खतरनाक अभियान के खतरे से डर कर भागना चाहते हैं तो वह उस एक बचे हुए जहाज में बैठ लौट सकते हैं। वे खुशी उस एक बचे हुए जहाज में जा सकते हैं। वहां पहुंच कर वे यह बतला सकते हैं कि किस प्रकार वे अपने कमांडर व साथियों को छोड़कर भाग आए और वहां धैर्यपूर्वक उस दिन की प्रतीक्षा करते रहें जब हम मक्सिको की अटूट सम्पत्ति से भरे हुए जहाजों को लेकर लौटें।

कोर्टेस ने अपने साथियों के हृदय को ठीक जगह छू लिया। वे सभी सोने और चांदी के लिए आतुर थे। सोने और चांदी का लालच उन्हें यहां तक खींच कर लाया था। एक बार फिर उनकी आंखों के सामने सोने और चांदी के ढेर दिखलाई देने लगे। अपने नेता में उनका विश्वास पुनः जाग्रत हो गया और सभी एक स्वर

से चिल्लाए 'मैक्सिको चलो मैक्सिको चलो' इस प्रकार वह दल अपनी खतरनाक यात्रा पर चल पड़ा। १६ अगस्त १५१९ का दिन था जबकि इस छोटी सी सेना ने विजय की आशा और उत्साह को लेकर कूच किया। प्रारम्भ में मार्ग अत्यन्त सुन्दर देश में से होकर जाता था। सघन वन प्राकृतिक सौन्दर्य से भरा हुआ देश जहां रंग बिरंगी चिड़ियां उड़ती थीं जिनके पर धूप में हीरे की भांति चमकते थे उनकी यात्रा को मनमोहक बना रहा था। तब तक उन्हें किसी भी विरोध का सामना नहीं करना पड़ा। जो भी मैक्सिको निवासी उनके सामने पड़ते वे भौचक्के होकर उनसे दूर भाग जाते। मैक्सिको निवासी एक चिड़िया जैसी सांप को अपना देवता मानते थे। उसके बहुत से मन्दिर थे जिनमें उस देवता को प्रसन्न करने के लिए नर-बलियां दी जाती थीं। मैक्सिको निवासियों का विश्वास था कि वह देवता हवा को चलाता है बिजली चमकाता है और बादल बनाता है। लेकिन वह देवता एक दिन वह देश छोड़कर चला गया और यह कह गया कि वह कुछ समय के बाद गोरे चमड़ीवालों के साथ लौटकर समस्त देश पर अधिकार करेगा। यह किंवदन्ती और अन्धविश्वास फैला हुआ था। स्पेन के सैनिकों को देखकर मैक्सिको वासियों को विश्वास हो गया कि अब वह समय आ गया। उनका देवता फिर लौट आया है। जब गोरे स्पेन के सैनिक चमकते हुए जिरहबख्तर पहिने हुए चलते थे तो मैक्सिको-वासी समझते कि वे उनके देवता के साथी हैं और कोर्टेस को वे देवता ही मानते थे। कुछ मैक्सिकोवासियों का भी विचार था

अतएव जब कोर्टेस ने क्रास को उनके मन्दिरों में स्थापित किया तो उन्होंने उसका कोई विरोध नहीं किया।

बात यह थी कि मैक्सिको में देवता को नर बलि देने का रिवाज था। मैक्सिको में ऐजटेक्स जाति का शासन था। वे मैक्सिको नगर से जो समुद्र तट से दो सौ मील दूर था देश का शासन करते थे। ऐजटेक्स एक शक्तिशाली जाति थी। अपनी शक्ति के बल पर उन्होंने अपने से अधिक सभ्य जातियों को दबाकर उनपर अपना शासन स्थापित कर लिया था। उनका धर्म देवता पर नरबलि देने पर आधारित था। कोर्टेस जैसे जैसे आगे बढ़ता गया वैसे ही वैसे उसे यह अनुभव होता गया कि अन्य जातियां शासक जाति से घृणा करती हैं। फिर पुरानी किंवदन्ती कि देवता गोरे वर्ण लोगों के साथ मैक्सिको पर अपना अधिकार स्थापित करने आयेगा, से कोर्टेस को बड़ी सहायता मिली। बहुत सी शासित जातियों का सहयोग और सहायता उसको मिल गई।

कोर्टेस अब एक ऐसे स्थान पर पहुँच गया था कि जहां से मार्ग दुर्गम और पहाड़ी था। वहां के एक प्रभावशाली नेता ने स्पेन वासियों को अपना स्वामी स्वीकार कर लिया और उनकी सेवा में रहने लगा। अब रास्ता ऊँचे पहाड़ों की घाटियों में से जाता था। कहीं दस हजार फीट की ऊँचाई चढ़नी पड़ी तो कहीं नीचे ढाल। दूरी को पार करते हुए कोर्टेस ट्लैक्सकाला के ऊँचे मैदान में पहुंचा जो सात हजार फीट की ऊँचाई पर स्थित था। पंद्रह दिन की यात्रा करने के उपरान्त जब कोर्टेस ट्लैक्सकाला के ऊँचे मैदान में पहुँचा

तो वहाँ उसका घोर विरोध हुआ। बात यह थी कि वहाँ के निवास स्वतंत्रता प्रिय थे। मैक्सिको के शासक की प्रभुता को वे स्वीका नहीं करते थे। वे विकट योद्धा थे। अतएव कोर्टेस को वहाँ भयंक युद्ध करना पड़ा। वहाँ के निवासियों ने कोर्टेस के भक्तों से कह जिन्हें तुम देवता कहते हो हम उन्हें मारकर उनका मांस खायेंगे औ देखेंगे कि तुम जैसा कहते हो वे क्या उतने वीर हैं। भीषण यु हुआ कोर्टेस की विजय हुई। पराजित हो जाने के उपरान् ट्लैक्सकाला के निवासियों ने स्पेन की अधीनता स्वीकार कर लं और उनके सहायक बन गए।

कोर्टेस का उनके मुख्य नगर ट्लैक्सकाला में भव्य स्वाग हुआ। वहाँ मैक्सिको के राजा माण्टेजुमा का राजदूत आया। राजदूत साथ में बहुत मूल्यवान भेंट लाया था। राजा ने कहलाया कि वह स्पेन की अधीनता स्वीकार कर उसको कर देने के लिए इस शर्त पर तैयार है कि कोर्टेस आगे न बढ़े। कोर्टेस राजा की कमजोरी को जान गया इसलिए वह रुका नहीं आगे बढ़ता गया। जब वह चोलुला के समीप पहुँचा तो राजा के भड़काने से वहाँ के निवासियों ने कोर्टेस पर आक्रमण कर दिया। किन्तु कोर्टेस के मैक्सिकोवासी सहायकों और मित्रों ने पहले से ही सावधान कर दिया था। कोर्टेस सावधान था ही अस्तु युद्ध हुआ और चोलुला के बहुत से निवासी मारे गए। पराजित होकर उन्होंने स्पेन वालों की अधीनता स्वीकार कर ली। मैक्सिको की सेना जो नगर के बाहर जंगल में छिपी हुई थी षड्यंत्र असफल होते देख भाग खड़ी हुई।

चौलुला के पास ही एक जाग्रत ज्वालामुखी पर्वत था। कोर्टेस ने वहां के लोगों को प्रभावित करने के लिए कुछ सैनिकों को उस ज्वालामुखी पर्वत पर चढ़ने के लिए भेजा। धुआं पत्थर और भयंकर अग्नि की लपटों की परवाह न कर वे लोग पहाड़ के मुंह तक पहुंच गए। वहां से उनको आश्चर्यचकित कर देने वाला मैक्सिको नगर का दृश्य दिखलाई पड़ा। उन्होंने उस सम्पूर्ण झील को देखा कि जिसमें मैक्सिको नगर तथा अन्य नगर बसे हुए थे। स्पेनवासियों के ज्वालामुखी पहाड़ के मुंह तक चढ़ जाने से वहां के लोग उनसे बहुत प्रभावित हुए उन्हें विश्वास हो गया कि वे अवश्य देवता हैं।

कोर्टेस वहां से आगे बढ़ा। अब वह सारा प्रदेश दिखाई देने लगा। इस विजय यात्रा के इतिहासकार डियाज ने लिखा है 'जब हमने उस झील को देखा जिसमें मैक्सिको तथा अन्य नगर बसे हुए थे तो हम भौचक्के रह गए। हमें ऐसा लगा मानो हम स्वर्ग में पहुंच गए हैं और हमारे कुछ सैनिक तो यहां तक पूछने लगे कि क्या यह वास्तविक है? क्या हम स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं। किन्तु इतिहासकार को वास्तविक स्थिति का तुरन्त ज्ञान हो गया। उसने लिखा है कि जब हम उस आश्चर्यजनक नगर को देख रहे थे उस समय हम यह नहीं भूल सकते थे कि हम केवल चारसौ से भी कम सैनिक थे।" लेकिन कोर्टेस साहस के साथ आगे बढ़ा।

तीन महीने की दुर्गम यात्रा समाप्त हुई। कोर्टेस के सैनिक जब जुलाई में एक दिन प्रातःकाल मैक्सिको के समीप पहुंचे तो वे उस यात्रा के कष्ट और थकावट को भूल गए और हर्ष से चिल्ला

उठे यही वांछित भूमि मैक्सिको है'।

सैनिकों के सामने जो दृश्य था वह अद्भुत था। जल खेतों से लहलहाते मैदान वैभवशाली चमकते हुए नगर जिनमें सघन वृक्षों से भरी हुई सागाकार पहाड़ियां थीं ऐसी मनमोहक दिखलाई पड़ती थीं मानों कि वह परियों का देश हो। प्रत्येक पग पर सौन्दर्य बिखरा हुआ था और वह जल में बसा हुआ मैक्सिको नगर जिसमें चमकते हुए बुर्ज और महल बने हुए थे स्वर्ग की कल्पना सार्थक करता था। जब कोर्टेस मैक्सिको में पहुंचा तो उसकी सड़कों पर नगरवासी झुंड के झुंड उन गोरे परदेसियों को देखने के लिए इकट्ठे हो गए।

यदि मैक्सिकोवासियों की वह अपार भीड़ चाहती तो उन चार सौ स्पेनवासियों को समाप्त कर सकती थी किन्तु कोर्टेस के सैनिकों के साहस तथा उनकी धाक के कारण वे उन्हें कौतुक के साथ देखते रहे। जब कोर्टेस नगर की दीवार के पास पहुंचा तो स्वयं मैक्सिको का राजा मांटेजुमा उससे मिलने आया। उसके बहुत से सामन्त थे। उसके आगे आगे राज्य के ऊंचे अधिकारी सोने के दंड लिए चल रहे थे। सामन्त अपने कन्धों पर राजा की पालकी उठाए हुए थे। पालकी सोने की थी और हीरे जवाहरात जड़े होने के कारण दमक रही थी। जो सामन्त उसकी पालकी को उठाए हुए थे वे नंगे पैर थे और उनकी नजर जमीन पर थी। पालकी से उतर कर मांटेजुमा एक सुन्दर रत्नजटित शामियाने में गया। उसके लबादे तथा जूतों में नगे हीरे और मोती टंके हुए थे। कोर्टेस उतरा और उसने राजा का अभिवादन किया। उसके उपरान्त कोर्टेस ने

राजा को बतलाया कि उसका उद्देश्य वहां के निवासियों को ईसाई धर्म में दीक्षित करना है। उसके उपरान्त उसने स्पेन के शक्तिशाली बादशाह के बारे में चर्चा की। कोर्टेस ने मांटेजुमा से कहा कि वह अपने देवता की मूर्तियों को तोड़ दे और नरबलि को रोक दे। राजा ने कोर्टेस की इस बात को मानने से इन्कार कर दिया। कोर्टेस को बहुत गुस्सा आया किन्तु वह अपनी कमजोरी को जानता था। इतने बड़े नगर को जीतने के लिए उसके पास केवल चार सौ सैनिक थे। फिर भी वह गुस्से में चिल्ला उठा 'इस राजा को समाप्त कर देना चाहिए। इस जंगली को समझाना समय व्यर्थ खोना है। हमें इसको पकड़ लेना चाहिए और यदि यह विरोध करे तो इसके शरीर में तलवार घुसेड़ देनी चाहिए। परन्तु उस समय यह सम्भव नहीं था।

बात यह थी कि स्पेन वालों को मैक्सिको में रहने वाली जातियों की मित्रता और सहयोग प्राप्त हो गया था। इसका कारण यह था कि वे कोर्टेस को सूर्य का खोया हुआ पुत्र अपना देवता मानने लगे थे जो कभी लौटने वाला था। इस कारण कोर्टेस ने उनकी सहायता से धोखे से मैक्सिको के राजा मांटेजुमा को पकड़ लिया। उसके ईसाई बनने से इन्कार करने पर उसको पकड़ लिया और मरवा डाला। राजा के मरने पर कोर्टेस को कल्पनातीत सम्पत्ति हाथ लगी। वह ढेर के ढेर सोना मोती और हीरे जवाहरात अपने साथ ले गया। अगस्त १५२१ में कोर्टेस ने मैक्सिको पर स्पेन का झंडा फहरा दिया।

जब स्पेन के बादशाह को पता चला कि कोर्टेस ने मैक्सिको के विशाल साम्राज्य को स्पेन के लिए विजय किया है तो उसने कोर्टेस का बहुत सम्मान किया।

मैक्सिको विजय करके ही कोर्टेस चुप नहीं बैठा। उसने बहुत से अपने बहादुर समीपवर्ती समुद्र-तटों की खोज के लिए भेजे। कोर्टेस के खोजी उत्तर में प्रशान्त महासागर के तट तक पहुँच गए और अन्दर की ओर कैलीफोर्निया और टैक्सास की खोज निकाला। दक्षिण की ओर अलवरेडो ने ग्वाटीमाला की खोज निकाला। तीसरे दस्ते ने हांडुरास की खोज निकाला। हांडुरास में बहुमूल्य धातुओं की बहुत अधिक खानें थीं। तीन वर्ष के अन्दर कोर्टेस ने पनामा से मैक्सिको की उत्तरी सीमा तक समस्त देश पर अधिकार कर लिया। उस समय यह सारा विशाल प्रदेश नया स्पेन कहलाता था।



# आठवां परिच्छेद

## दक्षिण अमेरिका की खोज

कोर्टेज की सफलता और मैक्सिको की शानदार विजय ने नई दुनियां की खोज के लिए लोगों में बहुत अधिक उत्साह पैदा कर दिया। उस समय स्पेन के प्रत्येक युवक के हृदय में खोज की चाह जाग्रत हो गई थी। जो लोग वेस्ट-इंडीज में रहते थे वे तो सोने के देशों की खोज को सब कुछ छोड़ने को तैयार थे। सोने की चमक ने उन्हें अंधा कर दिया था। वे सोने की खोज में कहीं भी जाने को तैयार थे। जिस समय स्पेनवालों ने मैक्सिको पर अधिकार किया उसी समय मैगलान ने महासागर पार करके यह बतला दिया कि अमेरिका और एशिया के बीच में बहुत विस्तृत प्रशान्त महासागर फैला हुआ है। इस जानकारी का यह परिणाम हुआ कि स्पेन के लिए यह विचार दूर हो गया कि मसाले के द्वीप कहीं नजदीक ही हैं। अतएव स्पेनवासियों ने आगे मसाले के द्वीपों की ओर से अपना ध्यान हटा कर अमेरिका की ओर ही अपना ध्यान केन्द्रित कर दिया। अब हम पिजारो द्वारा स्पेन के बादशाह के लिए पेरू की खोज की कहानी का वर्णन करेंगे।

पिजारो बल्बाओ के साथ डैरियन तक गया था और उसके साथ ही उसने भी ऊँची चोटी से प्रशान्त महासागर के लहराते महासमुद्र को देखा था। बल्बाओ के साथ ही डैरियन के जलडमरूमध्य को पार कर वह दक्षिण समुद्र में पनामा तक पहुँचा था। वहाँ उसे मालूम हुआ कि दक्षिण में एक महान जाति निवास करती है। मैक्सिको की ही भाँति वह जाति बहुत सभ्य थी और उसके देश में सोने और चाँदी की प्रचुर खानें थीं। बहुत से साहसी खोजी उस नए धनी देश की खोज में निकल पड़ते परन्तु पनामा और पेरू के बीच एक अत्यन्त सघन और अंधेरा जंगल था। उस भयानक सघन वन को देखकर बड़े बड़े साहसियों का साहस भी समाप्त हो जाता था।

किन्तु पिजारो अत्यन्त साहसी और दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति था और उस असम्भव यात्रा को सम्भव बनाने के लिए कटिबद्ध था। आरम्भ में ही उसको असफलता मिली। १५२४ में वह एक जहाज पर सौ आदमियों को लेकर चला। उसे दक्षिणी समुद्र में नौका संचालन का अनुभव नहीं था। समुद्र तट पर रहने वाले इंडियन शत्रु थे। उसको समुद्र तट पर कोई सुरक्षा नहीं मिल सकती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि उसके आदमी एक एक करके मरते गए। पेरू का धनी देश जितना दूर वे समझते थे उससे बहुत अधिक दूर था। अन्त में भूमध्य रेखा के पास जब वे गालो द्वीप पहुँचे तो वे वहाँ पनामा से आने वाले और जहाजों तथा आदमियों की प्रतीक्षा में रुक गए। पिजारो को यह देखकर घोर निराशा हुई

कि अब केवल एक जहाज़ आया और उसमें सैनिक एक भी नहीं था। बात यह थी कि यात्रा की कठिनाइयों और विपत्तियों की खबर पनामा में फैल चुकी थी। इस कारण पेरू की खोज के लिए कोई भी जाने को तैयार नहीं था। पिज़ारो के साथ जो मुट्ठी भर लोग रह गए थे उनकी दयनीय दशा थी। उनके पास खाने को नहीं था। समुद्र तट पर जो कुछ मछली इत्यादि मिल जाती थी वे उसी पर गुज़र कर रहे थे। उन्होंने पिज़ारो से प्रार्थना की वह वापस लौट चले क्योंकि वे उस यात्रा की कठिनाइयों को अधिक सहन नहीं कर सकते थे। उस समय वह क्षण उपस्थित हुआ कि जब जन्म जात नेता के गुण प्रकट होते हैं। अपने साथियों की यह बात सुनकर पिज़ारो ने म्यान से तलवार निकाल ली और रेते में पूर्व से पश्चिम तक एक लकीर खींच कर उसने अपने साथियों से दक्षिण की ओर मुड़कर कहा "मित्रो उस ओर कठिन परिश्रम भूख नग्नता मौसम तूफ़ान और वर्षा तथा मृत्यु है और इस ओर आराम और सब है। उधर पेरू का अत्यन्त धनी देश है और इधर पनामा और उसकी निर्धनता है। मैंने अपना रास्ता चुन लिया है मैं दक्षिण की ओर जाऊँगा।"

ऐसा कह कर उसने उस रेखा को पार किया और बारह साहसी व्यक्ति उसके साथ चले। शेष साहसहीन थके हुए घर (पनामा) की ओर लौट गए। वह योद्धा का साहसी और दृढ़ निश्चय वाला दल आगे दक्षिण की ओर बढ़ा। केवल दो दिन की यात्रा करने के उपरान्त वे पेरू के तट पर पहुँच गए।

वहां के निवासियों से बात करने पर पिजारो को विश्वास हो गया कि यह देश धनवान है और वहां से अनन्त धन प्राप्त किया जा सकता है। यह जानकारी प्राप्त करके पिजारो शीघ्रता से पनामा की ओर लौटा। वहां से पिजारो स्पेन गया और स्पेन के बादशाह से उसने पेरू को विजय करने की आज्ञा प्राप्त की। पिजारो के इस अभियान में कोर्टेस ने बहुत आर्थिक सहायता दी।

फरवरी १५३१ में पिजारो के सेनापतित्व में तीन जहाज दक्षिण की ओर चल पड़े। उसके साथ १५ सैनिक और १६ घोड़े थे। पिजारो पेरू पहुँच कर तट पर उतर गया और १५३२ के पतझड़ के मौसम में अन्दर की ओर बढ़ा। 'कुजको' पेरू की राजधानी थी। उस पवित्र नगर में सूर्य का एक भव्य और विशाल मन्दिर था। नई दुनिया में ऐसी सुन्दर इमारत और दूसरी नहीं थी। किन्तु वहां का राजा वहां न रहकर 'कजामार्सिया' नामक स्थान में रहता था। अतएव पिजारो अपनी छोटी सी सेना के साथ उस ओर बढ़ा।

स्पेनवासियों के पेरू के तट पर उतरते ही समस्त देश में यह खबर फैल गई थी कि गोरे दाढ़ी वाले अजनबी लोग समुद्र से आए हैं जो कि चमकते हुए वस्त्र पहिने हैं विचित्र प्रकार के भयंकर पशुओं पर चढ़े हुए हैं और उनके पास घातक बिजली की कड़क पैदा करने वाले शस्त्र हैं।

कोर्टेस की भांति पिजारो ने भी मुट्ठी भर सैनिकों को लेकर पेरू के अन्दर प्रवेश किया। उसके हृदय में भी पेरू की अनन्त धन

सम्पत्ति को प्राप्त करने की लालसा थी। उसकी आँखों के सामने पेरू के राजा की समस्त धन सम्पत्ति की चकाचौंध थी और वह उस समस्त सम्पत्ति को प्राप्त करना चाहता था। परन्तु पिजारो और उसके लक्ष्य के बीच ऐन्डीज पर्वत माला के दुर्गम और ऊँचे पहाड़ों की दीवार थी। उन ऊँचे पहाड़ों पर बनी हुई स्पानो सर्प समान सी हुई दिखलाई देती थी। उन ऊँचे और तंग दर्रों में से पिजारो को जाना था। पहाड़ों का ढाल ऐसा भयानक था कि घुड़सवारों को घोड़ों से उतर कर खींच कर चलना पड़ता था और किसी तरह से वे घोड़ों को ऊपर चढ़ाते थे। उन पहाड़ों में भयंकर गहरे खड्ड थे और गगन चुम्बी चोटियाँ थीं। ऐसे दुर्गम मार्ग में चलते हुए बराबर यह आशंका थी कि पेरू के निवासी भारी संख्या में उन पर आक्रमण करके कहीं उन्हें बिल्कुल समाप्त न कर दें। वहाँ भयंकर शीत था। जैसे जैसे वे लोग ऊपर चढ़ते जाते थे शीत अधिक होता जाता था। साहस के साथ पिजारो और उसके सैनिक चढ़ते चढ़ते चोटी पर पहुँच गए। वहाँ से उतार आरम्भ हुआ जो बहुत ही खतरनाक था। सात दिन लगातार उतरते रहने के उपरान्त वे ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ से कजामालेका की सुन्दर घाटी का मनोरम दृश्य दिखलाई पड़ता था। उस मनोरम घाटी में वह प्राचीन नगर सूर्य की रोशनी में चमक रहा था। किन्तु शीघ्र ही स्पेनवासियों का हृदय निराशा से भर गया। उन्होंने देखा कि मीलों तक पेरू की सेना के तम्बू गड़े हैं। पिजारो इसके लिए तैयार नहीं था। परन्तु अब वापस लौटने का कोई रास्ता भी न था। अतएव पिजारो ने यही

निश्चय किया कि अब तो जान पर खेल कर आगे ही बढ़ना चाहिए। पेरू की सेना ने स्पेनवासियों को देख लिया था। इसका कारण यह था कि पिजारो के सैनिक स्पेन का झंडा लिए हुए और जिरहबख्तर पहने हुए थे जो सूर्य की रोशनी में चमक रहे थे। जब स्पेन की सेना पेरू की सेना के समीप पहुँची तो पेरू का बादशाह जो जवाहरातों से लदा हुआ था एक सोने के सिंहासन पर बैठा हुआ तीस हजार सेना के साथ उनसे युद्ध करने चला। बड़ा भयंकर समय था। पिजारो समझ गया कि मृत्यु नजदीक है क्योंकि तीस हजार सेना के सामने डेढ़ सौ सैनिक क्या कर सकते थे। उसकी समझ में आ गया कि बचने का एक ही रास्ता है कि राजा को किसी प्रकार पकड़ लिया जावे। उसने अपनी सेना को संकेत किया और सेना ने बादशाह के सिंहासन पर आक्रमण कर दिया। भयंकर युद्ध हुआ परन्तु बादशाह पकड़ा गया। पेरू के बादशाह ने सोना देकर अपना छुटकारा कराना चाहा। वह जानता था कि यद्यपि स्पेनवासी अपने धर्म को फैलाना चाहते हैं और उसके लिए उनके मन में उत्साह है परन्तु वे उससे भी अधिक सोने के लालची हैं। उसने पिजारो से कहा कि मैं उस कमरे को जिसमें मैं कैद हूं उतनी ऊंचाई तक सोने से भर दूंगा जहां तक मेरा हाथ पहुंचता है। उसने खड़े होकर दीवार पर निशान कर दिया। राजा के आदमी महलों से सोना लाकर उस कमरे को भरने लगे। जब सोना आ गया तो पिजारो ने राजा को मार डाला। ऐसा घृणित विश्वासघात स्पेनवाले ही कर सकते थे। इतिहास के पन्नों में

स्पेन वालों का यह कुकृत्य सदैव उनके लिए घोर लज्जा की बात बना रहेगा। पिजारो को लगभग ३ लाख पौंड के मूल्य का सोना मिला।

राजा के मारे जाने के उपरान्त पेरू के लोगों का साहस समाप्त हो गया। पिजारो को पेरू विजय करने में फिर कोई कठिनाई नहीं हुई। भयभीत पेरू निवासी उन्हें अभी पुण्य सूर्य के पुत्र मानने लगे।

एक वर्ष सूर्य के ये पुत्र स्पेनवासी पेरू की राजधानी कुजको में घुसे। वहां उन्हें इतना खजाना मिला जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। परन्तु वहां पहुंचने पर पिजारो को अपने ही देशवासी प्रसिद्ध योद्धा अलमागरो से युद्ध करना पड़ा। बात यह थी कि अलमागरो ने चाइल के समुद्र तट की कई सौ मील भूमि पर अधिकार कर लिया था। वह चाइल के भीतरी भाग में प्रवेश करना चाहता था किन्तु वहां इतनी अधिक ठंड थी कि उसके आदमी और घोड़े भयंकर शीत के मारे मरने लगे। इसके विरुद्ध चाइल निवासी जान हथेली पर रखते थे और बड़े लड़ाकू थे। इस कारण उन पर विजय प्राप्त करना आसान नहीं था। अलमागरो का मानना यह था कि मैंने इस क्षेत्र को पहले खोजा है इस कारण कुजको उसका है। उधर पिजारो का मानना यह था कि पेरू के राजा को उसने मार कर पेरू विजय किया है इस कारण पेरू की राजधानी कुजको उसका है। बात यह थी कि दोनों की आंख कुजको की अपार सम्पत्ति पर लगी हुई थी। एक ही देश के निवासी

होने पर भी वे दोनों लालची खोजी भिड़ गए। इस युद्ध में अलमाग्रो मारा गया।

अब पिजारो ने कुज्को को मनमाना लूटा। पेरू का समस्त सोना जब जहाजों में भर भर कर स्पेन पहुँचने लगा तो स्पेन में हलचल मच गई। हर एक युवक सोने के ढेरों की खोज में निकल पड़ा। वे अमरीका पहुँचने लगे और वहां से नई दुनिया के विभिन्न भागों में सोने की खोज में जाने लगे। सोने की खोज में उन्होंने वहां के निवासियों के साथ बहुत निर्दयता का व्यवहार किया। उनका सोने के लिए इतना गहरा लालच और उनकी क्रूरता को देखकर वहां के निवासियों को उनसे गहरी घृणा हो गई। इस सम्बन्ध में एक कहानी बहुत ही मनोरंजक है। आदिवासी इंडियनों ने कुछ स्पेनवासियों को पकड़ लिया। उनके हाथ पांव बांध कर उन्हें जमीन पर गिरा दिया और सोना पिघला कर उनके मुंह में डाला और कहा "ऐ ईसाइयो सोना खाओ।"

उस समय दक्षिण अमेरिका की खोज करने के लिए बहुत से खोजी निकल पड़े थे। उनमें एक ओरेलाना था। उसने पिजारो के एक भाई के साथ सिनामन के सघन वनों की यात्रा की थी और ऐन्डीज पर्वत माला को अन्य स्वर्ण प्रदेशों की खोज में पार किया था। पिजारो ने यह अभियान तीन सौ पचास स्पेनवासियों और चार हज़ार आदिवासी इंडियनों को लेकर १५४० में किया था। वह चाहता था कि उस महाद्वीप के सुदूर भीतरी भाग को भी खोज निकाले। यह यात्रा अत्यन्त कष्टदायक और भयानक थी। भीषण

तूफान और भूकम्प के कारण मनुष्य और पशु सभी घबड़ाए हुए थे। भूकम्प आता पृथ्वी फटती और सैकड़ों घर उसके अन्दर समा जाते। वहां मूसलाधार वर्षा होती और इतनी भयंकर बाढ़ आती कि रास्ते बंद हो जाते। ऐन्डीज की ऊंची पर्वतमाला को पार करते हुए ठंड इतनी अधिक थी कि शीत के कारण मनुष्य और घोड़े मर जाते। सारी कठिनाइयों को सहते हुए स्पेनवासियों का दल एक नदी के पास पहुँचा जिसके पार सोने का देश था। उनके पास खाने पीने की सब सामग्री चुक गई थी। वे जंगली फलों पर गुजर कर रहे थे। कुछ दूर तक नदी के किनारे किनारे चलने के बाद पिजारो ने एक नाव बनाने का निश्चय किया जिससे कि वह नदी के द्वारा भोजन सामग्री की तलाश कर सके। पिजारो और उसके मुख्य सहायक ओरेलाना ने सब आदमियों को काम पर लगा दिया। वे दोनों भी नाव बनाने में जुट गए। उन्होंने नावों में लगाने के लिए कीलें बनाने को भट्ठी तैयार की और उसमें लकड़ी के कोयले से लोहा गलाने का प्रयत्न किया। वर्षा अधिक होने से कोयले को जला सकना एक अत्यन्त कठिन काम था। उन्होंने घोड़ों के नालों से कील बनाईं जिनको भोजन के लिए मार कर खा लिया गया था। तारकोल की जगह उन्होंने पेड़ों से निकाले हुए गोंद को काम में लिया। इस प्रकार उस नाव को बनाकर उन्होंने नदी में उतार दिया। चार सौ मील तक वे नदी की धारा में चलते रहे। किन्तु इस प्रदेश में जंगली फलों तथा कन्दों की कमी होती गई और आदमी भूख से मरने लगे। अतएव पिजारो ने ओरेलाना को आज्ञा दी कि

वह पचास आदमियों को साथ लेकर शीघ्रता से नदी की धारा के साथ जावे और उस प्रदेश से जिसके बारे में उसने सुन रक्खा था भोजन सामग्री नाव में भरकर ले आवे।

ओरेलाना नदी में नीचे की ओर चल पड़ा किन्तु उसे कोई गांव या खेत नहीं मिले। सघन वनों तथा जलमग्न मैदानों के अतिरिक्त उसे और कुछ नहीं दिखलाई दिया। वह नदी वास्तव में एक बहुत बड़ी नदी की सहायक नदी मात्र थी। वास्तव में यह अमेजन का महानद था। ओरेलाना ने उस महानद में जाने का निश्चय किया। उसने पिजारो को छोड़ दिया। बात यह थी कि उसके आदमी बहुत थक चुके थे। जलधारा इतनी तेज थी कि उसके विरुद्ध उल्टे लौटना उनके लिए सम्भव नहीं था और वहां कोई भोजन सामग्री भी नहीं थी जिसे वे अपने भूखे और दुखी साथियों के लिए ले जा सकते। साथ ही इस बात की भी सम्भावना थी कि वे सोने के उस देश में पहुंच जावें जिसकी कि वे खोज कर रहे थे। उसके साथियों में से कई ने ओरेलाना के इस व्यवहार का अर्थात् अपने पीछे छूटे हुए साथियों के साथ विश्वासघात करने का घोर विरोध किया। ओरेलाना ने उन विरोधियों को घने जंगल के किनारे भूखा मरने के लिए उतार दिया और वह आगे बढ़ गया।

३१ दिसम्बर १५४ को खाने को कुछ नहीं रहा। उन्होंने अपने जूतों और काठियों को कुछ जंगली जड़ी बूटियों के साथ उबाला और खाया और सोने के देश की खोज में चल पड़े। इस नदी की यात्रा में ओरेलाना तथा उसके आदमियों को बड़ी विपत्तियों

और कष्टों का सामना करना पड़ा। जब वे उस तेज नदी में अपनी नाव खे रहे थे तो उन्हें वहां के आदिनिवासी इंडियनों से युद्ध करना पड़ा। उन्हें एक नई नाव बनानी पड़ी। कल्पनातीत कठिनाइयों का सामना करते हुए वे अन्त में अगस्त १५४१ में खुले समुद्र में पहुंच गए। वे दो हजार मील के लगभग नदी में चल चुके थे। उन्होंने यहां घास के रस्से बनाए और कम्बलों के पाल बनाए और खुले समुद्र में चल पड़े। कुछ दिनों के उपरान्त वे पश्चिमी द्वीप समूह के एक द्वीप में पहुंच गए।

पिजारो ओरेलाना की प्रतीक्षा करते करते जब थक गया तो दुःखी होकर वापस लौट गया। वह दो वर्ष के बाद पेरू लौटा। उसके साथ चार हजार तीन सौ पचास व्यक्ति इस यात्रा पर गए थे उनमें से केवल अस्सी व्यक्ति जीवित लौटे। शेष मर गए।

सोलहवीं शताब्दी के मध्य तक स्पेन तथा पुर्तगाल के साहसी खोजी पृथ्वी के विभिन्न भागों की साहस भरी यात्राएं करते रहे और अपने अपने देशों को धन दौलत से भरते रहे। उस समय तक इन भौगोलिक खोजों का एक मात्र कार्य इन दो देशों ने ही किया। सोलहवीं शताब्दी के मध्य के उपरान्त अन्य देशों ने भी इस ओर ध्यान दिया।



# नवा परिच्छेद

## अंग्रेजों का खोज अभियान

इङ्गलैंड अब सोतेसे जाग पड़ा था। होड़ की दौड़ में वह बहुत पीछे रह गया था। मसाले के द्वीपों पर अधिकार जमाने का समय निकल गया था। भारत की खोज में वह पिछड़ गया था आशा अन्तरीप को ढूंढ निकालने में वह पीछे रह गया था और नई दुनिया को ढूंढने में भी वह बहुत पिछड़ गया था। पुर्तगाल वालों का पूर्व के मार्ग पर अधिकार था और स्पेन वालों का मसाले के द्वीपों को पहुंचने वाले पश्चिमी मार्ग पर अधिकार था और वे सभी मार्ग कैथे ( चीन ) को जाते थे। इङ्गलैंड उस स्वर्णिम और धन धान्य से पूर्ण कैथे ( चीन ) देश के लिए उत्तरी मार्ग की खोज क्यों न करे ?

ब्रिस्टल के निवासी मास्टर थार्न जो कैबट का मित्र था के मन में यह विचार उठा कि यदि उत्तर में समुद्र नौकावहन के उपयुक्त हो तो मसाले के द्वीपों तक पहुंचने के लिए पुर्तगाल और स्पेन की अपेक्षा छोटा रास्ता ढूंढ निकाला जा सकता है।

कुछ लोगों ने शंका प्रकट की कि उत्तरी समुद्र बर्फ से जमे

रहते हैं और उत्तर के प्रदेश इतने ठंडे हैं कि वहां कोई व्यक्ति रह ही नहीं सकता।

पार्री ने साहस के और वीरता के साथ उत्तर दिया — दुनियां का कोई भाग ऐसा नहीं है जिस पर मनुष्य न रह सके और न कोई ऐसा समुद्र है जिसमें जहाज न चल सकें।

इस दृढ़ विश्वास तथा वीरता और साहस से परिपूर्ण मनोवृत्ति को लेकर इंग्लैंड इस खोज अभियान में उतरा और उत्तर के कठिन मार्गों की खोज प्रारम्भ की। एडवर्ड छठवें के शासनकाल में एक कम्पनी मर्चेंट ऐडवेंचरर्स के नाम से स्थापित की गई जिसका उद्देश्य नये देशों की खोज निकालना था। उसका प्रथम गवर्नर कैबट था जिसने न्यू-फाउंडलैंड को ढूंढ निकाला था। १५५३ में इस कम्पनी ने तीन छोटे जहाज सर ह्यू-विलोग्बी तथा रिचार्ड चैंसलर के नेतृत्व में उत्तरी समुद्र की खोज के लिए भेजे। वे अपने साथ इंग्लैंड के शासक बादशाह के दुनिया के सभी देशों के बादशाहों और नरेशों के नाम पत्र लेकर चले थे।

सर ह्यू-विलोग्बी एक साहसी और बहादुर महापुरुष था। उसने 'बोना ऐस्परेंजा' नामक एक सौ बीस टन के बोझे से जहाज पर इंग्लैंड का राष्ट्रीय ध्वज फहराया। दूसरे जहाज पर रिचार्ड चैंसलर था जिसको लोग बड़ी श्रद्धा और आदर से देखते थे। उन लोगों को उत्तरी भाग से चीन तक पहुंचने के बारे में ऐसा गहरा विश्वास था कि उन्होंने अपने जहाजों पर सीसे का हल्का पेंट करवा लिया जिससे कि गरम देशों के कीड़े जहाज को नुकसान न पहुंचा सकें।

सब तैयारी हो जाने पर ९ मई का दिन यात्रा प्रारम्भ करने के लिए निश्चित हुआ। यात्रा करने वाले दल में जितने भी लोग थे सभी अपने स्वजनों और प्रेमियों से मिल रहे थे। बड़ा ही करुणापूर्ण दृश्य था। पत्नियां पतियों को विदा कर रही थीं बहिनें भाइयों को और माता पिता पुत्रों को आशीर्वाद दे रहे थे। सभी निश्चित दिन तैयार थे। सभी जहाजों में सवार होकर ग्रीनविच पहुंचे जहां उस समय बादशाह का दरबार था। दरबारी तथा अन्य साधारण लोग सभी उन खोजियों को देखने के लिए झुंड के झुंड समुद्र तट पर पहुंचे। समुद्र तट पर अपार भीड़ थी। लोग इमारतों पर चढ़े हुए अपने साहसी देशवासियों को देख रहे थे। अपने देशवासियों को इतने उत्साह से उनको विदाई देते देखकर नाविकों में उत्साह की लहर फैल गई और उन्होंने अपनी ओर से जयघोष किया कि आकाश गूंजने लगा। किन्तु राजा एडवर्ड बीमार होने के कारण उस उत्सव में सम्मिलित न हो सका।

ज्वार के साथ जहाज वुलविच तक आए और फिर इंगलैंड के पूर्वी तट के किनारे किनारे चलने लगे। अंत में अनुकूल वायु के साथ उन्होंने अपने पाल खोल दिए और खुले समुद्र की ओर बढ़ चले। अपनी मातृभूमि को अन्तिम नमस्कार करते हुए सबों की आंखों में आंसू आ गए। स्वयं रिचार्ड चैंसलर के मुख पर उदासी छा गई क्योंकि वह पीछे अपने दो छोटे बच्चे छोड़ आया था। सभी को इस बात की आशंका थी कि क्या वे फिर अपनी मातृभूमि के दर्शन कर सकेंगे।

तीनों जहाजों ने जुलाई के मध्य तक उत्तरी समुद्र को पार कर लिया, और वे नार्वे के समीप पहुँचे। नार्वे के समीपस्थ द्वीपों में तथा छोटे छोटे समुद्री तट में होकर वे आगे बढ़ने लगे। उत्तर में आगे बढ़ते हुए विलोबी अपने जहाजों को लोफोटन द्वीपों के पास ले गया। यह द्वीप डेनमार्क के राजा के अधिकार में थे और वहां घनी आबादी थी। चलते चलते यह तीनों जहाज उत्तरी अन्तरीप को भी पार कर गए।

उत्तरी अन्तरीप को पार करते ही समुद्र भयंकर हो उठा। समुद्र इतना प्रबल और भयानक हो गया कि जहाज अपने निर्धारित मार्ग पर नहीं चल सके। एक जहाज एक ओर तो दूसरा जहाज दूसरी ओर बह गया। यह समय अत्यन्त खतरे का था। [illegible] विलोबी ऊपर डैक पर खड़ा था। चारों ओर समुद्र घोर गर्जन कर रहा था। फिर भी उसने रिचार्ड चैंसलर से चिल्ला कर कहा कि वह प्रयत्न करे कि उसका जहाज उससे दूर न चला जावे। परन्तु समुद्र का वेग इतना अधिक था कि जहाज को निर्धारित मार्ग पर चला सकना सम्भव नहीं था। जहाज पत्तों की तरह उड़ रहे थे। सब प्रयत्न व्यर्थ हुआ और ये दोनों छोटे जहाज एक दूसरे से पृथक हो गए और फिर कभी नहीं मिले। विलोबी का जहाज हवा के भयंकर वेग से 'नोवा-जेम्बला' की ओर चला गया।

मौसम जाड़े का भयंकर शीत पड़ रहा था। अतएव विलोबी ने लापलैंड की भूमि पर जाड़े में रहने का निश्चय किया। उसने अपने आदमियों को उस प्रदेश की खोज के लिए भेजा किन्तु

आबादी का कोई भी चिन्ह नहीं मिला। उस प्रदेश में भालू लोमड़ी तथा अनेक प्रकार के अन्य पशु तो थे किन्तु मनुष्य का नाम भी नहीं था। जैसे जैसे जाड़ा अधिक पड़ने लगा बर्फीली हवाएं चलने लगीं समस्त प्रदेश वीरान तो था ही अब बर्फ से भी ढक गया। उस जमा देने वाले शीत में उन मुट्ठी भर अंग्रेजों ने लैपलैंड के उस बर्फीले प्रदेश में किस प्रकार अपने दिन काटे कोई नहीं जानता। जनवरी १५५४ में विलोबी जीवित था उसके बाद कोई कुछ नहीं जानता। सब समाप्त हो गया। उन साहसी खोजियों ने अपना जीवन समर्पित कर दिया।

उधर रिचार्डसन की खबर लें जिसका जहाज विलोबी से दूर भटक गया था। रिचार्डसन जब दूर भटक गया तो बहुत दुखी हो गया। परन्तु फिर भी वह साहस के साथ उस अनजाने प्रदेश की ओर बढ़ता गया। चलते चलते वह उस स्थान पर पहुँचा जहां कि रोशनी नहीं थी। परन्तु वहां निरन्तर सूर्य की रोशनी और चमक उस विस्तृत समुद्र पर बिखरी रहती थी। एक बड़ी खाड़ी को देखकर अपने जहाज को लेकर वह उसमें घुसा और उसने वहां अपना लंगर डाल दिया। वह रूस का उत्तरी प्रदेश था और वह श्वेत सागर में पहुँच गया था। वहां उसने मछुओं से मित्रता स्थापित कर ली। मछुए अंग्रेजों के भीमकाय जहाजों को देखकर पहले तो इतने भयभीत हो गए कि वे उन्हें देखते ही भाग खड़े हुए। परन्तु थोड़ी ही देर बाद उनमें विदेशियों के प्रति विश्वास उत्पन्न हुआ और वे उनके पैरों में गिर कर उनके पैरों का चुम्बन करने

लगे। रिचार्ड ने उनको बड़े स्नेह से उठाया और इशारों तथा भाव-भंगिमा से उन्हें आश्वस्त किया कि हम तुम्हें पकड़ने या मारने नहीं आए हैं। हम तुम्हारे मित्र हैं। आश्वस्त हो जाने पर वे लोग इन अजनबी मेहमानों के लिए भोजन सामग्री लाए।

इसके उपरान्त वे मछुए अपने राजा के पास यह सूचना देने गए कि एक विचित्र जाति के लोग आए हुए हैं जो बहुत ही सज्जन और शालीन हैं।

यह सूचना मिलने पर मस्कोनवाई अर्थात् रूस के राजा ने रिचार्ड को मास्को बुला भेजा। यह यात्रा बिना पहिए की गाड़ियों ( स्लेज ) के द्वारा बर्फ पर हुई। यह यात्रा भी बड़ी कठिन और थका देने वाली थी क्योंकि मार्गदर्शक रास्ता भूल गया और लगभग डेढ़ हजार मील की लम्बी और कष्टदायक यात्रा करने के उपरान्त रिचार्ड चैंसलर मास्को पहुंचा। मास्को उस देश की राजधानी और मुख्य नगर था। यह इतना बड़ा था जितना कि लंदन अपने उप नगरों सहित बड़ा था। जब रिचार्ड चैंसलर राजा के महल के समीप पहुंचा तो उसकी सौ ऐसे दरबारियों ने जो सोने के वस्त्र पहिने थे अगवानी की। राजा एक बहुत ऊंचे सिंहासन पर बैठा था। उसके सर पर सोने का मुकुट था और हाथ में एक तलवार थी जिसकी मूठ में हीरे और जवाहरात जड़े थे। रिचार्ड तथा उसके साथियों ने राजा का अभिवादन किया और अपने राजा का पत्र दिया। राजा ने एडवर्ड छठे का पत्र बड़े चाव से पढ़ा। उस समय रिचार्ड को यह ज्ञात नहीं था कि बालक राजा मर चुका था और उसकी बहिन मेरी

सिंहासन पर थी। राजा ने उन अंग्रेजों की लम्बी दाढ़ियों में बहुत रुचि दिखाई। इसका कारण था कि रूस में यह मान्यता थी कि लम्बी मोटी और पीले रंग वाली दाढ़ी भगवान का प्रसाद है।

राजा ने एडवर्ड छठे के नाम एक पत्र दिया और उसमें इंगलैंड को रूस से व्यापार करने की आज्ञा थी। रूस से विदा होकर रिचार्ड चैंसलर सकुशल स्वदेश लौट आया। उसने रूस का विवरण देशवासियों को सुनाया। इससे मर्चेंट एडवेंचरर्स को उत्साह उत्पन्न हुआ और कम्पनी ने इस बार अधिक जहाज उस महान देश से व्यापार बढ़ाने के लिए भेजे जिसके बारे में वे कुछ भी नहीं जानते थे।

इस बार उस जहाजी बेड़े का नेता ऐन्थनी जैनकिन्सन चुना गया। जैनकिन्सन एक दृढ़ निश्चय वाला और चतुर व्यक्ति था। वह चार अच्छे और मजबूत बड़े जहाजों को लेकर १२ मई १५५७ को रूस की ओर चल पड़ा। वह ३ री जुलाई को उत्तरी अन्तरीप पहुंचा। कुछ दिनों के उपरान्त वह उस स्थान पर पहुंचा जहां ह्यू-विलोबी तथा उसके साथी भयंकर शीत में ठिठुर कर मर गए थे। उसने सेंट निकोलस खाड़ी में लंगर डाला वहां से उसने स्लेज गाड़ी ली और मास्को गया। वहां उसने रूस के राजा को महारानी का पत्र दिया। उस समय समस्त देश बर्फ से ढका हुआ था। इस कारण वह उस समय यात्रा नहीं कर सकता था। गर्मी आने पर एप्रिल १५५८ में वह मास्को से दक्षिण की यात्रा के लिए चल पड़ा। बात यह थी कि उसकी कम्पनी की आज्ञा थी कि वह कैथे (चीन)

का स्थल मार्ग खोजने का प्रयत्न करे। जैनकिन्सन ने रूस के राजा से उन सभी देशों के राजाओं के नाम परिचयपत्र ले लिए जिनके देश में से होकर उसको जाना था। जैनकिन्सन मास्को से चला गया और वहां से उसने एक रूसी सेनापति के साथ नदी द्वारा दक्षिण की ओर यात्रा की। वह रूसी सेनापति दक्षिण में अस्त्रा-खान की सेना का संचालन भार लेने के लिए जा रहा था। अतएव उसके साथ पांच सौ नावें थीं जिनमें सैनिक सनिक सामग्री भोजन सामग्री तथा व्यापारी माल लदा हुआ था। इस कारण इस यात्रा में जैनकिन्सन को कोई कष्ट नहीं हुआ।

तीन महीने लगातार यात्रा करने पर और एक हजार दो सौ मील की यात्रा करने के उपरान्त जैनकिन्सन दक्षिण में पहुंच गया। अस्त्राखान नगर में व्यापार की कोई आशा या सम्भावना न देखकर जैनकिन्सन ने साहस के साथ निश्चय किया कि वह कैस्पियन समुद्र तक चास्मा में नौकावाहन करे और देखे कि क्या आगे चीन (कैथे) का मार्ग मिल सकता है। उससे पहिले कभी भी कैस्पियन समुद्र में कोई भी जहाज इंगलैंड की राष्ट्र ध्वजा को फहरा कर तथा अंग्रेजी नाविकों द्वारा संचालित होकर नहीं आया था। यह पहला अवसर था कि इंगलैंड के नाविकों ने कैस्पियन समुद्र में नौका संचालन किया था। हवा विरुद्ध थी और वायु का वेग बहुत अधिक था। अतएव तीन सप्ताह तक लगातार तेज विरोधी वायु से युद्ध करते रहने के बाद जैनकिन्सन कास्पियन समुद्र के पूर्वी तट पर पहुंचा। वहां उसने एक हजार ऊंटों का कारवां इकट्ठा किया और आगे चल दिया।

जब जेनकिन्सन कास्पियन समुद्र के पूर्वी तट पर उतरा तो उसे शीघ्र ही पता चल गया कि वह चोरों और डाकुओं के देश में पहुँच गया है। वह वहाँ के सुल्तान से मिलने गया जो स्वयं एक प्रसिद्ध डाकू था। उस तातार सुल्तान ने जेनकिन्सन की आवभगत की और उसको जंगली घोड़े का मांस तथा घोड़ी का दूध खाने के लिए दिया।

वहाँ से वह छोटा अंग्रेजों का दल चल पड़ा। तीन सप्ताह तक वे वीरान देश में यात्रा करते रहे। यहाँ न तो नदियां थीं न गांव थे और न कोई आबादी ही थी। तीन सप्ताह की कठिन यात्रा के बाद वे आमनस नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपने को ताजा किया और थोड़ा विश्राम किया। एक दिन खूब मनोरंजन करके वे लोग फिर आगे चल दिये। सौ मील उस नदी के किनारे किनारे चलने के बाद उन्हें फिर एक बहुत बड़ा रेगिस्तान मिला। यहाँ उन पर फिर डाकुओं ने आक्रमण किया।

बड़े दिन के समीप वे लोग बुखारा पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्हें ज्ञात हुआ कि वहाँ के सौदागर इतने निर्धन थे कि उनसे अधिक व्यापार की कोई आशा नहीं हो सकती थी। यद्यपि वहाँ भारत तथा सुदूर पूर्व से बहुत से कारवां आए हुए थे। वहाँ पहुँच कर जेनकिन्सन को पता चला कि भीषण युद्धों के कारण चीन का मार्ग रुका हुआ है। जाड़ा आ रहा था अतएव जेनकिन्सन वहाँ कुछ महीने रुक गया। वहाँ से ६ ऊंटों का कारवां लेकर वह कास्पियन समुद्र की ओर लौटा। कास्पियन समुद्र से वह मास्को की ओर बढ़ा और दो सितम्बर को वह मास्को पहुँचा। उसने मास्को में रूस के राजा से

फिर जेड की और शीशे की कुछ वस्तुएं राजा को समर्पित कीं। जिन्हें पाकर वह बहुत प्रसन्न हुआ। कैवेन्डिश जावा में कुछ समय रुका और फिर इंगलैंड पहुंचा।

इंग्लैंड अब पूर्व में अपने पैर बढ़ा रहा था। उत्तर प्रतीप समुद्र के मार्ग से पूर्व तक पहुंचने में इंगलैंड असफल हो गया। अतएव महारानी एलिजेबेथ ने लेवेंट कम्पनी को १५८१ में स्थल मार्ग से पूर्व से व्यापार करने का एकाधिकार प्रदान कर दिया।

उस समय जो लोग भारत की यात्रा करते थे वे स्थल मार्ग द्वारा अलेप्पो जाते थे और रेगिस्तान को पार कर युफ्रेटीज नदी के किनारे जहां पहले बैबीलोन बसा था वहां पहुंचते थे अथवा बड़े रेगिस्तान को पार कर बसरा पहुंचते थे।

१५८ में जान न्यूबेरी पहला अंग्रेज था जो इस यात्रा के लिए गया। 'हरमुज' पहुंचकर उसने वहां व्यापार की सम्भावनाओं का अध्ययन किया। वहां से वह बन्दर अब्बास पहुंचा। वहां से देश को लौटते हुए वह ईरान गया और वहां के सुन्दर नगर इस्फहान शीराज और तबरिज होता हुआ तुर्की की राजधानी कॉन्स्टैनटिनोपिल पहुंचा। वहां से पोलैंड होता हुआ वह इंगलैंड पहुंचा।

१५८३ में नई कम्पनी की अधीनता में न्यूबेरी ने एक महत्त्वपूर्ण खोज अभियान का नेतृत्व स्वीकार किया। वह लंदन से चला और अलेप्पो पहुंचा। वहां उसके दल के दो सदस्य व्यापार के लिए रुक गए। न्यूबेरी फिच तथा दो अन्य व्यापारी आगे बढ़कर हरमुज पहुंचे। वहां के पुर्तगीज गवर्नर ने उन्हें कैद कर लिया और बंदी

की भांति गोआ भेज दिया। किसी प्रकार पुर्तगाल वालों की कैद से छूटकर वे दोनों आगरा पहुंचे और न्यूबेरी ने महारानी ऐलीजेबेथ का पत्र सम्भवतः अकबर को दिया। वहां से वह इंगलैंड की ओर लौटा परन्तु वह इंगलैंड नहीं पहुंचा और सम्भवतः रास्ते में ही मर गया। फिच भारत में ही रहा और उसने यहां का जो वर्णन लिखा है उससे भारत के तत्कालीन वैभव का पता चलता है।

आगरा और फतहपुर सीकरी का जो वर्णन उसने लिखा है वह पढ़ने योग्य है। आगरा और फतहपुर सीकरी दो बहुत बड़े नगर हैं। दोनों नगर लंदन से बहुत बड़े हैं और यहां की जनसंख्या लंदन से बहुत अधिक है। यहां फारस तथा अन्य देशों के व्यापारी आकर व्यापार करते हैं। इन दोनों नगरों में हीरे-जवाहरात और मोती का बहुत अधिक व्यापार होता है। इसके अतिरिक्त रेशम और वस्त्र का भी यहां बहुत कारबार होता है। फिच आगरा से बंगाल गया और वहां से कूच बिहार गया। कूच बिहार के बारे में लिखते हुए फिच कहता है "यहां का राजा बहुत दयालु है उसका राज्य बहुत बड़ा है और कोचीन चीन से अधिक दूर नहीं है। जब कभी युद्ध होता है तो सारे जलाशयों में जहर डाल देते हैं। नवम्बर १५८६ में फिच श्रीपुर (गंगा किनारे) से जहाज द्वारा पीगू गया। नाव द्वारा इरावदी नदी को पार कर वह बसीम पहुंचा जिसके बारे में उसने लिखा है कि वह बहुत ही सुन्दर नगर है। यहां के लोग बहुत ही लम्बे सुन्दर और नंगे हैं। स्त्रियां गोरी हैं उनके चेहरे गोल हैं और उनकी आंखें छोटी हैं। मकान बहुत ऊंचे हैं। सारा देश बहुत सुन्दर है।

इस देश में फल बहुतायत से उत्पन्न होते हैं। नारंगी अंजीर और नारियल बहुत अधिक उत्पन्न होता है। राजा के पास बहुत से हाथी हैं जिनमें चार सफेद हाथी हैं जो असभ्य हैं।

पीगू से फिच मलक्का गया। वहां पुर्तगाल वालों ने समुद्र तट पर एक बड़ा किला बना रक्खा था जहां से पुर्तगाल वाले व्यापार करते थे। १५८८ में वह वापस लौटा और बंगाल आया और वहां से लंका गया। लंका के बारे में उसने लिखा है कि वह बहुत ही सुन्दर और वनस्पतियों से लहलहाता देश है। वहां कोलम्बो में पुर्तगाल वालों का एक बड़ा मजबूत किला है जिसमें एक लाख आदमी रहते हैं और सेना में सैकड़ों हाथी हैं। लंका से वह क्विलन गया जोकि पुर्तगाल वालों का दूसरा बड़ा किला था। यहां काली मिर्च का व्यापार होता था। इस प्रकार पूर्व में घूमफिरकर फिच १५९१ में इंगलैण्ड वापस पहुंचा। आठ वर्ष तक निरंतर पूर्व के देशों में घूम कर उस साहसी अंग्रेज ने जो जानकारी अंग्रेजों को दी वह आगे चलकर ईस्ट इंडिया कम्पनी के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हुई।

फिच के वर्णन से उत्साहित होकर कुछ अन्य अंग्रेजों ने भी मसाले के द्वीपों में पहुंचने का प्रयत्न किया, परन्तु वे सफल नहीं हुए। डच लोगों ने अंग्रेजों को इस प्रतिस्पर्द्धा में पीछे छोड़ दिया। डच लोगों के हाथ में मसाले का व्यापार आ गया और वे काली मिर्च तथा लौंग का मनमाना मूल्य लेने लगे। अतएव लंदन के कतिपय व्यापारियों ने ईस्ट इंडिया कम्पनी स्थापित की और पूर्व से व्यापार करने का एकाधिकार प्राप्त किया। ३१ दिसम्बर १६ को महारानी

एलीजाबेथ ने इस कम्पनी को आज्ञापत्र प्रदान किया।

१६ १ में जेम्स लंकास्टर के नेतृत्व में चार बड़े जहाजों का बेड़ा पूर्व से व्यापार करने के लिए चला। यह जहाजी बेड़ा नीकोबार द्वीप समूह पहुँचा। अंग्रेजों ने अचाम में काली मिर्च प्राप्त की और वहां उन्होंने अपने एजेन्ट नियुक्त कर दिए। मोलुका में भी काली मिर्च खरीदने के लिए अपने एजेन्ट नियुक्त कर बेड़ा इंगलैंड लौट आया। जेम्स लंकास्टर अपने जहाजों में दस लाख पौंड काली मिर्च लेकर इङ्गलैंड पहुँचा था। इसके उपरान्त बराबर अंग्रेज जहाज पूर्व में मसाले के व्यापार के लिए आने लगे।

१६ ७ में विलियम हॉकिन्स सूरत पहुँचा और सूरत से सम्राट जहाँगीर के दरबार में पहुँचा। यद्यपि सम्राट ने उसके साथ अच्छा बर्ताव किया किन्तु पुर्तगालवालों का मुगल सम्राट के दर्बार में इतना अधिक प्रभाव था कि वह सम्राट से इकरार के लिए कोई व्यापारिक सुविधायें प्राप्त न कर सका और उसे निराश लौटना पड़ा। परन्तु उसको भारत के बारे में तथा मुगल दरबार के बारे में बहुत मूल्यवान जानकारी प्राप्त हुई।

१६१४ में पुर्तगाल की सेना ने अंग्रेजों के जहाजों पर जो ताप्ती के मुहाने पर लंगर डाले हुए थे आक्रमण किया। यद्यपि पुर्तगाल की सेना बहुत अधिक थी फिर भी अंग्रेजों ने उन्हें पीछे ढकेल दिया। क्रमशः अंग्रेजों का प्रभाव भारत में बढ़ने लगा। विशेषकर सर टामस रो की कार्यकुशलता और चतुराई के कारण अंग्रेजों को सूरत आगरा अहमदाबाद और भड़ौच में व्यापारिक

कोठियां बनाने की आज्ञा मुगल दरबार से प्राप्त हो गई। उसके उपरांत अंग्रेजों का प्रभाव भारत और एशिया में बढ़ता ही गया।

सत्रहवीं शताब्दी पृथ्वी के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उस शताब्दी के प्रारम्भ में स्पेन और पुर्तगाल ने बहुत बड़े और विस्तृत साम्राज्य स्थापित कर लिए थे और आपस में संधि करके अपना क्षेत्र निर्धारित कर लिए थे जिससे कि उन दो प्रबल और महान राष्ट्रों में परस्पर प्रतिस्पर्द्धा न हो। उनके साम्राज्य विस्तार का परिणाम यह हुआ कि उन दोनों राष्ट्रों का व्यापार बहुत अधिक बढ़ गया और वे अत्यन्त समृद्धिशाली बन गए। इङ्गलैंड और हालैंड ललचाई आंखों से उन दोनों राष्ट्रों के वैभव और व्यापार को देखते थे किन्तु उन दोनों की सम्मिलित शक्ति को चुनौती देने का उन्हें साहस नहीं होता था। यही कारण था कि इङ्गलैंड ने मसाले के द्वीपों तक उत्तरी ध्रुव के मार्ग से पहुँचने का प्रयत्न किया। परन्तु उनका यह प्रयत्न असफल हो गया। इङ्गलैंड समझ गया कि साम्राज्य स्थापित करने के लिए और विदेशी व्यापार बढ़ाने के लिए समुद्री शक्ति को बढ़ाना आवश्यक है। अतएव उसने तेज चलनेवाले जहाजों का निर्माण किया जिन पर भारी तोपें रक्खी जाती थीं जो बहुत दूर तक मार कर सकती थीं। अन्त में जब १५८८ में स्पेन के अजेय 'आरमाडा' से अंग्रेजों का समुद्री युद्ध हुआ और अंग्रेजों की विजय हुई तब वास्तव में इङ्गलैंड के लिए समुद्री मार्ग खुले और उसके बाद ही इङ्गलैंड के व्यापारी तेजी के साथ व्यापार में आगे बढ़े।

इङ्गलैंड की बढ़ती हुई शक्ति के अतिरिक्त एक बात और थी जिसके कारण स्पेन और पुर्तगाल के साम्राज्य इतने फैल गए थे कि उन दोनों देशों को उन्हें सम्भालना कठिन हो रहा था। इतने विस्तृत साम्राज्यों की देखभाल करने के लिए उनके पास पर्याप्त मानवीय तथा भौतिक साधन नहीं थे। यही नहीं सोलहवीं शताब्दी में स्पेन और पुर्तगाल में पूर्ववर्ती साहसी नाविकों के उत्तराधिकारी उत्पन्न होने बन्द हो गए। विलासिता ने वहां की खोज परम्परा को समाप्त कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि क्रमशः स्पेन और पुर्तगाल पिछड़ते गए, और इंगलैंड और हालैंड विदेशी व्यापार में आगे बढ़ते गए।

बात यह थी कि उत्तर यौरोप में पहले ऐन्टवर्प मसाले के व्यापार की प्रमुख मंडी थी। उसका पतन होने पर १५८५ में ऐम्सटर्डम मसाले के व्यापार की मुख्य मंडी बन गया। उस समय स्पेन के बादशाह फिलिप्स द्वितीय ने जिसके शासन काल में पुर्तगाल स्पेन से मिला दिया गया था हालैंडवालों को लिस्बन के बन्दरगाह से व्यापार करने की मनाही कर दी। इसका परिणाम यह हुआ कि हालैंड की मसाले की मन्दी ठप्प हो गई क्योंकि वह (हालैंड) व्यापारी लिस्बन से ही मसाले खरीद कर लाते थे जो कि वहां पुर्तगाल वालों द्वारा मसाले के द्वीपों से लाए जाते थे। अपने व्यापार को नष्ट होते देखकर डच व्यापारियों ने साहस किया और एक जहाज मसाले के द्वीपों की ओर भेजा जो जावा जाकर और बहुत सा मसाला लेकर कुशलपूर्वक हालैंड लौट आया। इस सफलता से

उत्साहित होकर हालैंड के व्यापारियों ने एक कम्पनी स्थापित कर ली और वह प्रति वर्ष एक जहाजों का बेड़ा मसाले के द्वीपों की ओर भेजती थी। इस कम्पनी की स्थापना से हालैंड वालों ने साम्राज्य विस्तार और उपनिवेशों की स्थापना का एक शक्तिशाली साधन खड़ा कर लिया जिसकी नकल इंगलैंड वालों ने भी की।

यहां भी पुर्तगाल के क्षेत्र में हालैंडवालों ने उन पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। अन्त में उन्होंने पुर्तगाल वालों को १५४१ में मलक्का से निकाल बाहर किया। इसके उपरान्त क्रमशः हालैंड वालों ने पुर्तगाली प्रभाव को लंका व दक्षिण भारत से भी समाप्त कर दिया। कुछ दिनों बाद उन्होंने स्थायी रूप से मलाया प्राय द्वीप तथा मसाले के द्वीपों पर अपना अधिकार कर लिया। इस प्रकार सौ वर्षों के अन्दर ही पुर्तगाल का विस्तृत साम्राज्य समाप्त हो गया।

उधर इंगलैण्ड भी स्पेन और पुर्तगाल के साम्राज्य को छिन्न भिन्न करने का सफल प्रयास कर रहा था। अस्तु स्पेन और पुर्तगाल का पराभव हुआ और इन दोनों राष्ट्रों के हाथ में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार आगया।

# दसवा परिच्छेद

## ड्रेक की पृथ्वी परिक्रमा ( १५७७–१५८० )

ड्रेक की पृथ्वी की परिक्रमा खोज के इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण है। यद्यपि ड्रेक के पचास वर्ष पूर्व मैगलान पृथ्वी की परिक्रमा कर चुका था परन्तु ड्रेक की पृथ्वी परिक्रमा का महत्व इस कारण है कि वह पहला अंग्रेज था जिसने यह साहस किया और उसने मैगलान जलसंयोजक के दक्षिण में जाकर उस भूमि की जानकारी भी संसार को दी कि जिसके चारों ओर प्रशान्त महासागर और ऐटलांटिक महासागर हिलोरें मारता है। उस समय के पृथ्वी के नक्शों में उस रहस्यमय भूभाग को टैरा आस्ट्रेलिस लिखा जाता था और उसको दक्षिणी अफ्रीका से जुड़ा हुआ दिखलाया जाता था। ड्रेक ने पहली बार यह बतलाया कि यह रहस्यमय टैरा-आस्ट्रेलिस दक्षिणी अफ्रीका का भाग न होकर एक पृथक स्वतन्त्र महाद्वीप है। ड्रेक ने ही अमेरिका के समुद्र तट की वैंकोवर तक खोज की और इंगलैण्ड को मसाले के द्वीपों का रहस्य बतलाया।

ड्रेक जब पंद्रह वर्ष का था तभी से वह समुद्र पर चला गया

था। वह पंद्रह वर्ष की आयु में एक जहाज पर ऐपरेंटिस हो गया था जो इंगलैंड और निदरलैंड के बीच व्यापार करता था। इस कारण ड्रेक को अनेक बार उत्तरी समुद्र की यात्रा करनी पड़ती थी। परन्तु वह बालक जो समस्त पृथ्वी की परिक्रमा करनेवाला था और जो भविष्य में बड़ा साहसी नाविक बनने वाला था उसको इस थोड़े से संकीर्ण समुद्र की यात्रा से कैसे संतोष हो सकता था। वह छोटासा उत्तरी समुद्र उसको एक कैदखाना मालूम पड़ता था और वह खुले हुए विस्तृत महासागर पर यात्रा करने के लिए छटपटा रहा था। उसी समय इंगलैंड में जान-हाकिन्स के नेतृत्व में एक अंग्रेजी खोज अभियान अमेरिका के स्पेनिश उपनिवेशों की ओर जा रहा था। ड्रेक ने उस जहाज पर काम करना छोड़ दिया और अपने सम्बन्धी जान-हाकिन्स की अधीनता में उस खोज अभियान में सम्मिलित हो गया। १५६७ में 'जूडिथ' जहाज पर ड्रेक ऐटलांटिक महासागर के तूफानों का सामना करते हुए स्पेन के उपनिवेशों तक पहुंचा और वहां से स्पेनवासियों के बहुमूल्य खजाने का एक भाग लेकर आया। इस यात्रा में ड्रेक स्पेनवालों के हाथ से मरते मरते बच निकला। स्वदेश लौटकर उसने लोगों को अमेरिका की धन दौलत का बहुत ही विशद वर्णन किया और बतलाया कि अमेरिका में कल्पनातीत धन है। अभी तक लोगों को अमेरिका के बारे में तनिक भी जानकारी नहीं थी केवल स्पेनवासी ही नई दुनिया के धन का उपभोग कर रहे थे। लोग ड्रेक के

# दसवा परिच्छेद

## कुक की पृथ्वी परिक्रमा ( १२७७-१२८० )

कुक की पृथ्वी की परिक्रमा खोज के इतिहास में बहुत महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि कुक के पचास वर्ष पूर्व मैगलान पृथ्वी की परिक्रमा कर चुका था परन्तु कुक की पृथ्वी परिक्रमा का महत्त्व इस कारण है कि वह पहला मनुष्य था जिसने यह साहस किया और उसने मैगलान जलसंयोजक के दक्षिण में जाकर उस भूमि की जानकारी भी संसार को दी कि जिसके चारों ओर प्रशान्त महासागर और ऐटलांटिक महासागर हिलोरें मारता है। उस समय न पृथ्वी के नक्शों में उस रहस्यमय भूभाग को टैरा आस्ट्रलिस लिखा जाता था और उसको दक्षिणी अफ्रीका में जुड़ा हुआ दिखलाया जाता था। कुक ने पहली बार यह बतलाया कि यह रहस्यमय टैरा-आस्ट्रेलिस दक्षिणी अफ्रीका का भाग न होकर एक पृथक स्वतन्त्र महाद्वीप है। कुक ने ही अमेरिका के समुद्र तट की वैंकोवर तक खोज की और इंगलैण्ड को मलाते के द्वीपों का रहस्य बतलाया।

कुक जब पंद्रह वर्ष का था तभी से वह समुद्र पर चला गया

था। वह पंद्रह वर्ष की आयु में एक जहाज पर ऐपरेंटिस हो गया था जो इंगलैंड और हॉलैंड के बीच व्यापार करता था। इस कारण ड्रेक को अनेक बार उत्तरी समुद्र की यात्रा करनी पड़ती थी। परन्तु वह बालक जो समस्त पृथ्वी की परिक्रमा करनेवाला था और जो भविष्य में बड़ा साहसी नाविक बनने वाला था उसको उस थोड़े से संकीर्ण समुद्र की यात्रा से कैसे संतोष हो सकता था। वह छोटासा उत्तरी समुद्र उसको एक कैदखाना मालूम पड़ता था और वह खुले हुए विस्तृत महासागर पर यात्रा करने के लिए छटपटा रहा था। उसी समय इंगलैंड में 'जान-हाकिन्स' के नेतृत्व में एक अंग्रेजी खोज अभियान अमेरिका के स्पेनिश उपनिवेशों की ओर जा रहा था। ड्रेक ने उस जहाज पर काम करना छोड़ दिया और अपने सम्बन्धी जान-हाकिन्स की अधीनता में उस खोज अभियान में सम्मिलित हो गया। १५६७ में 'जूडिथ' जहाज पर ड्रेक ऐटलांटिक महासागर के तूफानों का सामना करते हुए स्पेन के उपनिवेशों तक पहुंचा और वहां से स्पेनवासियों के बहुमूल्य खजाने का एक अंश लेकर आया। इस यात्रा में ड्रेक स्पेनवालों के हाथ से मरते मरते बच निकला। स्वदेश लौटकर उसने लोगों को अमेरिका की धन दौलत का बहुत ही विशद वर्णन किया और बतलाया कि अमेरिका में कल्पनातीत धन है। अभी तक लोगों को अमेरिका के बारे में तनिक भी जानकारी नहीं थी केवल स्पेनवासी ही नई दुनिया के धन का उपभोग कर रहे थे। लोग ड्रेक के

नया और सुन्दर 'ऐलीजैबेथ' जहाज रहस्यमय ढंग से उस बेड़े में आकर सम्मिलित हो गया। उन जहाजों पर डेढ़ सौ नाविक थे और उन जहाजों पर सभी आवश्यक वस्तुओं को इकट्ठा किया गया था। जहाजों को तैयार करने में खूब खर्च किया गया था। यात्रा के लिए संगीतज्ञों को नौकर रक्खा गया था तथा आधुनिकतम ढंग के अस्त्र शस्त्र इकट्ठे किए गए थे। ध्वज-पोत (जहाज) पर बड़ी शान शौकत का प्रदर्शन किया गया था। भोजन के लिए चांदी के बर्तन थे और सभी आराम की वस्तुएं उपलब्ध थीं। ड्रेक की केबिन इत्रों की सुगंधि से महक रही थी जिन्हें महारानी ऐलीजैबेथ ने उसे भेंट किया था। इस प्रकार सब तैयारियां पूरी कर लेने के बाद १५ नवम्बर १५७७ को ड्रेक ने अपने छोटे से जहाजी बेड़े को लेकर 'प्लेमाउथ' के बन्दरगाह से प्रस्थान किया। ड्रेक के साथ अन्य सभी नाविकों को यही मालूम था कि वे 'अलजीरिया' की ओर जा रहे हैं।

ड्रेक को भविष्य का कोई ज्ञान नहीं था वह एक अत्यन्त जोखिम की यात्रा के लिए जा रहा था। अपने जहाज पर खड़े होकर उसने अपने हैट को उतारा और श्रद्धापूर्वक अपनी मातृभूमि को प्रणाम कर उस से विदा लेकर उस यात्रा के लिए चल पड़ा। किसे मालूम था कि ड्रेक को उस यात्रा में कितनी कठि- नाइयां विद्रोह विश्वासघात का सामना करना पड़ेगा और अन्त में उसको गौरवपूर्ण सफलता प्राप्त होगी।

ड्रेक वर्डी अन्तरीप तक सकुशल पहुंच गया, परन्तु अब यात्रा

का उद्देश्य गुप्त रख सकना सम्भव नहीं था क्योंकि वहाँ से मिस्र देश का रास्ता दूसरी ओर जाता था। ड्रेक ने अपने साथियों को यात्रा के क्रम को प्रकट कर दिया और साहस के साथ अपने जहाजों को ऐटलांटिक महासागर की ओर मोड़ दिया। ऐटलांटिक महासागर के तूफानी जल को पार कर वह ५ अप्रैल को 'ब्राजील' के तट पर पहुँचा। किन्तु कुहरा इतना गहरा था और मौसम इतना खराब था कि जहाज बिखर गए और उन्हें सुरक्षा के लिए 'लाप्लाटा-नदी' के मुहाने में शरणकर शरण लेनी पड़ी। फिर भी समुद्र शान्त नहीं हुआ। उन पहाड़ों जैसी भयंकर लहरों से युद्ध करते हुए वे जहाज किसी प्रकार दक्षिण की ओर बढ़ने लगे। ६ लम्बे सप्ताहों तक वे जहाज कड़ा और भयंकर समुद्र से संघर्ष करते रहे। समुद्र इतना भयंकर था कि उन अंग्रेज नाविकों के साहस और नौका संचालन की कुशलता के कारण ही वे नष्ट होने से बच सके।

२ जून को वे मैगलान द्वारा प्रसिद्धि प्राप्त पैटेगोनिया के वीरान तट पर सेंट-जूलियान के बन्दरगाह में पहुँचे। बन्दरगाह में घुसते ही उन्होंने एक वीभत्स दृश्य देखा। वर्षों पूर्व उस तट पर 'मैगलान' ने जो 'नर कंकाल' टाँग दिया था, वह ज्यों का त्यों लटक रहा था।

इतिहास दोहराया जा रहा था। जो दशा उस वीरान जनशून्य प्रदेश में भूलकर आने वालों की पहले हुई थी वही दशा उन अंग्रेजों की होने वाली थी।

यात्रा में ड्रेक को अपने प्रमुख सहायक 'डाटी' पर यह सन्देह

पड़ा होता जा रहा था कि वह यात्रा को विफल कर देना चाहता है। यद्यपि डाटी ड्रेक का घनिष्ट मित्र था परन्तु वह अनुशासन हीनता को बढ़ावा दे रहा था। यही नहीं कि वह ड्रेक की आज्ञाओं को नहीं मानता था वह यात्रा को असफल कर देने का भी प्रयत्न कर रहा था। अतएव ड्रेक ने कौंसिल को निर्वाचित किया और अंग्रेज कानून के अनुसार उसका मुकदमा हुआ। दो दिन मुकदमा होने के उपरान्त कौंसिल ने डाटी को अपराधी घोषित कर दिया। इसके उपरान्त जो दृश्य उपस्थित हुआ वह जीवन के इतिहास में अत्यन्त हृदयस्पर्शी था। सभी अंग्रेज नाविक समुद्र तट पर उतर गए। उनके जहाज बन्दरगाह में लंगर डाले खड़े थे। डाटी को फांसी देने का स्थान तैयार किया गया। ड्रेक और डाटी दोनों भगवान की प्रार्थना के लिए एक साथ घुटने टेक कर झुके। कुछ ही देर में ड्रेक की तलवार चमकी और अपने मित्र का कटा सर हाथ में लेकर उसने कहा देखो देशद्रोही और विश्वासघाती का ऐसा अन्त होता है।

उस समय जाड़े का मध्य था इस कारण ६ सप्ताह वे वहीं बन्दरगाह में ठहरे रहे। अगस्त में वे तीनों जहाज मैगलान जलसंयोजक की ओर चल पड़े। अन्त में वह जलसंयोजक मिल गया और वे साहस के साथ उसमें घुसे। उस जलसंयोजक के दोनों ओर को ऊँचे पहाड़ थे उन पर से बर्फ और कीचड़ का भयंकर प्रवाह उन पर बहने लगा। जब कि वे उस कठोर और भयानक समुद्र को पार कर रहे थे अन्य भूगोलवेत्ताओं की भांति उनका भी यही

विचार था कि दक्षिण का यह अनजाना प्रदेश कोई महादेश है जो जानी हुई पृथ्वी की सीमा से दूर है। इस दक्षिणी समुद्र तट पर वहाँ के आदिवासी जो अग्नि जलाते थे वह उस वीभत्स दृश्य को और भी अधिक डरावना बना देती थी। सोलह दिन लगातार चलने के उपरान्त वे फिर खुले और विस्तृत समुद्र में पहुँच गए। अब वे प्रशान्त महासागर में थे। किन्तु उस समय प्रशान्त महासागर शान्त नहीं था। समुद्र में एक भयंकर तूफान उठा एक के बाद दूसरे भयंकर तूफान आते गए, और जहाज विवश होकर कभी दक्षिण की ओर और कभी पश्चिम की ओर बहकर हार्न-अन्तरीप से दूर चले गए। जब जहाज पुनः समुद्र तट के समीप पहुँचे तो उन्हें दक्षिण महाद्वीप के स्थान पर एक खुला खुला समुद्र तट मिला जिस पर बहुत ऊँची और प्रबल लहरें निरन्तर टकराती रहती थीं। इस भयंकर तूफान में 'मेरीगोल्ड' जहाज टकरा कर डूब गया और उस पर जितने भी नाविक थे वे समुद्र तल में चले गए। एक सप्ताह के उपरांत 'एलीजेबेथ' जहाज का कप्तान अपने जहाज को लेकर इंगलैंड वापस चला गया। अब ड्रेक केवल अपने अकेले जहाज 'गोल्डन हिन्द' के साथ रह गया। किन्तु ड्रेक साहस छोड़ने वाला नहीं था। उसने अपने साथियों से कहा हम लोग अकेले ही नये देश की खोज निकालने का गौरव प्राप्त करेंगे। दो महीने तक लगातार उन भयंकर तूफानों से लड़ते रहने के बाद ड्रेक ने उन दक्षिणी द्वीपों में लंगर डाला जिनके बारे में तत्कालीन भौगोलिक कुछ भी नहीं जानते थे। यहाँ ऐटलांटिक और प्रशान्त महासागर एक साथ मिलकर

और गर्जन करते हुए प्रवाहित होते थे । उस द्वीप के अन्त तक जाकर ड्रेक ने लेटकर दोनों हाथों से जानी हुई पृथ्वी के दक्षिणतम स्थान को चिपटा लिया ।

ड्रेक ने दुनिया को बतलाया कि वे दक्षिणी द्वीप दक्षिणी महाद्वीप आस्ट्रेलिया के भाग न होकर एक द्वीप समूह हैं जिनके चारों ओर खुला हुआ समुद्र हिलोरें मारता है। बाद को इस खोज को एक चांदी के पृथ्वी के नक्शे पर पहली बार दिखाया गया जो आज भी ब्रिटिश म्यूजियम में रक्खा है ।

ड्रेक यह कहकर कि जिस समुद्र में मैं अब प्रवेश कर रहा हूँ उसे प्रशान्त महासागर न कह कर अशांत महासागर कहना अधिक उपयुक्त होगा इसलिए अमेरीका के पश्चिमीय तट के साथ साथ आगे बढ़ा । आगे चलने पर चिली का समुद्र तट आया और आगे बढ़ने पर वे 'वाल परैजो" पहुंचे । वहां उनको स्पेन का एक बहुत बड़ा जहाज मिला जो 'पेरू' से लाए गए सोने से लदा था । अंग्रेजी जहाज की तोपें गरज उठीं । स्पेन के जहाज पर जो भी नाविक थे भयभीत हो उठे । अंग्रेज जहाज के नाविक फुर्ती से स्पेन के जहाज पर चढ़ गए, और स्पैन के नाविकों को रस्सों से बांधकर उन्हें नीचे तहखानों में बंद कर दिया और उस जहाज का सारा मूल्यवान खजाना अपने जहाज पर ले आए । वे अब शीघ्रता से उत्तर की ओर 'लीमा' और 'पनामा' की ओर बढ़े क्योंकि स्पेन के कुछ और जहाज उस ओर गए थे जिन पर 'पेरू' का बहुत अधिक सोना लदा था । जो भी स्पेन का जहाज उन्हें मिलता वे उसे लूट लेते और

उसका खजाना अपने जहाज में भर लेते। यहाँ तक कि उनका जहाज सोने से भर गया। ड्रेक यह तो समझ गया था कि अब उस समुद्र तट से होकर वापस अपने देश को लौटना असम्भव है। अतएव ड्रेक ने निश्चय किया कि वह उत्तर में जाकर यदि सम्भव हुआ तो उत्तर के मार्ग से इंगलैंड को वापस लौटने का मार्ग ढूंढ निकालेगा।

उत्तर में चलते चलते जब ड्रेक का जहाज उत्तरी ध्रुव प्रदेश में पहुंचा तब भयंकर शीत पड़ने लगा था और कोहरा इतना गहरा था कि मार्ग दिखलाई नहीं देता था। अतएव ड्रेक ने दक्षिण की ओर चलने का निश्चय किया। दक्षिण की ओर चलने पर वे उस स्थान पर आए जिसे आज हम 'वेंकोवर' द्वीप संयुक्त राज्य अमेरिका) कहते हैं। परन्तु वहाँ पहुंचने पर वायु बहुत तेज हो गई और उल्टी चलने लगी इस कारण ड्रेक को फिर पीछे लौटना पड़ा और उसने एक बन्दरगाह में जिसे आज 'फ्रांसिस्को' कहते हैं लंगर डाला। ड्रेक ने उस बन्दरगाह में कुछ समय ठहर जहाज की मरम्मत कर लेने का निश्चय किया क्योंकि अब उसे आशा अन्तरीप के मार्ग से इंगलैंड तक की लम्बी प्रशान्त महासागर की यात्रा करनी थी। ड्रेक ने उस समुद्र तट की सात सौ मील की यात्रा बारह दिन में की थी। अब उसने उस नये देश की खोज करने का निश्चय किया। उसने उस नये देश का नाम 'न्यू-अल्बियन' रखा। अंग्रेजों को देखकर इंडियन झुंड के झुंड समुद्र तट पर इकट्ठे हो गए। उनका राजा भी आया। वह लम्बा और सुन्दर था तथा मित्रता की भावना से आगे बढ़ा

ड्रेक के पास आकर उसने अपना मुकुट उतार कर ड्रेक के सर पर रख दिया तथा अपने गले में जंजीरें डाल कर इस बात का प्रदर्शन किया कि अब वह देश उसका है और वह उसका आज्ञाकारी सामन्त है ।

अब ड्रेक उस देश का राजा बन गया। उसे इस बात की कल्पना भी नहीं थी कि उसके राज्य में समीप ही कैलीफोर्निया की सोने की खानें थीं। उसकी प्रजा शान्तिप्रिय और मधुर थी। वे अंग्रेजों को देवता के समान श्रद्धा और भक्ति करते थे। ड्रेक ने राजा की भांति ही यहां सारा व्यवहार किया और अपनी प्रजा का शासन किया।

जब ड्रेक यहां से चलने लगा तो उसने यहां एक स्मारक खड़ा कर दिया। उसके साथ ही महारानी ऐलीजैबेथ का उस देश पर स्वामित्व बताने के लिए उसने एक बड़ा स्तूप खड़ा किया जिस पर पीतल की प्लेट पर महारानी का नाम तथा ड्रेक के वहां पहुंचने की तारीख खोद दी गई। इसके अतिरिक्त उस प्लेट पर यह भी खोद दिया गया कि उस देश को उसके राजा तथा निवासियों ने स्वेच्छा-पूर्वक महारानी को भेंट किया है। उस स्तूप पर प्लेट के साथ ६ पेंस का एक सिक्का भी जड़ दिया गया जिस पर महारानी का चित्र तथा उनके राज्यचिन्ह अंकित थे। तब तक स्पेनवाले उस देश तक नहीं पहुंचे थे। उन्होंने कभी भी उस भूमि पर पैर नहीं रक्खा था वे उससे बहुत दूर कहीं निचली कैलिफोर्निया तक ही पहुंच पाए थे।

जब यहां से विदा होने का समय आया तो यहां के लोग बहुत

ही दुखी हुए। वे सब के सब अत्यन्त उदास और दुखी हो गए। वे रोने लगे और अपनी भाषा में इस बात की शिकायत करने लगे कि देवता उन्हें छोड़े जा रहे हैं। उन भोले इंडियन लोगों की कातरता और छटपटाहट को देखकर ड्रेक और उसके साथियों का हृदय द्रवित हो गया।

वास्तव में वे भोले इंडियन अंग्रेजों को देवता मानते थे। विदाई का दिन आया। सब इण्डियन उन्हें विदा करने के लिए आए। जब जहाज चल पड़ा तो वे सबके सब समीपवर्ती पहाड़ों पर चढ़ गए जिससे कि वे उस जहाज को जितनी दूर तक सम्भव हो देख सकें। उसके उपरान्त उन्होंने आग जलाकर और पशुओं का बलिदान करके अपने प्रभुओं की सकुशल यात्रा की कामना की।

२३ जुलाई १५७९ को ड्रेक ने न्यू-एलबियन को छोड़ा। वह उसी रास्ते से चला जिसे मैगलान ने पकड़ा था। वह उस रास्ते पश्चिमी समुद्रों तथा ऐटलान्टिक महासागर को पार कर इंगलैंड पहुंचना चाहता था। अड़सठ दिन तक लगातार तेजी से उसका जहाज चलता गया। कोई भूमि नहीं दिखलाई दी। अड़सठ दिन की लम्बी यात्रा के उपरांत ड्रेक का जहाज फिलीपाइन्स द्वीप समूह में पहुंचा। वहां से वह आगे बढ़ा और ११ नवम्बर १५७९ को वह मलाके के द्वीपों में पहुंचा। वहां के राजा ने उसका अच्छा स्वागत किया। राजा का व्यक्तित्व भव्य और आकर्षक था। वह कमखाब के सोने के तार के कपड़े पहने था। उसके बालों में सोने के छल्ले थे और गले में भारी सोने की जंजीर थी। यहां अंग्रेजों को लम्बी यात्रा के उपरांत चार

पेट ताजा भोजन मांस और सब्जी खाने को मिली। इस देश में चावल मुर्गी खजूर गन्ना फल और मोम बहुतायत से उत्पन्न होते थे। मोसेम्बीक के छोटे से द्वीप पर द ग ने अपने जहाज सेन्ट रफेल' की भलीभांति मरम्मत करवाई क्योंकि उसे इंगलैंड तक लम्बी यात्रा करनी थी। लेकिन लौंग से लदा हुआ जहाज उन द्वीपों की चट्टानों और तेज जलधारा से टकरा कर लगभग टूटते टूटते बचा।

६ जनवरी १४९८ को जहाज गैब्रियल एक चट्टान पर चढ़ गया। वहां वह रात्रि के आठ बजे से दूसरे दिन तीसरे पहर चार बजे तक अटका रह गया। द ग और उसके साथियों को इस खतरे से उबरने की कोई आशा नहीं रही। परन्तु द ग ने हिम्मत नहीं हारी। उसने सब नाविकों को हिम्मत के साथ जहाज को इस खतरे से निकालने के लिए आमंत्रित किया। द ग की कुशलता और साहस ने भगवान की असीम कृपा से खतरे पर विजय पाई और जहाज सुरक्षित इस खतरे से निकल गया।

अब जहाज हिन्द महासागर में पहुंचा। तेजी से हिन्द महासागर को पार कर उसने आशा अन्तरीप को पार किया। जब आशा अन्तरीप को द ग ने पार किया तो उसे आश्चर्य हुआ कि जिस अन्तरीप को पुर्तगाल के नाविक दुनिया में सबसे अधिक तूफानी और खतरनाक बतलाते हैं वह वास्तव में बहुत ही सरल और शान्त है। द ग ने अपने लेख में पुर्तगाल के नाविकों को आशा अन्तरीप के बारे में ऐसी भ्रामक बात फैलाने के लिए भला बुरा कहा है।

अन्त में ड्रेक सकुशल इंगलैंड वापस पहुंच गया। तीन लम्बे वर्षों के बाद जब ड्रेक का 'गोल्डन हिन्द" जहाज 'प्लेमाउथ' के बन्दरगाह में घुसा तो वहां के लोगों के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। क्योंकि उन्होंने यह मान लिया था कि ड्रेक समुद्र के गहरे तल में समा गया है। जब लोगों को यह ज्ञात हुआ कि एक अंग्रेज ने पृथ्वी की परिक्रमा की है तो समस्त देश हर्षोल्लास से मग्न हो उठा। महारानी ऐलीजैबेथ ने ड्रेक को अपनी विचित्र यात्रा की कहानी सुनाने के लिए अपने दरबार में आमंत्रित किया। ड्रेक ने जब अपनी लम्बी यात्रा की कहानी महारानी को सुनाई तो महारानी आश्चर्यचकित और आत्मविभोर हो उठी। उस एक छोटे से जहाज पर एक राजकीय भोज ड्रेक और उसके साथियों को दिया गया जिसमें महारानी स्वयं उपस्थित हुईं और उन्होंने ड्रेक को 'नाईट' की उपाधि से विभूषित किया। महारानी ने यह भी आज्ञा प्रदान की कि गोल्डन-हिन्द' जहाज इंगलैंड के 'विक्टोरिया जहाज की भांति सुरक्षित रक्खा जावे। जिससे कि इंगलैंड की आने वाली पीढ़ियां सर फ्रेंसिस ड्रेक को अद्भुत और साहसी यात्रा को याद रख सकें। गोल्डन-हिन्द' जहाज को राष्ट्रीय स्मारक की भांति सुरक्षित रक्खा गया। बाद में उस जहाज के टुकड़े कर लिए गए और उसकी लकड़ी से 'ऑक्सफोर्ड विश्व विद्यालय' में एक कुर्सी बनाई गई जिस पर 'कौले' की प्रसिद्ध पंक्तियां अंकित की गईं जिनका आशय नीचे लिखा था।

'यह कुर्सी उस गौरवशाली महान जहाज की लकड़ी से

बनी है जिसने पृथ्वी की परिक्रमा की थी और जो सूर्य के रथ की प्रतिस्पर्धा करता था। ड्रेक और उसके जहाज के लिए इससे अधिक गौरवशाली बात और कोई नहीं हो सकती थी कि ड्रेक को स्वर्ग में और जहाज को ऑक्सफोर्ड में गौरवशाली स्थान मिला है।

सर फ्रांसिस ड्रेक की मृत्यु १५९६ में समुद्र पर हुई। वह अपना नाविक जीवन के लिए समुद्र पर ही चिरनिद्रा में सो गया। किसी कवि ने उसके बारे में जो पंक्तियां लिखी हैं उनका आशय नीचे लिखा है।

समुद्र की लहरें उसका कफन बन गईं और जल उसकी समाधि बन गया। परन्तु उसका यश इतना विस्तृत और महान था कि महासागर में भी इतना स्थान नहीं था कि उसको अपने में समा सकता।

# ग्यारहवां परिच्छेद

## कनाडा की खोज

स्पेन और पुर्तगाल की सफलता ने योरोप के सभी देशों में नये देशों की खोज के लिए उत्साह पैदा कर दिया। वे भी पश्चिम की ओर जाकर नए नए देशों की खोज करने लगे। फ्रेंच मल्लाह अमेरिका के पश्चिमोत्तर तट तक पहुंचने लगे। फ्रांस की सेवा में नियुक्त 'फ्लोरेंटाइन' ने संयुक्त राज्य अमेरिका के तट को ढूंढ निकाला परन्तु 'जाक्स-कार्टियर' ने तो सेंटलोरेंस के उत्तर में एक बहुत बड़े भाग पर अपने देश का अधिकार ही स्थापित कर लिया। उसका पश्चिम की ओर जाने का मुख्य उद्देश्य अमेरिका से कैथे (चीन) के लिए मार्ग ढूंढ निकालना था।

२ अप्रैल १५३४ को दो छोटे जहाज जिनका वजन साठ और इकसठ टन था और चुने हुए आदमी लेकर कार्टियर अपनी यात्रा पर निकल पड़ा। मौसम अच्छा था इस कारण उसको यात्रा में कोई कठिनाई नहीं हुई। तीन सप्ताह में वह न्यूफाउन्डलैंड पहुंच गया। उसने प्रतिदिन सौ मील की रफ्तार से यात्रा पूरी की। परन्तु उस प्रदेश का पूर्वी तट बर्फ से जमा हुआ था। जिस स्थान वह

सबसे पहले पहुँचा उसका नाम उसने "बोना विस्टा-अन्तरीप" रक्खा और समीपवर्ती प्रदेश का चक्कर लगाता रहा। जब बर्फ पिघल गया तो उसने लैब्राडर तथा न्यू-फाउंडलैंड के बीच में से होकर सेंट-लारेंस की खाड़ी को खोज निकाला। यह पहला योरोपियन था जिसने उस खाड़ी का पता लगाया था। जून मास में वे दोनों छोटे जहाज खाड़ी के आसपास एक द्वीप से दूसरे द्वीप और एक अन्तरीप से दूसरे अन्तरीप का चक्कर लगाते रहे। कार्टियर को प्रिंस एडवर्ड द्वीप बहुत सुन्दर लगा। उस द्वीप के बारे में उसने लिखा है 'उस द्वीप में हमें सुन्दर और मीठी सुगन्धवाले वृक्ष देखने को मिले। वहां वन नहीं थे वहां की भूमि बहुत उपजाऊ थी। वहां अनेक प्रकार के अनाज और फल उत्पन्न होते थे। ऐसा प्रतीत होता था कि मानों वहां खेती की गई हो और परिश्रम करके फल के वृक्ष लगाए गए हों। परन्तु वास्तविकता यह थी कि वे वहां जंगली अवस्था में उगे हुए थे। कुछ थोड़ी गरमी पड़ने लगी और कार्टियर नयाइस्कोशिया की ओर बढ़ा और एक खाड़ी में आया जिसका नाम उसने गरम खाड़ी रक्खा। उस खाड़ी से वह जितनी दूर जा सकता था उतनी दूर इस आशा से गया कि सम्भवतः यही प्रशान्त महासागर का मार्ग होगा परन्तु उन्हें निराश होना पड़ा। उस समय समुद्र में भयंकर तूफान उठ खड़ा हुआ इस कारण आगे बढ़ना संभव नहीं था। उसने अपने जहाजों को सुरक्षित स्थान पर खड़ा किया और साथियों सहित भूमि पर उतर गया। वहां उसने एक बड़ा क्रास चिन्ह बनाया और उसके नीचे फ्रांस की सत्ता का संकेत

करनेवाले धारण किए। वहां सभी ने भगवान से सफल यात्रा के लिए प्रार्थना की।

परन्तु समुद्र में भयंकर तूफान उठ रहा था और लहर बहुत तेज होती जा रही थी। अतएव कार्टियर ने फ्रांस को लौटने का निश्चय किया। जहाज खिलौने की भांति उछल रहे थे। मृत्यु सामने खड़ी थी किन्तु वह किसी प्रकार पांच सितम्बर को ६ महीने की यात्रा के बाद सकुशल फ्रांस लौट आया।

फ्रांस के शासकों ने उसे पुन: अमेरिका भेजा। मई १५३५ में कार्टियर पुन: तीन जहाजों को लेकर अटलांटिक के तूफानी समुद्र को पार करने के लिए चल पड़ा। वायु बहुत तेज और प्रतिकूल थी। लहरें पहाड़ों के समान ऊंची उठती थीं और गहरा कोहरा मार्ग को आंख से ओझल कर देता था। फिर भी साहस के साथ कार्टियर बढ़ता ही गया। कभी कभी तो ऐसा होता था कि जहाज एक दूसरे से अलग हो जाते थे। अन्त में जहाज एक दूसरे से अलग हो ही गए और लैब्राडर के समीप ही जाकर एक दूसरे से मिले। समुद्र की बिगड़ी हुई हालत के कारण तीन सप्ताह की यात्रा में पांच सप्ताह लग गए। अब कार्टियर लैब्राडर के दक्षिण समुद्र तट पर पहुंचा। वहां वह एक बहुत सुन्दर और बड़ी खाड़ी के अन्दर घुसा जिसमें बहुत से द्वीप थे और उसमें आने जाने के चारों ओर से रास्ते थे। कार्टियर ने उसका नाम सेंट-लारेंस रखा क्योंकि वह खाड़ी में १ अगस्त को घुसा था जिस दिन सेंट लारेंस का भोज था।

आज भी अनेक धनी पुरुष सेंट-लारेंस की खाड़ी में बड़े

जहाजों के द्वारा कनाडा के लिए लाये जाते हैं उन्हें यह स्वप्न में भी ध्यान नहीं आता होगा कि आज से चार सौ वर्ष पूर्व छोटे फ्रेंच जहाजों ने इस खाड़ी की खोज निकाला था और उनका विश्वास था कि वे इस मार्ग से कैथे (चीन) देश को पहुंच जायगे ।

यहां कार्टियर को रैड इंडियनों ने बतलाया कि यह एक बहुत बड़ी नदी 'होचेलागा' है जिसे अब सेंट-लारेंस कहते हैं जो कनाडा की ओर बढ़ने पर पतली होती गई है और आगे उसमें ताजा और मीठा पानी है।

कार्टियर लिखता है पहली सितम्बरको हम लोग उस स्थान से कनाडा की ओर चल पड़े । कनाडा वहां के निवासियों की भाषा में गांव या कस्बे को कहते थे। जब कार्टियर कनाडा के अन्दर घुसा तो कनाडा का शासक बारह बड़ी नावों और बहुत से सेवकों के साथ नदी में चल कर उन विदेशी वीर बहादुर लोगों से मिलने आया जो प्रथम बार कनाडा में आए थे। उसने उन वीरों का स्वागत किया और उनकी नाविक कुशलता से बहुत प्रभावित हुआ। बात यह थी कि कार्टियर कनाडा से बहुत ऊपर 'होचेलागा' नामक स्थान पर पहुंचा था जहां नदी बहुत पतली हो गई थी और उसकी धारा बहुत तेज थी। यह स्थान बहुत ही खतरनाक था। क्योंकि वहां बड़ी भयंकर चट्टानें थीं। एक सप्ताह तक वे प्रथम खोजी उस प्रवाहशाली नदी में ऊपर की ओर बढ़ते गए। यह देश बहुत ही सुन्दर सघन वनों से भरा हुआ था। वहां अंगूर की बेलों की बहुतायत थी और उन पर अंगूर के गुच्छे लटक रहे थे। ५ अक्तूबर

को कार्टियर 'होचेलागा' कस्बे में पहुँचा । उसका वहाँ सैकड़ों आदिवासियों ने गहरा स्वागत किया । पुरुष स्त्री और बच्चे सभी ने उनका ऐसा भव्य स्वागत किया कि मानों वे उन्हीं के देशवासी हों जो बहुत लम्बी जोखिम की यात्रा करके वापस सकुशल घर लौटे हों । स्त्रियां अपने बच्चों को उनके पास इस लिए लातीं कि वे उनको छूकर आशीर्वाद दें । क्योंकि उनका विश्वास था कि जो लोग ऐसी जोखिम की यात्रा कर सके उनमें अवश्य दैवी शक्ति है । उन्होंने इन विदेशियों के सम्मान में समुद्र तट पर अग्नि जलाकर रात भर नाचने का आयोजन किया ।

प्रातःकाल कार्टियर ने बढ़िया कपड़े पहिने और अपने साथियों के साथ मार्च आरम्भ कर तट पर उतरा । वे लोग उस कस्बे की ओर गए जो मक्का के खेतों के बीच में बसा था । वहाँ पर भी गाँववालों ने गाना गा कर और नाचकर उनका स्वागत किया । वहाँ का राजा उनसे मिलने आया । उसको लोग कंधों पर उठाए हुए थे । उसको हिरन की खाल पर बिठाया गया । उसके सर पर मुकुट के स्थान पर खाल का टोपा था ।

वहाँ एक अजीब घटना घटी । राजा ने अपना खाल का मुकुट कार्टियर के सर पर रख दिया और उसके सामने इस प्रकार झुक गया जैसे कोई पुरुष देवता के सामने झुकता है । वहाँ के लोग कार्टियर और उसके साथियों को बड़ी श्रद्धा से देखते थे । वे लोग अंधों और लूलों को उनके पास इस आशा से लाते कि वे

कार्टियर कनाडा के उन आदिवासियों के इस विश्वास को देखकर बहुत द्रवित हुआ। उसने प्रत्येक के माथे पर क्रास का चिन्ह बनाया और प्रभु ईसा का उपदेश ऊँचे स्वर में पढ़ कर सुनाया। उस बीच सभी आदिवासी वहां से खामोश खड़े रहे और आकाश की ओर देखते रहे। वे फ्रांसीसियों के ही अनुसार हाथ उठा कर प्रभु से प्रार्थना कर रहे थे। उसके उपरान्त कार्टियर ने अपने साथियों को आज्ञा दी कि वे बिगुल तथा अन्य बाजों को बजावें। उसे सुनकर आदिवासी लोग बहुत प्रसन्न हुए और नाचने लगे।

इसके उपरान्त कार्टियर और उसके साथी समीपवर्ती पहाड़ पर चढ़े। पहाड़ की चोटी पर चढ़ कर जो भव्य दृश्य उसे दिखलाई पड़ा उसे देख कर वह बहुत प्रसन्न हुआ। ऐसी सुन्दर घाटी उसने जीवन में कभी नहीं देखी थी। उसने उस सुन्दर स्थान का नाम 'माउंट-रायल' रक्खा जो अब मांट्रियल के नाम से प्रसिद्ध है।

अब जाड़ा नजदीक आ रहा था। कार्टियर ने जाड़े में फ्रांस की ओर वापस यात्रा करना उचित न समझ कर जाड़ों में वहीं रहना निश्चय किया। उसने मांट्रियल तथा क्वीबेक के बीच एक स्थान चुना और वहां जाड़ा निकालने का निश्चय किया। फ्रेंच लोगों को इस बात की तनिक भी कल्पना नहीं थी कि कनाडा में कैसा विकट जाड़ा पड़ता है। उन्हें क्या मालूम था कि जाड़ों में वहां कल्पनातीत बर्फ पड़ता है और नदियां जम जाती हैं। जिसके कारण वहां नौकावाहन सम्भव नहीं हो सकता। बड़े दिन के

पूर्व ही कार्टियर के आदमी 'स्कर्वी-रोग' से पीड़ित हो गए। बीमारी इस तेजी से फैली कि फरवरी के मध्य में एक सौ दस आदमियों में दस आदमी भी ऐसे नहीं बचे जो रोग मुक्त हों। आठ मर गए। बीमारी बढ़ती ही गई। सारे दल में केवल तीन आदमी स्वस्थ रह गए। जो मर गए थे उनको खोदकर गाड़ना भी संभव नहीं था क्योंकि सब लोग बहुत कमजोर हो गए थे और जमीन बहुत कठोर हो गई थी। अतएव मरे हुए लोगों को बर्फ में ही दबा दिया गया। लोगों में ऐसी घोर निराशा छा गई थी कि किसी को भी यह आशा नहीं रही थी कि वह जीवित फ्रांस लौट सकेगा।

नवम्बर से मार्च तक इतना बर्फ गिरा कि उनके जहाजों के डेकों पर चार फीट बर्फ जम गया। उस अजनबी देश में पड़े हुए और चारों ओर आदिवासियों से घिरे हुए होने पर भी तथा उनके जहाजों के बर्फ से जम जाने पर भी उनमें किसी की जबान पर कोई शिकायत नहीं थी। कार्टियर ने लिखा है कि उस वर्ष कनाडा में जाड़ा बहुत अधिक पड़ा। किसी प्रकार जाड़े का मौसम समाप्त हुआ। शीत की भयंकरता कम हुई और मई में बर्फ पिघल गया।

मई में फिर वे लोग स्वतन्त्र हो गए। नदियां और समुद्र खुल गए, अतएव वे फ्रांस की ओर चल पड़े। यद्यपि उन्होंने कैथे (चीन) का मार्ग नहीं ढूंढ पाया परन्तु उन्होंने फ्रांस के लिए एक बहुत बड़े देश पर अधिकार कर लिया था।

इस प्रकार कार्टियर ने कनाडा को खोज निकाला। अभी तक

[illegible] दुनिया में रहनेवालों ने ही देशों की खोज की थी। अब उस खोज में प्रांत भी शामिल हो गया।



# बारहवां परिच्छेद

## डेविस की उत्तरी ध्रुव की यात्रा

जब ड्रेक पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा था और फ्रोबिशर कैथे ( चीन ) के लिए उत्तर पश्चिम के मार्ग को खोजने के बजाय सोने की खोज में लग गया था उस समय भी कुछ लोगों की अभिलाषा थी कि कैथे ( चीन ) के लिए उत्तरी मार्ग ढूंढ निकाला जावे। बात यह थी कि 'हम्फ्रे-गिलबर्ट' ने भूगोल के अध्ययन के बाद यह लिखा था कि उत्तर के रास्ते कैथे और पूर्वी द्वीप समूह ( मसाले के द्वीपों ) को जाया जा सकता है। उसका कहना था कि अमेरिका एक महाद्वीप है और उसके चारों ओर समुद्र है। अतएव उत्तर पश्चिम के रास्ते कैथे ( चीन ) पहुंचा जा सकता है।

उत्तर पश्चिम के मार्ग से चीन पहुंचने के लिये जो खोज अभियान भेजा गया उसका नेतृत्व जान डेविस को सौंपा गया। उसको इस खोज के लिए दो छोटे जहाज एक पचास टन का दूसरा पैंतीस टन का दिये गये। जान डेविस बहुत ही कुशल और साहसी नाविक था। किन्तु वे जहाज उस जोखिम भरी और खतरनाक यात्रा के लिए उपयुक्त नहीं थे। क्योंकि उन पर उस बर्फीले प्रदेश की

यात्रा के लिए उपयुक्त साधन उपलब्ध नहीं थे।

जान डैविस ७ जून १५८५ को डार्टमाउथ से इस साहसी यात्रा के लिये चल पड़ा। जुलाई में जहाज एटलांटिक महासागर में पहुँचे। समुद्र उस समय बहुत ही भयंकर था। यही नहीं कि वायु बहुत तेज थी और तूफान उठ रहे थे। समुद्र के घोर गर्जन के कारण स्थिति भयावह हो उठी। कोहरा बहुत ही गहन था। ९ जुलाई को वे इस गहन कोहरे से निकले और उन्हें ग्रीनलैंड के बर्फ से ढके पहाड़ दिखलाई दिए। वह द्वीप और उसके पहाड़ इतने वीरान निर्जन और अनाकर्षक थे कि अंग्रेज नाविकों ने उसको वीरान और निर्जन देश का नाम दिया और उत्तर की ओर बढ़ गए। उनको आशा थी कि वे ग्रीनलैंड के पश्चिमी तट पर आगे जाकर कैथे का मार्ग पाजायेंगे। ग्रीनलैंड के कटे फटे समुद्र तट पर उतर कर डैविस और उसके साथियों ने अपने को ताजा किया और उस स्थान का नाम अपने छोटे लड़के के नाम पर डैविस ने गिलबर्ड-साउन्ड रख दिया।

"उस देश के निवासियों को हमारे जहाजों के आने की खबर लग गई और वे अपनी नावों में हमारे जहाजों के पास आये। वे अपना बायां हाथ सूर्य की ओर उठाए थे। हमने भी दायां हाथ सूर्य की ओर उठा दिया तो वे जहाज पर आ गए। वे बलवान हृष्ट पुष्ट बिना दाढ़ी के थे। हमने उनसे सील की खाल तथा चिड़ियों की खाल के बने वस्त्र खरीदे।"

ग्रीनलैंड के निवासियों को सूर्य की पूजा करते देख डैविस को विश्वास हो गया कि उत्तर पूर्व में खुला समुद्र है अतएव वह यात्रा

और विश्वास के साथ आगे बढ़ा। लेकिन उसने शीघ्र ही अपना प्रयत्न छोड़ दिया क्योंकि जाड़ा नजदीक आ रहा था और वह चौड़े जलसंयोजक में घुसा जो बाद को डैविस जलसंयोजक के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसने उत्तरी ध्रुव रेखा को पार किया और एक स्थान पर लंगर डाला। वहां उसे बहुत बड़े सफेद रीछ देखने को मिले। पहले तो अंग्रेजों का ख्याल यह हुआ कि वे या तो बकरे या भेड़िये हैं परन्तु बाद को उन्हें ज्ञात हुआ कि वे उत्तरी ध्रुव पर रहनेवाले रीछ हैं। वहां आदमियों के रहने का कोई चिह्न न था और न वहां लकड़ी घास या भूमि ही दिखलाई पड़ती थी। वहां केवल चट्टानें थीं। अतएव उन्होंने उसके दक्षिण में लंगर डाला और उन्हें यह देखकर बहुत प्रसन्नता हुई कि वहां एक खुली स्ट्रेट है जो बर्फ से मुक्त है। बड़ी उत्कण्ठा से उन्होंने दोनों जहाजों को उस खुले जल की ओर बढ़ाया परन्तु गहरे कोहरे तथा विपरीत वायु के कारण उन्हें फिर पीछे लौटना पड़ा।

अब जाड़ा बढ़ता जा रहा था। भोजन सामग्री समाप्त होरही थी। डैविस ने यह तो खोज कर ही ली थी कि पश्चिम की ओर खुला समुद्री मार्ग है अतएव अपनी सफलता की खुशी मनाता हुआ वह देश को लौट आया। जैसे ही बसन्त आया डैविस दूसरी खोज यात्रा पर चल पड़ा। उसके द्वारा उत्तर पश्चिम मार्ग का पता लगाने की खबर देश में बड़ी प्रसन्नता से सुनी गई। उसने लोगों को बतलाया कि उत्तर पश्चिमीय समुद्री मार्ग के होने में तनिक भी सन्देह नहीं है। यही नहीं यदि समुद्र बर्फ से मुक्त हो वायु अनुकूल

और समुद्र गहरा हो तो उसे पार किया जा सकता है।

इस उत्साहजनक बयान को सुनकर और सफलता का निश्चय होने के कारण व्यापारियों ने डेविस के लिए दूसरे खोज अभियान की तैयारियाँ पूरी करलीं। मई १५८६ में डेविस चार जहाजों के साथ कठिन यात्रा के लिए चल दिया। जून के मध्य में वह ग्रीनलैंड के पश्चिमीय तट पर पहुंचा। उसको अपने पुराने लंगर स्थान गिलबर्ट साउंड तक पहुंचने के लिए बर्फ की बड़ी बड़ी चट्टानों में से होकर अपना मार्ग बनाना पड़ा।

डेविस का उसके पुराने ऐस्किमो मित्रों ने स्वागत किया। वे उसके जहाज पर आगए और उन्होंने उसके प्रति गहरी मित्रता का प्रदर्शन किया। उनकी सहायता से डेविस उत्तर की ओर मुड़ा तो उसे यह देखकर बहुत प्रसन्नता हुई कि उत्तर की ओर यह प्रदेश वीरान नहीं था। वहां घास और भूमि थी और वसन्त में फूल और पेड़ उत्पन्न होते थे। परन्तु उसको तो उत्तरी पश्चिमी समुद्र में जाना था इस कारण वह वहां न रुक कर आगे बढ़ गया। कुछ दूर जाकर बर्फ और कोहरा इतना गहरा हो गया कि आगे बढ़ सकना सम्भव नहीं था। जहाज रस्सी तक बर्फ में जम गए और जहाजों के नाविक अपने जीवन से निराश हो गए। नाविक बीमार और कमजोर हो गए। उन्हें अब सफलता की कोई भी आशा नहीं रही थी। डेविस के साथियों ने उससे प्रार्थना की कि उसको अपने और उनके जीवन की रक्षा की ओर ध्यान देना चाहिए। दुस्साहस के साथ आगे बढ़ने का एक ही परिणाम होगा कि वे सभी यात्रा में समाप्त हो जायेंगे और

प्रमकी विधवाएं और पितृहीन बालक सदैव उसको कोसा करेंगे।

डेविस ने उन सभी को जो बीमार और रोगी थे और जो भयभीत थे स्वदेश लौटने की आज्ञा दे दी और केवल एक जहाज 'मूनशाइन' को लेकर उस पर चुने हुए नाविक जो साहस के साथ उसके साथ जाना चाहते थे आगे भाग्य के भरोसे चल पड़ा। डेविस ने उस स्ट्रेट को पार किया जो बाद को उसके नाम से प्रसिद्ध हुआ और 'कम्बरलैण्ड' साउण्ड तट की खोज की। एक बार फिर उसने उस किरकेथिन चीन के लिए उत्तर पश्चिम मार्ग की खोज की। किन्तु गर्मी का मौसम बहुत छोटा होने के कारण लगभग समाप्त हो चुका था और उसे केवल लेब्राडर के समुद्र तट की खोज करके ही संतोष करना पड़ा। उसने अनजाने में उसी मार्ग का अनुसरण किया कि जिसको पचासी वर्ष पूर्व जान कैबट काम में लाया था।

जब वह स्वदेश लौटा तो लन्दन के व्यापारी बहुत निराश हुए। यद्यपि डेविस ने बहुत लम्बे और नए समुद्र तट को खोज निकाला था और वह पांच सौ सील मछली की खालें और बहुत अधिक मात्रा में काड फिश लाया था किन्तु वह कैथे का मार्ग न ढूंढ सका। कैथे का मार्ग फिर भी वैसा ही रहस्यमय था। यद्यपि अन्य व्यापारियों ने इस प्रयत्न को छोड़ दिया परन्तु सैण्डर्सन नामक एक बड़े व्यापारी को फिर भी यह तीव्र अभिलाषा थी कि कैथे ( चीन ) के मार्ग को खोज निकालना चाहिए। उसने फिर डेविस से एक बार उत्तर पश्चिमीय मार्ग की खोज के लिए जाने को कहा। साहसी

खोजी डेविस तीन जहाज लेकर फिर तीसरी बार चल पड़ा।

जब वह लब्राडर के समुद्र तट पर पहुँचा तो उसके नाविक वहां के खतरे और कठिनाइयों को देखकर क्षुब्ध हो उठे। जब उसके अधिकांश नाविक मछली का शिकार खेलने गए थे तब वह कुछ अत्यन्त साहसी नाविकों को एक छोटे जहाज पर लेकर आगे उत्तर की ओर खुले समुद्र में चल दिया। मौसम गरम था और समुद्र के दोनों ओर भूमि दिखलाई पड़ रही थी। परन्तु जैसे जैसे डेविस आगे बढ़ता गया समुद्र चौड़ा होता गया। उसने उत्तरी ध्रुव रेखा को पार कर लिया था और वह उत्तर में उस स्थान तक पहुँच गया था जहां तक कोई खोजी नहीं पहुँचा था। अपने दायें हाथ पर एक ऊंची पहाड़ी देखकर उसने उसका नाम 'संडरसन होप' रख दिया क्योंकि उसे ऐसा लगा कि सम्भवतः चीन का मार्ग मिल जायेगा।

३ जून १५८७ खोज के इतिहास में एक स्मरणीय दिवस था जबकि डेविस ग्रीनलैंड तट पर उस सुदूर उत्तरी देश में पहुँचा। वहां एक विस्तृत नीला समुद्र फैला हुआ था। उसमें बर्फ की चट्टानें नहीं थीं केवल कतिपय बड़े बड़े हिमपिण्ड तैर रहे थे जिनकी ऊंची सफेद चोटियां आसमान को छू रही थीं। पूर्व में ग्रीनलैंड के पहाड़ थे और उनके पार सबसे बड़ा ग्लेशियर फैला हुआ था। यह दृश्य वास्तव में ऐसा सुन्दर था कि मानो वह काल्पनिक परियों का देश हो।

लेकिन आगे चलकर डेविस को फिर निराश होना पड़ा। उत्तर से एक भयंकर वेगवती वायु चलने लगी। उसके फलस्वरूप

समुद्र में एक विशाल हिमखण्ड एटलांटिक महासागर की ओर बहकर आ गया और उसने डैविस का रास्ता रोक लिया। बार बार उसने प्रयत्न किया किन्तु आगे बढ़ना असम्भव था अस्तु अनिच्छा पूर्वक और निराश होकर डैविस लौट पड़ा।

जब वह इङ्गलैंड वापस आया तो लोगों ने यह प्रश्न करना आरम्भ किया कि डैविस को तीन बार खोज पर भेजा गया किन्तु वह कैथे ( चीन ) का मार्ग नहीं ढूंढ सका। उन्हें यह मालूम नहीं था कि उस मार्ग में कैसी भयङ्कर कठिनाइयाँ थीं। वास्तव में डैविस ने ग्रीनलैंड के उत्तरी ध्रुव प्रदेश के सात सौ बीस मील लम्बे समुद्र तट का पता लगाया लैब्राडर के तट की खोज की और उत्तरी ध्रुव जिसके बारे में केवल लोग कपोल-कल्पित बातें ही जानते थे उसका सही पता लगाया। सच तो यह है कि उत्तरी ध्रुव के सम्बन्ध में इतनी महत्वपूर्ण खोज किसी ने भी नहीं की थी।

# तेरहवां परिच्छेद

## बारनेट की स्पिटबर्गन की यात्रा

जब जान डेविस कैथे (चीन) के लिए उत्तर पश्चिमी मार्ग खोजने में तीन बार असफल हो गया तब अंग्रेजों ने इस प्रयत्न को छोड़ दिया। लेकिन ऐम्सटर्डम के व्यापारियों ने इस खोज को अपने हाथ में ले लिया। १५९४ में उन्होंने एक कुशल और अनुभवी नाविक बारनेट के नेतृत्व में खोज अभियान उत्तर पश्चिम से कैथे (चीन) को जाने का मार्ग ढूंढ निकालने के लिए भेजा। बारनेट की तीन यात्राएं भौगोलिक खोजों के इतिहास में सबसे अधिक रोमांचकारी घटनाएं हैं। बारनेट की मृत्यु के उपरांत जो पुस्तक लिखी गई उसकी भूमिका में इन यात्राओं के संबन्ध में जो अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण और विचित्र भी जैसा दर्दनाक चित्र खींचा गया है वैसा कहीं पढ़ने को नहीं मिलता। उसमें लिखा है:—

"बारनेट ने तीन यात्राएं एक के बाद दूसरी तीन वर्षों में कीं। यह यात्राएं नार्वे, मस्कोवाई तथा तातार के उत्तर की ओर कैथे के मार्ग के लिए की गई थीं। इन यात्राओं के फलस्वरूप अस्सी डिगरी अक्षांश रेखा के अन्दर आने वाले देश की खोजें भी की

गई जिसके बारे में अनुमान था कि वह ग्रीनलैंड है। अन्तिम यात्रा में 'खेसे' जहाज बर्फ में दब गया और उसके नाविकों ने नोवा-जेम्बला में अत्यन्त ठंडे प्रदेश में एक झोपड़ा बनाकर उसमें दस महीने काटे। उन दस महीनों के दिन उन्होंने अत्यन्त ठंडी मरुभूमि में बड़ी दयनीय स्थिति में काटे क्योंकि उन्हें वहां कोई भी आदमी देखने को नहीं मिला। बाद को किस प्रकार अपने जीवन को बचाने के लिए वे एक हजार मील खुली नाव में समुद्र में जाने के लिए विवश हुए। वह एक हजार मील की यात्रा खुले समुद्र में बड़ी कठिनाई अकल्पनीय खतरों में और भूखे रह कर की गई।"

भौगोलिक खोजों के लिए मानव ने जो त्याग व बलिदान और साधना की है उसका यह अद्भुत उदाहरण था। जिसके संबन्ध में तीन सौ पन्द्रह वर्ष पूर्व यह विवरण लिखा गया था।

१५९४ में प्रख्यात नाविक विलियम बारेन्ट्स के नेतृत्व में एम्सटर्डम के व्यापारियों ने चार जहाज इस उद्देश्य से भेजे कि वह उत्तरी सागर में घुसकर खोजें और चीन के मार्ग की खोज करें। जुलाई के महीने में ये सब जहाज नोवा-जेम्बला के पश्चिमी समुद्र तट पर पहुंच गए। वहां से बारेन्ट्स ने हवा के रुख के अनुसार चलना प्रारम्भ कर दिया। केवल वह इस बात का ध्यान रखता था कि उसका रुख उत्तर की ओर रहे और वह समुद्र तट के समीप ही रहे दूर न निकल जावे। ९ जुलाई को सुदूर उत्तर में उन्हें एक कटाफटा तट दिखलाई दिया जहां उन्हें पहला ध्रुवीय भालू मिला। इस कारण उन्होंने उस स्थान का

नाम 'बियर-द्वीप' रख दिया। भालू ने जहाज पर चढ़ना चाहा परन्तु उस पर गोली चलाई गई। बारेन्ट्स के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब उसने देखा कि यद्यपि गोली उसके शरीर में लगी थी फिर भी वह पानी में कूद पड़ा और समुद्र तट की ओर तैरने लगा। उसकी आश्चर्यजनक शक्ति को देखकर सभी दंग थे जो लोग नाव में उसके पीछे जा रहे थे। उन्होंने ऐसा भालू कभी नहीं देखा था। अतएव उन्होंने उसको जिंदा पकड़कर हालैंड ले जाने का निश्चय किया और एक रस्सा उसकी गर्दन में डालकर उसको नाव के पास खींचना चाहा। परन्तु उस भालू ने इतना जोर लगाया कि उनकी नाव डगमगाने लगी। परन्तु उन्हें उस भालू को मारना ही पड़ा और वे उसकी खाल लेकर ही संतुष्ट हो गए जिसे वे पहली यात्रा की समाप्ति पर ऐम्सटर्डम ले गए।

यहाँ से बारेन्ट्स और आगे उत्तर की ओर बढ़ा और एक ऐसे स्थान पर आया जहाँ बर्फ का विस्तृत चौरस मैदान था और मौसम कुहरे से भरा था। फिर भी वह सावधानी से बर्फ को बचाता हुआ चलता ही चला गया। उन्होंने देखा कि नोवाया-जेम्ल्या की सारी भूमि बर्फ से ढक गई है। उस बर्फ के स्थान से चलकर वे द्वीपों की ओर गए जिनका नाम उन्होंने हालैंड के राजकुमार के नाम पर 'आरेंज-द्वीप' रख दिया। वहाँ उन्होंने देखा कि सौ सौ समुद्री घोड़े समुद्र तट पर लेटे हुए सूर्य की धूप ले रहे हैं।

जब वे लोग हालैंड लौट कर गए तो उन्होंने बतलाया

कि समुद्री घोड़ा अद्भुत और अत्यन्त बलवान समुद्री जन्तु है। यह लोमड़ी से बहुत बड़ा होता है उसकी खाल सील मछली के समान होती है, उसके बाल बहुत छोटे होते हैं उसका मुंह शेर की भांति होता है उसके चार दांतें होती हैं, किन्तु कान नहीं होते। जब नाविकों ने भालों और अन्य अस्त्रों से कुछ समुद्री घोड़ों को मार कर अपने साथ हालैंड दिखाने के लिए ले जाने का निश्चय किया। वे साहस के साथ उनको मारने के लिए आगे बढ़े परन्तु उनको मारना उतना सरल नहीं था जितना वे समझते थे। उसी समय हवा बहुत तेज चलने लगी और उसने बर्फ को टुकड़े टुकड़े कर दिया। अतएव उन्हें समुद्री घोड़ों के कुछ हाथी दांत के समान दांतों को लेकर ही संतोष करना पड़ा जो कि बहुत लम्बे थे। इन वस्तुओं को तथा अन्य मूल्यवान वस्तुओं को इकट्ठा करके बारनेट को विवश होकर उन ऊंची अक्षांश रेखाओं से वापस लौटना पड़ा और वह साढ़े तीन महीने के बाद सकुशल देश लौट आया।

बारनेट ने लौट कर 'नौका-यात्रा' के संबंध में जो रिपोर्ट दी उससे ऐम्सटर्डम के व्यापारी बहुत उत्साहित हुए और उन्होंने कैथे और चीन के लिए उत्तर की ओर मार्ग ढूंढ निकालने का प्रयत्न जारी रखने का निश्चय किया। अतएव उन्होंने बारनेट को दूसरा खोज अभियान ले जाने को कहा। दूसरे वर्ष बारनेट फिर यात्रा पर गया किन्तु उसको यात्रा पर चलने में इतनी देर हो गई कि वह दूसरी यात्रा में अधिक सफलता प्राप्त नहीं कर सका। अब हम उसकी तीसरी यात्रा के संबंध में लिखेंगे जिसमें बारनेट को खोज

के इतिहास में प्रसिद्ध कर दिया।

मई १५९६ में बारेन्ट्स ऐम्सटर्डम से दो जहाज लेकर तीसरी और अन्तिम यात्रा के लिए बर्फ से जमे उत्तरी समुद्र की ओर चल पड़ा। एक जून १५९६ को बारेन्ट्स एक ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां रात्रि होती ही नहीं थी सदैव दिन ही रहता था। कुछ दिनों के बाद उन्होंने एक ऐसा दृश्य देखा जिससे सबके सब नाविक भौचक्के रह गए। सूर्य की प्रत्येक दिशा में एक और सूर्य था और दो और इन्द्रधनुष थे। एक इन्द्रधनुष उन सूर्यों के चारों ओर था और दूसरा धनुष बड़ी अनोखी गोलाकार रेखा को घेरे था। बारेन्ट्स ने देखा कि वह उत्तरी ध्रुव से ७१ डिग्री अक्षांश रेखा पर था।

आगे उन्हें लपलैंड की उत्तरी अन्तरीप दिखलाई दी और वे उत्तरी पश्चिमी मार्ग पर चलते हुए उस छोटे से द्वीप पर आए जिसे उन्होंने 'बियर द्वीप' नाम दिया। यहां बारेन्ट्स के साथी मरते मरते बचे। वहां एक लम्बा ऊंचा बर्फ का पहाड़ था वे इस धुन में थे कि उसकी चोटी पर चढ़ कर समीपवर्ती प्रदेश को देखा जावे सब पर चढ़ गए। परन्तु चढ़ने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि वह इतना चिकना और फिसलने वाला है कि उस पर से उतरना असम्भव है। वह इतना चिकना और फिसलने वाला था कि यदि वे खड़े होकर उस पर से उतरने का प्रयत्न करते तो सब गिर पड़ते और उनकी गर्दनें टूट जाती। अतएव वे बर्फ पर जम कर बैठ गए और सरकना आरम्भ किया किन्तु यह भी बहुत खतरनाक

ा क्योंकि पहाड़ के नीचे बहुत कठोर चट्टानें थीं अतएव हाथ र टूट जाने का भय था। बारेन्ट्स स्वयं नाव में बैठा रहा था। वह ऊपर नहीं चढ़ा था। जब उसके साथी चढ़ कर उस बर्फ के चिकने पहाड़ से उतर रहे थे तो बारेन्ट्स नाव में बैठ कर बहुत चिन्ता के साथ यह दृश्य देख रहा था। परन्तु कोई अप्रिय घटना नहीं घटी और वे लोग सकुशल नीचे पहुँच गए।

एक बार फिर बारेन्ट्स के जहाज बर्फ और ध्रुवीय भालुओं के देश में चल रहे थे। कोहरा और पाला पड़ रहा था। इस कारण मार्ग ठीक दिखलाई नहीं देता था। फिर भी बारेन्ट्स उत्तर की ओर बढ़ता ही गया। १९ जून को उन्हें भूमि दिखलाई पड़ी। यह स्थान प्रदेश बहुत विस्तृत था। बारेन्ट्स ने सोचा कि यह ग्रीनलैंड है, परन्तु वास्तव में यह 'स्पिट्सबर्गेन' था जिसको उसने खोज निकाला था।

यहाँ उन नाविकों को बहुत सी वस्तुओं ने आश्चर्य में डाल दिया। यद्यपि वे इतनी ऊँची उत्तरी अक्षांश रेखाओं पर थे उन्हें यह देखकर महान आश्चर्य हुआ कि यहाँ घास और पत्ती वाले पेड़ पैदा होते थे और घास खाने वाले पशु थे। जबकि उस स्थान से कई डिग्री दक्षिण में न तो घास और पत्ते वाले वृक्ष ही होते थे और न घास खाने वाले पशु ही थे। वहाँ तो केवल भालू और लोमड़ी जैसे पशु होते थे जो मांस खाते थे।

एक जुलाई तक बारेन्ट्स ने उस विस्तृत प्रदेश स्पिट्सबर्गेन के पश्चिमी तट की खोज करली और वह दक्षिण में 'बियर-द्वीप' की

ओर चल पड़ा। वह स्पिट्जबर्गन के समुद्र तट पर उतरा नहीं अतएव उस ध्रुवीय नवीन क्षेत्र के सम्बन्ध में अधिक वर्णन नहीं मिलता है। उत्तर के चौड़े समुद्र को जिसको अब 'बारेन्ट-समुद्र' कहते हैं पार कर वह पुनः नोवा-जैम्बला में आकर उतरा। वहाँ से उसके पश्चिमी तट के साथ साथ चलते हुए वह हिम बिन्दु आइस-पाइन्ट तक आया। वहाँ बारेन्ट और उसके नाविकों को ध्रुवीय भालुओं तैरते हुए हिम खंडों और तेज और ठंडी आंधी ने बहुत परेशान किया। फिर भी वे लोग 'नोवा-जैम्बला' के उत्तरी सिरे तक समुद्र तट के साथ चलते चले गए। वहाँ उन्हें आशा के विपरीत एक अच्छा बंदरगाह मिल गया जिसमें उन्होंने जहाजों के लंगर डाल दिये। अब हवा और भी अधिक तेज हो गई थी और बर्फ भीषण वेग से जहाज के अन्दर आ रहा था। धीरे धीरे जहाज बर्फ से घिरता जा रहा था। जैसे जैसे हवा तेज होती गई और बर्फ कठोर होता गया उसका परिणाम यह हुआ कि नावें कठोर बर्फ तथा जहाज के बीच में दब कर टुकड़े टुकड़े हो गई और ऐसा प्रतीत होने लगा कि जहाज भी बर्फ से दब कर टुकड़े टुकड़े हो जावेगा।

अगस्त का महीना आ गया और जैसे जैसे बर्फ बढ़ता गया वे एक प्रकार से कठघरे में बन्द हो गए। उन्होंने उस बर्फ की जेल से बाहर निकलना चाहा किन्तु यह असम्भव था। क्योंकि उस वीरान बर्फ से जमे हुए अत्यन्त शीत स्थान पर घोर कष्ट और दुख के साथ जाड़े के दिन निकालने के सिवाय कोई दूसरा चारा

नहीं था। बारनेट के लिए और अधिक खोज कर सकना सम्भव नहीं था परन्तु उन पर जो बीती उसकी कथा अत्यन्त रोमांचकारी है। बर्फ अब जहाज पर ऊँचा चढ़ता जा रहा था और प्रत्येक क्षण यह भय बढ़ता जा रहा था कि जहाज अब टुकड़े टुकड़े होने वाला है। उन्होंने जहाज को छोड़ दिया और समुद्र तट पर जो भी पेड़ जड़ें और झाड़ियाँ बह कर दूर से आ गई थीं उन्हें इकट्ठा कर लिया। मानो भगवान ने उनके लिए ही उन पेड़ों को बहाकर भेजा था। सितम्बर के महीने में वे बर्फ में से समुद्र तट से ढो ढो कर पेड़ लाते रहे। इसका कारण यह था कि वे केवल सोलह व्यक्ति थे और वे भी निर्बल थे। इस प्रकार सितम्बर के महीने में उन्होंने झोंपड़ा बनाने के लिए यथेष्ट लकड़ी इकट्ठी कर ली।

अक्टोबर और नवम्बर के महीने उन्होंने उस झोंपड़े के अन्दर निकाले। बाहर तेज हवा तूफान और बर्फ के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। उत्तर की तेज हवा और तूफान तथा बर्फ लगातार बिना रुके चल रही थी। प्रत्येक दिन वे किसी प्रकार कुछ लोमड़ियों को फांस लेते और उनके मांस को खा लेते। उनके फर से वे अपने लिए गरम टोपियां बनाते। वे पत्थरों को गरम करके अपने सोने के स्थान पर रखते। परन्तु उनकी चादरें जल से भीगी तो जम जाती और अन्त में उनकी घड़ी भी जम गई।

जाड़ा बढ़ता ही जा रहा था। वे एक दूसरे को दुखी और निराश होकर देखते क्योंकि वे जानते थे कि यदि शीत और अधिक बढ़ा तो वे सब मर जावेंगे। बड़ा दिन आया और चला गया। उन्हें

थोड़ी आशा हुई क्योंकि सूर्य जितना नीचा जा सकता था चला गया अब सूर्य ऊपर चढ़ेगा। परन्तु जैसे जैसे दिन लम्बा होता गया वैसे ही वैसे शीत पड़ता गया। बर्फ इतना गहरा गिरा कि जमीन से झोपड़े की छत तक पहुंच गया।

नया वर्ष आया किन्तु वे अभी भी कष्ट में थे। वे साहसी शीत सहते और रोग से युद्ध कर रहे थे। जनवरी फरवरी मार्च और अप्रैल बीत गया किन्तु उनका छोटा सा जहाज अब भी बर्फ में जकड़ा हुआ था। परन्तु अब उनके मन में आशा का संचार होने लगा था क्योंकि सूर्य की गरमी तेज होती जा रही थी। अतएव उन्होंने अपनी नावों तथा पालों की मरम्मत करनी आरम्भ करदी। वे इतने बीमार और कमजोर हो गए थे कि अधिक मेहनत नहीं कर सकते थे। परन्तु फिर भी उन्होंने किसी प्रकार नावों की मरम्मत की और जून के मध्य तक नावें तयार हो गईं। वे बर्फ को काट कर अपनी नावों को खुले समुद्र में ले गए। वहां से जीवित बच निकलने का उनके लिए यही एक मात्र उपाय था। उन्होंने जहाज को छोड़ दिया और दो छोटी खुली नावों में बैठ कर वे खुले समुद्र की ओर चल दिए।

चलते समय विलियम बारेन्ट्स ने एक पत्र लिखा और उसको एक डिब्बे में बन्द कर चिमनी में लटका दिया। उस पत्र में लिखा था कि हम लोग किस प्रकार हालैंड से चीन का रास्ता खोजने को आए थे और किस प्रकार जहाज के जम जाने और अत्यन्त शीत पड़ने पर अपने जीवन की रक्षा करने के लिए उन्हें यह

झोंपड़ा बनाने पर विवश होना पड़ा। वहां उन्होंने दस महीने व्यतीत किए और किस प्रकार उन्हें विवश होकर दो नावें खुली बनानी पड़ीं जिन्हें लेकर वे खुले समुद्र में उतरने पर विवश हुए क्योंकि उनका जहाज बर्फ में जम गया था।

बारेन्ज स्वयं बहुत ही बीमार था और चल भी नहीं सकता था। अतएव उसके साथी उसको उठाकर नाव पर ले गए। १४ जून १५९७ को वह छोटा सा दल अपने शीत में रहने के स्थान को छोड़ कर उन दो छोटी और खुली नावों में चल दिया। वे 'हिम बिन्दु' आइस पायन्ट की ओर बढ़े जा रहे थे। लेकिन बारेन्ट्स मृत्यु के समीप था। उसने धीमी आवाज में पूछा "क्या हम आइस-पायन्ट के पास हैं यदि हम आइस-पायन्ट के पास हों तो मुझे ऊंचा उठा लो। मैं एक बार फिर उस स्थान को देखना चाहता हूं।" उसके साथियों ने उसको उठाकर वह स्थान दिखला दिया। उसी समय एकाएक हवा तेज होने लगी और थोड़ी ही देर में वह इतनी प्रबल हो गई कि उसके सामने खड़ा होना कठिन था। उस हवा के साथ गरम बर्फ इतनी तेजी से उन पर आ रहा था कि उनके सर के बाल तक सीधे खड़े हो गए। सारा दृश्य और परिस्थिति इतनी भयावह हो उठी थी कि सभी ने समझ लिया कि सबका अन्त आ गया।

उन्होंने उन नावों को किनारे पर ले जाकर बर्फ पर खींच लिया और अपने बीमार नेता तथा कमांडर बारेन्ट्स को बर्फीली भूमि पर लिटा दिया, जहां वह कुछ दिनों के बाद मर गया। बारेन्ज

के साथियों को उसकी मृत्यु से गहरा शोक हुआ। उन्होंने उसके बारे में लिखा है "हमारा मार्गदर्शक और नेता जिस पर हम ईश्वर के बाद भरोसा करते थे चला गया और हम रह गए। १ नवम्बर १५९७ को बारह कमजोर और विपत्तियों से थके नाविक जो उस समय भी लोमड़ी की खाल की टोपियां और ध्रुवीय भालुओं की खाल के कोट पहने थे अपनी उन दो छोटी और खुली नावों में नोवा ज़ेम्ब्ला से ऐम्सटर्डम पहुंचे। ऐम्सटर्डम के व्यापारियों की यह धारणा बन गई थी कि बारेन्ट्स तथा उसके साथी ध्रुवीय यात्रा में मर खप गए। जब उन बारह नाविकों ने व्यापारियों को अपनी यात्रा का विवरण सुनाया तो वे आश्चर्यचकित हो गए, और बारेन्ट्स और उसके सहयोगियों के साहस की प्रशंसा करते नहीं थकते थे।

दो सौ चौहत्तर वर्ष बाद १८७१ में नोवा-ज़ेम्ब्ला में बारेन्ट्स के शीत काल के स्थान की पुनः खोज की गई। उस स्थान पर अंगीठी के ऊपर खाना बनाने की देगचियां मिलीं। पुरानी घड़ी दीवार के सहारे ज्यों की त्यों रक्खी थी। सभी अस्त्र शस्त्र औज़ार और बर्तन ज्यों के त्यों रक्खे थे। यही नहीं वे संगीत वाद्य और पुस्तकें जिनके द्वारा विपत्ति में फंसे हुए उन साहसी नाविकों की दो सौ चौहत्तर वर्ष पूर्व लम्बी रातें कटती थीं वे भी वहां मौजूद थीं। उन वस्तुओं में एक जोड़ा छोटे जूते और एक फ्लूट भी था। यह दोनों वस्तुएं एक छोटे लड़के की थीं जो जाड़े में वहां मर गया था। अब दो सौ चौहत्तर वर्ष उपरान्त १८७१ में उन साहसी नाविकों के

उस स्मारक स्थान को खोजने के लिए लोग गए तो उन वस्तुओं को देखकर उन्हें रोमांच हो आया और उनकी आँखों में आँसू आगए। वे वस्तुएं अपने उन वीरों की मानो गौरवपूर्ण गाथा सुना रही थीं।



# चौदहवां परिच्छेद

## हडसन द्वारा हडसन खाड़ी की खोज

उत्तरी ध्रुव के रास्ते कैथे (चीन) को पहुंचने की गहरी आकांक्षा अभी बुझी नहीं थी। जान डेविस ने नव निर्मित ईस्ट इंडिया कम्पनी के पहले जहाजी बेड़े को 'आशा अन्तरीप' (केप आव गुड होप) के मार्ग से भारत पहुंचा दिया था। उसके बाद वह मर गया। उसको मरे दो वर्ष हो गए थे। परन्तु व्यापारी चाहते थे पूर्व के लिए कोई छोटा रास्ता ढूंढ निकाला जावे। अतएव मस्कोवाई कम्पनी ने हडसन को उत्तरी ध्रुव के रास्ते एक बार फिर चीन का रास्ता खोज निकालने के लिए नियुक्त किया। हडसन उत्तरी ध्रुव के रास्ते चीन तथा पूर्व के देशों तक पहुंचनेवाले उन खोजियों में था जो अपने प्रयत्न में समाप्त होगया। यह बात नहीं थी कि हडसन उत्तरी ध्रुव के मार्ग की कठिनाइयों को नहीं जानता था। उसको मालूम था कि इस प्रयत्न में विलोबी तथा बारेन्ड ने अपनी जान खो दी तथा फ्रोबिशर और डेविस को कैसी भयंकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। परन्तु वह एक वीर और साहसी नाविक था अतएव उसने एक बार फिर उस भयंकर

यात्रा पर जाना स्वीकार कर लिया ।

खोज के इतिहास में कोई भी खोजी इससे अधिक साहस-पूर्ण और खतरनाक यात्रा पर नहीं गया था । जब हडसन यात्रा के चला तो उसके पास पचासी टन का एक छोटा सा जहाज उसका छोटा पुत्र जॉन जो मेट तथा आठ नाविक थे ।

चलने से पूर्व हडसन के नेतृत्व में सभी नाविक सेंट ऐथलबर्ग के गिरजे में प्रभु से यात्रा की सफलता के लिए प्रार्थना करने गए । हडसन के चेहरे में आत्मविश्वास की आभा दृष्टिमान थी । प्रार्थना से लौट कर जब वे अपने जहाज की ओर जाने लगे तो मस्कोवाई कम्पनी के व्यापारियों ने उन्हें विदाई दी । विदा होकर हडसन ने लंगर उठवा दिये और वह उस खतरनाक यात्रा पर चल पड़ा । ६ सप्ताह की कठिन यात्रा के बाद हडसन ग्रीनलैंड पहुंचा । उसके जहाज के डैक पर बर्फ जम गया था । उसके जहाज की रस्सियां पत्थर की तरह और पाल तख्ते की तरह कठोर हो गए थे । उत्तर-पूर्वी तेज हवा और बर्फ जहाज पर आक्रमण कर रहे थे । आगे कठोर बर्फ की चट्टानें रास्ता रोके थीं । आगे बढ़ना बहुत कठिन था । लेकिन हडसन ने उन बर्फ की विशाल चट्टानों के किनारे से बचाकर अपने जहाज को निकाला । वह पहला नाविक था जिसने ऐसे साहस का काम किया था । बर्फ से बच कर हडसन स्पिट्सबर्गेन पहुंचा जिसकी 'बारेंट्स' ने खोज की थी । हडसन ने उसके पश्चिमी तट से उत्तर की ओर बढ़ना प्रारम्भ किया और उसने वहां के द्वीपों बन्दरगाहों तथा बड़े बड़े

वह मार्ग छोड़ दिया और पश्चिम की ओर चल पड़ा।

मस्कोवाई कम्पनी के लिए हडसन जो यात्राएं कर रहा था उसकी खबर डच व्यापारियों को लग चुकी थी। वे भी अंग्रेजों की भांति उत्तर से पूर्व के लिए छोटे रास्ते की खोज में थे। अतएव डच ईस्ट इंडिया कम्पनी ने हडसन को कम्पनी के एक खोज अभियान को ले जाने के लिए आमन्त्रित किया। हडसन ने उस निमन्त्रण को स्वीकार कर लिया और १६०९ में बसन्त के आरम्भ में वह ऐम्सटर्डम से चल पड़ा। उसके जहाज पर डच और अंग्रेज नाविक थे। इस यात्रा पर भी उसका पुत्र जॉन उसके साथ था। मार्ग में हडसन न्यू-फाउन्डलैण्ड पहुँचा। वहां कुछ काड मछली पकड़ी और उससे खाने का बड़ा सुभीता होगया। वहाँ से हडसन दक्षिण की ओर बढ़ा। वह अपने मित्र कैप्टेन जान स्मिथ के उपनिवेश वर जीनिया की ओर जाना चाहता था। ७ अगस्त १६०९ को हडसन खाड़ के न्यूयार्क के पास पहुँचा जो उस समय 'न्यू ऐम्स-टर्डम' कहलाता था। २ सितम्बर को वह उस बड़ी नदी के मुँह पर पहुँचा जो अब उसके नाम से प्रसिद्ध है। वह वहां सारे दिन गहरे कोहरे और बर्फीली हवा में चक्कर काटता रहा। जब सूर्य चमका तो दिखलाई दिया कि वहां भूमि है जो टूटे फूटे द्वीपों की भांति है। वहां एक बड़ी झील थी जहां हडसन ने रुकने का निश्चय किया। उसके समीप ही तीन नदियां थीं जहां हडसन तीसरे पहर पहुँचा। यह देख कर उसे बहुत ही प्रसन्नता हुई कि वहां एक बहुत अच्छा बन्दरगाह था। उसने जहाज को उसी में खड़ा किया। वहां उन्होंने बहुत बड़ी बड़ी

का एक जहाज 'डिसकवरी' था। उसके साथ उसका तरुण पुत्र था और एक विश्वासघाती बूढ़ा मेट था तथा कुछ नाविक थे। हडसन ने उस विस्तृत ऐटलांटिक महासागर को अन्तिम बार पार किया। इस बार वह आइसलैण्ड के मार्ग से गया जहाँ उसे बहुत से पशु पक्षियों का शिकार करने को मिला और खाने को ताजा मांस प्राप्त हुआ। वहाँ अच्छा मांस खाने तथा आइसलैण्ड के गरम जल में स्नान करने से असन्तुष्ट नाविक बहुत प्रसन्न हुए। उसके साथियों ने पिछले वर्ष का नया सुंदर प्रदेश खोजा था वहाँ बसने को कहा। किन्तु हडसन को बर्फ से जमा हुआ उत्तर बुला रहा था। वह उसके रहस्य को जानना चाहता था। अतएव उसने लोगों की राय नहीं मानी और वह ग्रीनलैण्ड की ओर चल पड़ा। वह वीरान प्रदेश के पास से होकर लैब्राडर के बर्फीले समुद्र तट पर पहुँचा। वहाँ से वह उस स्ट्रेट में घुसा जो आज उसके नाम से प्रसिद्ध है। वह वहाँ तीन महीने तक उसके आसपास चक्कर लगाता रहा किन्तु उसको पश्चिम की ओर जाने का कोई मार्ग नहीं मिला।

जाड़ा आ रहा था रातें लम्बी और ठंडी होती थीं और पृथ्वी बर्फ से ढक गई थी। वे स्ट्रेट के कई सौ मील दक्षिण में थे और प्रशान्त महासागर के लिए कोई मार्ग नहीं मिल रहा था। हडसन इस आशा में सुदूर पश्चिम की खाड़ी 'जेम्स-बे' तक आया था कि उसे दक्षिण समुद्र मिल जायेगा। परन्तु वहाँ पहुँच कर उसने निराश होकर देखा कि दक्षिणी समुद्र नहीं है। अब हडसन को ज्ञान हुआ कि उसे पृथ्वी और जाड़े ने घेर लिया है और वह उस वीरान

एक चौथ रोटी खाई। जब हडसन ने उनको रोटियां बांटी तो वह रो पड़ा क्योंकि रोटियां मुश्किल से पन्द्रह दिन के लिए थीं और यद्यपि उन्होंने कुछ मछलियां पकड़ ली थीं परन्तु वे उनके भूखे पेटों के लिए बहुत कम थीं।

जून में अनुकूल हवा के साथ हडसन ने जहाज को वापस स्वदेश की ओर मोड़ा परन्तु कुछ दिनों जाने के बाद ही बर्फ के कारण रुकना पड़ा। अब जहाज पर विद्रोह भड़क उठा। हडसन और उसके साथी नाविकों में आपस में अविश्वास उत्पन्न हो गया। कुछ नाविक नीच और गुंडे थे जो भूख और थकावट के कारण खतरनाक हो गए थे। खोज के इतिहास में इससे अधिक बीभत्स नीच और लज्जाजनक घटना दूसरी नहीं हो सकती जो अब घटी। इन नीच और गुंडे नाविकों ने हडसन और उसके पुत्र को उसके द्वारा खोजी गई हडसन की खाड़ी में मरने के लिए छोड़ दिया। इन नीचों ने षड्यंत्र किया कि हडसन उसका पुत्र और सभी बीमार और अपंग लोगों को जहाज से हटा कर खाड़ी में मरने के लिए छोड़ दिया जावे और जो भी कुछ भोजन सामग्री बचे वह आपस में बांट ली जावे।

प्रातःकाल होते ही उन्होंने हडसन को पकड़ लिया और उसके हाथों को पीछे बांध दिया। हडसन ने पूछा इसका क्या मतलब है? दुष्टों ने उत्तर दिया जब तुम डोंगी हो नाव में होगे तो तुम्हें इसका अर्थ मालूम हो जावेगा। उन्होंने नाव को समुद्र में उतारा उसमें हडसन और उसके पुत्र को डाल दिया। उसके उपरान्त कमजोर बीमार

प्रदेश में फंस गया है। उसके नाविक पहले ही असंतुष्ट थे अब तो उनका असंतोष चरम सीमा पर पहुँच गया। एक नवम्बर को वे एक स्थान पर रुक गए और उन्होंने जाड़ा बिताने के लिए एक स्थान चुना। उस दिन के बाद वे बर्फ से ढक गए और बर्फ उस दिन पड़ रहा था। ६ महीने तक वे एक प्रकार से कैदी का जीवन व्यतीत करते रहे। पहले तीन महीना तक उन्हें भोजन की कठिनाई नहीं हुई क्योंकि वे पक्षियों का शिकार कर लेते थे। किन्तु व चिड़ियां बसंत आते ही उड़ गईं और वे अब उस निर्जन वीरान देश में बाद के दिन बिताते रहे थे भूख से पीड़ित रहने लगे। वे अब भोजन की तलाश में जंगल पहाड़ और घाटियों में घूमते और मेंढक तथा ऐसे ही कीट जन्तु जो भी मिलते उनसे ही अपनी क्षुधा बुझाते। मई के महीने में बर्फ पिघलना शुरू हुआ और उन्होंने मछली मारना शुरू किया। पहले दिन उन्होंने पांच सौ बड़ी मछलियां पकड़ीं। इससे उनको भरपेट और अच्छा भोजन मिला। खाने के लिए आशा बंधी और उनका स्वास्थ्य भी सुधरा। हडसन ने एक बार फिर अन्तिम प्रयत्न किया कि पश्चिम का मार्ग खोजने का प्रयास किया जावे। किन्तु सब लोग विद्रोही हो उठे। उन्होंने एक स्वर से कहा कि हम देश के बाहर इस बीहड़ प्रदेश में भूख से मरने की अपेक्षा स्वदेश में फांसी के द्वारा मरना पसंद करेंगे।

हडसन ने लौटना स्वीकार कर लिया। लौटने के लिए सारी तैयारियां करली गई। उसने रोटी के भंडार से पहले रोटियां निकाल कर सब की सब नाविकों में बांट दी। हर एक के हिस्से में केवल

एक पौंड रोटी आई। जब हडसन ने उनको रोटियां बांटी तो वह रो पड़ा क्योंकि रोटियां मुश्किल से पंद्रह दिन के लिए थीं और यद्यपि उन्होंने कुछ मछलियां पकड़ ली थी परन्तु वे उतने भूखे पेटों के लिए बहुत कम थीं।

जून में अनुकूल हवा के साथ हडसन ने जहाज को वापस स्वदेश की ओर मोड़ा परन्तु कुछ दिनों चलने के बाद ही बर्फ के कारण रुकना पड़ा। अब जहाज पर विद्रोह भड़क उठा। हडसन और उसके साथी नाविकों में आपस में अविश्वास उत्पन्न हो गया। कुछ नाविक नीच और गुंडे थे जो भूख और आपत्ति के कारण खतरनाक हो गए थे। खोज के इतिहास में इससे अधिक बीभत्स नीच और लज्जाजनक घटना दूसरी नहीं हो सकती जो घट गयी। उन नीच और गुंडे नाविकों ने हडसन और उसके पुत्र को उसके द्वारा खोजी गई हडसन की खाड़ी में मरने के लिए छोड़ दिया। उन नीचों ने यह षड्यंत्र किया कि हडसन उसका पुत्र और सभी बीमार और अपंग लोगों को जहाज से हटा कर खाड़ी में मरने के लिए छोड़ दिया जावे और जो भी कुछ भोजन सामग्री बचे वह आपस में बांट ली जावे।

प्रातःकाल होते ही उन्होंने हडसन को पकड़ लिया और उसके हाथों को पीछे बांध दिया। हडसन ने पूछा इसका क्या मतलब है? दुष्टों ने उत्तर दिया जब तुम शीघ्र ही नाव में होगे तो तुम्हें इसका अर्थ मालूम हो जावेगा। उन्होंने नाव को समुद्र में उतारा उसमें हडसन और उसके पुत्र को डाल दिया। उसके उपरान्त कमजोर बीमार

और अर्धम लोगों को भी एक एक करके उस नाव में उतरने पर विवश किया गया। आखिरी समय पर कारपेन्टर उस नाव में कूद पड़ा उसने अपने पिता के साथ विश्वासघात करने की अपेक्षा उसके साथ मर जाना अच्छा समझा। उसके उपरांत वे नीच नाविक 'डिसकवरी' जहाज के सब पालों को खोल तेजी से ले गए।

साहसी हडसन का अपने द्वारा खोजी हुई हडसन की खाड़ी में किस प्रकार दुखद अन्त हुआ कोई नहीं जानता यह कहानी कहने वाला कोई नहीं बचा।

सौभाग्यवश वे विद्रोही जब इङ्गलैंड लौटे तो हडसन का जरनल (दैनिक विवरण) और चार्ट इत्यादि लिये गए। उस वीर खोये हुए खोजी की खोज करने के लिए कई जहाज इंगलैण्ड से भेजे गए परन्तु हडसन की उस दुर्भाग्यपूर्ण नाव का कोई पता नहीं चला। तीन सौ वर्ष पूर्व जब उसके साथियों ने उसके साथ विश्वासघात किया था तब से आज तक उस कहानी को पूरा करनेवाली कोई कड़ी नहीं मिली। जैसे सब कुछ निस्तब्ध हो गया हो। प्रकृति को भी उस कहानी को कहने का मानो साहस नहीं रहा। खोज के इतिहास में इतनी लज्जापूर्ण घटना दूसरी पढ़ने को नहीं मिलती है।

# पन्द्रहवां परिच्छेद

## पैरी और फ्रैंकलिन की उत्तर यात्रा

उत्तरी ध्रुव की खोज करनेवालों के सभी प्रयत्न अभी तक विफल हुए थे। इसका कारण यह था कि उत्तर में बर्फ की कठोर दीवार थी जो किसी को उत्तरी ध्रुव की ओर नहीं जाने देती थी।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में यह अभेद्य बर्फ की दीवार टूट गई और उसके बड़े हिमखंड गल कर बिखर गए। ग्रीनलैंड के समीप समुद्र में व्यापार करने वाले लोग यह खबर लाए। उसका परिणाम यह हुआ कि एक बार फिर उत्तरी ध्रुव की खोज और उत्तरी अमेरिका के तक प्रशान्त महासागर में पहुंचने के लिए मार्ग की खोज के प्रयत्न प्रारम्भ हो गए। उस समय तक अमेरिका का उत्तरी समुद्र तट अनजान था। अतएव इंगलैंड ने दो जहाज तैयार किए। एक जहाज 'इसाबेल' कमांडर 'रास' की अधीनता में और दूसरा अलेक्जेंडर लेफ्टीनेंट पैरी की अधीनता में भेजा गया।

इन तरुण खोजियों को यह आज्ञा दी गई थी कि उन्हें डैविस स्ट्रेट से होकर प्रशान्त महासागर का मार्ग ढूंढना था। उनके साथ एक चित्रकार दिया गया था जिससे कि वे वहां के नक्शे और

भेजा जा सके। इन जहाजों में खाने पीने की सामग्री खूब भर ली गई और उन प्रदेशों के आदिवासियों से मित्रता करने के लिए तरह तरह की वस्तुएं भी ले ली गईं।

मई के अन्त में दोनों जहाज ग्रीनलैंड के पश्चिमी तट पर पहुँचे। वहां उन्हें तेज पर्वतीय तूफानों का सामना करना पड़ा। जहाजों ने डेविस-स्ट्रेट को पार किया और बैफिन की खाड़ी में पहुँचे। ऊँचे ऊँचे हिमखंड सर्वत्र समुद्र में तैर रहे थे। जहाज चलाना बहुत ही जोखिम का काम था। फिर भी दोनों जहाज उनको बचाते हुए सावधानी से पार रहे थे।

*जहाज उन ऊँचे हिमखंडों को पार करते हुए धीरे धीरे उस* निर्जन और वीरान समुद्र तट को पार कर रहे थे। उसी समय समुद्र तट पर कुछ उस प्रदेशों के आदिवासी प्रकट हुए। रास अपने साथ एक ऐस्किमो जिसका नाम 'साच्योसी' था ले गया था।

'साच्योसी' ने उन्हें पुकारा उन लोगों ने उत्तर दिया तुम यहां से चले जाओ नहीं तो हम तुम्हें मार डालेंगे। जहाजों की ओर इशारा करके वे बोले यह कौन से जीव हैं? क्या यह सूर्य और चन्द्रमा से आए हैं और रात्रि को रोशनी देते हैं?

दक्षिण की ओर संकेत करके ऐस्किमो ने कहा कि यह प्रवासी लोग बहुत दूर से आए हैं। किन्तु उन आदिवासियों को विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने कहा कि यह नहीं हो सकता। वहां बर्फ के सिवाय कुछ नहीं हो सकता।

शीघ्र ही वे ऐस्किमों के मित्र बन गए जिन्हें [illegible]

हाई सेवर्स कहने लगे। यार्क-अन्तरीप को पार कर वे सीधे लम्बे तट पर चलते गए। कुछ दूर चलकर रास ने उस दिशा में खोज समाप्त कर देने का निश्चय किया। उसका विचार था कि यदि इधर पहाड़ों के बीच कोई तंग स्ट्रेट हो भी तो भी यह निश्चय है कि इसमें से जहाज नहीं जा सकते। अतएव उसने अपने जहाज को पश्चिम की ओर मोड़ दिया जहाँ मार्ग दिखलाई देता था।

९ मील तक जहाज बहुत अधिक बर्फ में चलते रहे। दोपहर को गहरा कुहरा छा गया तब जहाजों को एक बड़े हिमखण्ड के पास अपनी सुरक्षा के लिए खड़ा रहना पड़ा। [illegible] छंट कर उन्हें एक चौड़ा खुला हुआ मार्ग दिखलाई दिया जिसका स्वरूप ठीक वैसा ही था जैसा कि बैफिन के 'लंकास्टर-साउंड' का था। लफ्टीनेन्ट पेरी और उसके कई अफसरों का यह विश्वास था कि यह एक स्ट्रेट है जो पश्चिम में खुले समुद्र से मिलती है। परन्तु उसे यह देखकर बड़ा आश्चर्य और खेद हुआ कि 'रास' ने उसकी बात को नहीं माना। यह कहकर कि मुझे पूरा विश्वास है कि इस ओर कोई मार्ग नहीं है वह वापस लौट पड़ा। वह सात महीने की यात्रा के बाद इंगलैंड लौट आया। यद्यपि उसको निश्चय था कि इस ओर कोई मार्ग नहीं था परन्तु उसके सहयोगी अफसर उसके मत से सहमत नहीं थे। इस कारण भूगोल के जानकारों में यह एक विवाद का विषय बन गया।

जब लफ्टीनेन्ट पेरी से पूछा गया तो उसने सुदूर उत्तर की ओर खोज करने पर बल दिया। अतएव दो खोज अभियान तैयार

किए गए। एक पैरी के नेतृत्व में और दूसरा फ्रैंकलिन के नेतृत्व में। पैरी पहले चला। उसको आज्ञा थी कि वह लंकास्टर-साउंड यदि वह मार्ग पाने में असफल हो जावे तो 'जोन्स साउन्ड' और और उसमें भी असफल हो जावे तो 'स्मिथ साउन्ड' जावे। यदि वह 'बेहरिंग स्ट्रेट' से निकल जाने में सफल हो जावे तो वह कमस्केटका और सैंडविच द्वीप चला जावे। पैरी को यह आज्ञा दी गई थी कि ऐटलांटिक से प्रशान्त महासागर का मार्ग ढूंढ निकालना उसकी खोज का मुख्य उद्देश्य है।

मई १८११ में १०८ टन का 'हेक्ला' तथा १८ टन का दूसरा छोटा जहाज़ लेकर पैरी अपनी यात्रा पर चल पड़ा। जुलाई के प्रथम सप्ताह में वह प्र बरेला को पार कर गया। समुद्र में असंख्य हिमखंड तैर रहे थे और दक्षिणी वायु बहुत तेज़ी से चल रही थी। हवा का ज़ोर इतना अधिक था कि तरल बर्फ जहाज़ से टकराकर तेज़ी से टकराता और उसकी सफेद बौछार सौ फीट ऊपर तक पहुँचती। उस समय ऐसा भयानक शोर होता कि मानो बिजली गिर रही हो।

११ जुलाई को पैरी लंकास्टर-साउंड के प्रवेशद्वार पर पहुँचा। पैरी ने उसके बारे में लिखा है "आप हर एक के चेहरे पर घोर चिन्ता झलक रही थी हवा का ज़ोर बढ़ रहा था। हमने तेज़ी से साउन्ड को पार करने का प्रयत्न किया। सभी नाविक मस्तूल के पास इकट्ठे हो गए थे जबकि जहाज़ तेज़ी से आगे भाग रहे थे। कुछ समय तक सबके चेहरों पर घोर चिन्ता छाई रही जब तक कि

जहाज उस स्ट्रेट तक नहीं पहुँच पाए जिसका नाम उन्होंने नौसेना सचिव के नाम पर 'बैरो-स्ट्रेट' रक्खा। अब हम सब बहुत प्रसन्न थे कि हम ध्रुवीय समुद्र के अन्दर घुस चुके थे।

पश्चिम की ओर चलने पर एक बड़ा द्वीप मिला जिसका नाम उन्होंने नौसेना के 'वाइकाउंट मैलविली' के नाम पर मैलविली रक्खा और समीप की खाड़ी का नाम अपने दोनों जहाजों के नाम पर 'हेकला' और 'ग्रिपर' की खाड़ी रक्खा। पैरी ने लिखा है कि हमें यह देखकर हार्दिक प्रसन्नता थी कि उस प्रदेश में जिसे लोग पहुँच के बाहर समझते थे ब्रिटेन की राष्ट्रध्वजा फहरा रही थी।

अब पाला तेजी से बढ़ता जा रहा था। नया बर्फ जम रहा था। इस कारण जहाजों को उस खाड़ी में ले जाने के लिए दो मील लम्बे और सात इंच मोटे बर्फ को चीर कर एक नहर बनाई। जिसमें से होकर जहाज खाड़ी में जा सके। जब जहाज खाड़ी के बंदरगाह में पहुँच गए तो सभी नाविकों ने हर्षध्वनि की। उन्हें यहां भी लम्बे भयंकर शीत के महीने व्यतीत करने थे। सितम्बर के अन्त तक उन्होंने जाड़ों के लिए सब तैयारियां कर लीं। अक्तूबर तक हिरन इत्यादि पशु मांस के लिए बहुत मिलते थे। बाद को लोमड़ी भेड़िये बहुत मिलने लगे। अपने आदमियों का मन बहलाने के लिए पैरी और उसके अफसरों ने एक नाटक का आयोजन किया। ५ नवम्बर को नाटक खेला गया। वह सूर्य निकलने का अन्तिम दिन था उसके बाद ९६ दिन फिर सूर्य नहीं चमका। पैरी ने यहां एक अखबार भी निकाला जो बाद को इंग्लैंड में छपा।

जनवरी १८१९ में जाड़ा बहुत अधिक तेज और निराशाजनक हो गया। 'स्कर्वी' रोग प्रकट हुआ कुछ लोग इस रोग से पीड़ित हो गए परन्तु पैरी निराशावादी नहीं था उसने कहा कि इस रोग को रोकने का प्रयत्न करना चाहिए। एक के बाद वह दूसरी युक्ति करता। उसने रोगियों को हरी सब्जी खिलाने के लिए लकड़ी के बक्सों में मिट्टी भर कर उनमें सरसों तथा अन्य तरकारी सब्जियों के बीज बोये और गरमी देने के लिए उन सन्दूकों को अंगीठी के पाइप के पास रख दिया। हरी सब्जियाँ उत्पन्न हुईं और उसने रोगियों को खिलाकर रोग मुक्त कर दिया। यद्यपि अब सूर्य फिर चमकने लगा था किन्तु फिर भी फरवरी वर्ष का सबसे अधिक ठंडा महीना था। और कोई भी आदमी देर तक बाहर खुले में नहीं रह सकता था नहीं तो ठंड से उसकी खाल जम जाती। अप्रैल के मध्य में कुछ कुछ बर्फ पिघलना शुरू हुआ और थरमामीटर ऊंचा चढ़कर हिम बिन्दु पर पहुँचा।

एक अगस्त को जहाज उस बन्दरगाह से निकल सके और पश्चिम की ओर बढ़े। लेकिन वे मेलविली द्वीप से आगे नहीं बढ़ सके क्योंकि बर्फ बहुत था। जब बर्फ के कारण जहाजों का आगे बढ़ना सम्भव नहीं हुआ तो पैरी ने एक बार फिर लंकास्टर-साउंड वापस जाने का निश्चय किया। बैफिन-बे के पश्चिमीय तट को छूते हुए दोनों जहाज नवम्बर १८२० के प्रारम्भ में सकुशल टेम्स नदी में वापस लौट आए। पैरी ने लिखा है "मुझे इस बात की हार्दिक प्रसन्नता है कि जहाज पर जो भी ९४ अफसर और नाविक

मेरे साथ गए थे वे अपने देश को सकुशल स्वस्थ और हृष्ट पुष्ट अठारह महीने की लम्बी और विकट यात्रा करके लौट आए।"

पैरी ने इस यात्रा में खोज सम्बन्धी बहुत बड़ा काम किया। उसने केवल उन स्रोतों को ही नहीं ढूंढ निकाला जिनमें होकर ध्रुवीय समुद्र को रास्ता जाता था बरन उसने यह भी अनुभव से जान लिया कि उत्तरी ध्रुव में जाड़े के दिनों में भी लम्बे महीने किस प्रकार स्वस्थ रहकर निकाले जा सकते हैं।

## फ्रैंकलिन की उत्तर-यात्रा

जब कि पैरी अपनी यात्रा पर था तभी फ्रैंकलिन भी अपनी लम्बी यात्रा के लिए निकला। पैरी की यह आशा थी कि वह पूर्व से पश्चिम की ओर जावे वहां फ्रैंकलिन को पश्चिम से पूर्व की ओर जाने का आदेश था। ज़रूर सम्भावना थी कि सम्भव है कि कहीं वे एक दूसरे से मिल जावें। फ्रैंकलिन ने रिचर्डसन की यात्रा अच्छा यश उपार्जन किया था और अन्त में यहां और सब प्रयत्न हो चुके थे वहां वह उत्तर पश्चिम का मार्ग ढूंढ निकालने में सफल हो गया। उसके साथ डाक्टर रिचार्डसन दो प्रमुख नाविक 'बैक' और 'हुड' और एक मल्लाह जान हैपबर्न थे।

पैरी के जाने के पंद्रह दिन बाद इन पांच अंग्रेज खोजियों ने हडसन-बे कम्पनी के एक जहाज से कम्पनी के प्रधान कार्यालय तक यात्रा की। वहां पहुंचते पहुंचते अगस्त का अन्त हो गया। कम्पनी के गवर्नर ने उनका यथोचित स्वागत किया और उन्हें एक बड़ा जहाज दिया। उस जहाज में भोजन सामग्री अस्त्र-शस्त्र तथा सभी

अन्य आवश्यक सामग्रियां भर दी गईं। तोपों की सलामी की गड़गड़ाहट में वह जोखियों का दल उस जहाज में जिसे कर्मठ नाविक खे रहे थे 'कम्बरलैंड-हाउस' की ओर चल दिया। यह हडसन-बे कम्पनी का एक किला था। छः सप्ताह की उस कठिन यात्रा में उन्हें अनेक नदियों और झीलों को पार करना पड़ा। कई जगह जहां पानी तेजी से गिरता था। वहां नावों को खींचकर ले जाना पड़ा तो कभी कठोर चट्टानों पर भैंसे की खाल ओढ़कर सोना पड़ा। उस यात्रा को समाप्त कर वे अपनी पहली मंजिल पर पहुंचे। अब हिम गिरना शुरू हो गया था और नदियों पर मोटा बर्फ जम गया था। उस समय फ्रेंकलिन ने यह निश्चय किया कि वह आगे बढ़कर 'अथाबास्का' झील तक पहुंच जावे जिससे कि उसे अपनी परमियों में तैयारी करने के लिए अधिक समय मिल सके। १८ जनवरी १८२० को डाक्टर 'रिचार्डसन' और 'हुड' को किले में छोड़कर फ्रेंकलिन 'बैक' तथा 'हेपबर्न' को साथ लेकर प्रचंड शीत के मध्य में चल पड़ा। किले में मित्रों ने उसे इंडियनों द्वारा पहिने जानेवाले वस्त्र में काम आनेवाले जूते और सामने किश्ती के आकार के वे कुत्तों से चलने वाली गाड़ियां स्लेज पर चमड़े की पेटी तथा कोट और पंद्रह दिन के लिए भोजन दिया। बर्फ अब बहुत गहरा हो गया था और कुत्तों को भारी गाड़ियों को उस बर्फ पर खींचना कठिन हो रहा था। फिर भी ८५७ मील की दूरी उन्होंने ५८ दिनों में पार कर ली। ठंड खूब पड़ रही थी थरमामीटर शून्य से पांच डिग्री नीचे था। यात्रा की कठिनाइयों

का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि भोजन सामग्री कम पड़ गई कुत्तों को थोड़े बचे चमड़े के सिवाय खाने को कुछ नहीं था। रात्रि में हड्डी कंपा देनेवाली भयानक ठंड पड़ती थी। तब के चाय पीने की कोशिश करते वह बर्तन में ही जम जाती।

२६ मार्च १८२० को वे लोग 'अथाबास्का झील' पहुंचे। वहां पहुंचकर उन्होंने यात्रा की तैयारियां करना आरम्भ करदीं। चार महीने के बाद 'रिचार्डसन और 'हुड' भी आ मिले। सब तैयारी हो चुकी थी। उत्तर में बसन्त ऋतु बहुत ही सुहावनी और मनमोहक थी। लम्बे ठंडे महीनों के बाद पेड़ों ने हरित परिधान पहिन लिया था और सारा प्रदेश वनस्पति से लहलहाने लगा था। साथ ही कीड़े और काटने वाली मक्खियां इतनी पैदा हो गईं कि रात्रि को सोना असम्भव हो गया। १८ जुलाई को प्रसन्नता और उत्साह के वातावरण में यह छोटा सा दल चल दिया। फ्रैंकलिन चाहता था कि यह जाड़ा पड़ने से पहले कापर-माइन-रिवर पहुंच जावे। लेकिन रास्ते की कठिनाइयां बहुत अधिक थीं खाने की सामग्री कम थी और खेने वाले नाविक असन्तुष्ट हो उठे थे। बर्फ जल्दी पड़ने लग गया था। अतएव विवश होकर फ्रैंकलिन को अथाबास्का झील से ५५ मील की दूरी पर ही जाड़ा व्यतीत करने का निश्चय करना पड़ा। उसने उस स्थान का नाम 'फोर्ट एण्टरप्राइज' अर्थात् साहस का दुर्ग रक्खा।

यहां जाने के लिए यथेष्ट सुविधा प्रतीत होती थी क्योंकि झील के किनारे रेण्डियर झुंड के झुंड चरते दिखलाई देते थे। लेकिन जाड़ा

बहुत लम्बा और कष्टदायक था। फ्रैंकलिन को शीघ्र ही यह अनुभव हो गया कि आगे निकल चलने योग्य खाद्य सामग्री उनके पास नहीं है। इसलिये उसने 'बैक' को अथाबस्का झील तरफ के लिए भेजा।

१७ मार्च को बैक प्रातःकाल के समय साहस का दुर्ग (फोर्ट आव ऐण्टरप्राइज) पहुँचा। प्रतिदिन अट्ठाइस मील की रफ्तार से उसने यह दूरी पार की। उसने वहाँ सभी मित्रों को प्रसन्न और स्वस्थ पाया। बैक पाँच महीने बाद अपने उन मित्रों से मिला था। इन पाँच महीनों में वह ग्यारह सौ चार मील पैदल चला था। उसके पास बर्फ पर चलने वाले जूते और रात्रि को ओढ़ने के लिए केवल एक कम्बल और हिरन की खाल थी। बहुधा थर्मामीटर शून्य से चालीस डिग्री नीचे रहता था और उसको कभी कभी दो तीन दिन तक खाने के लिए भोजन नसीब नहीं होता था परन्तु अपनी कष्ट-सहिष्णुता और साहस के द्वारा उसने अपने सभी साथियों की रक्षा करली। जून में मौसम ऐसा हो गया कि 'कापर-माइन-रिवर' को प्रस्थान किया जा सकता था और जुलाई में तीन सौ चौंतीस मील की लम्बी और कठिन यात्रा करके वे उस नदी के मुहाने पर पहुँच गये।

वास्तविक खोज का काम अब शुरू हुआ। वे लोग दो छोटे जहाजों में बैठकर इस शीत समुद्र के पूर्वी तट की ओर चले। उन्हें पैरी से मिलने की आशा थी। बेचारे कैनेडियन नाविक उस समुद्र के भयंकर दृश्य को देखकर भयभीत हो गए। वे इस समुद्र में कभी

नहीं गए थे और वे उसमें जाना नहीं चाहते थे। किसी तरह उन्हें समझाकर चलने के लिए राजी किया गया। सच तो यह है कि उत्तरी ध्रुव के चट्टानी समुद्र तट के साथ साथ यात्रा भौगोलिक खोज के इतिहास में एक महान साहसिक कार्य ही माना जायेगा। जैसे जैसे वे दो जहाज उस बर्फीले तट पर पूर्व की ओर बढ़ते जाते थे फ्रेंकलिन खाड़ियों नदियों और द्वीपों के नाम रखता जाता था। उसने एक खाड़ी का नाम जार्ज चतुर्थ कॉरोनेशन खाड़ी नदियों का नाम हुड नदी बैक नदी वैगर्स इनलेट सेक्रेटरी आफ स्टेट के नाम पर, और पेरी—ये अपने मित्र पैरी के नाम पर रक्खे। खोज का मौसम समाप्त हो रहा था। मौसम की कठोरता और भोजन की कमी ने उन्हें विवश कर दिया कि वे घर वापस लौट जावें। उन्हें अपनी खोज से अभी पूरा संतोष नहीं हुआ था। उनकी यात्रा का सबसे कष्टदायक भाग अब आने वाला था। सम्भवतः उत्तरी ध्रुव की खोज के इतिहास में इससे अधिक कष्ट का सामना किसी को नहीं करना पड़ा। २२ अगस्त को टोली दल हुड नदी के नए मार्ग से फोर्ट एन्टरप्राइज ( Fort Enterprise ) के लिए चल पड़ा। पृथ्वी बर्फ से ढक चुकी थी और उन्हें केवल एक समय भोजन मिलता था क्योंकि दोनों समय भोजन कर सकें इतनी खाद्य-सामग्री उनके पास नहीं थी। यह अत्यन्त पथरीले और बीहड़ रास्ते पर उन्हें सम्पूर्ण यात्रा पैदल करनी पड़ी। पहले कुछ दिनों तक खाने को कुछ नहीं मिला। जो कोई छोटेमोटे जीवजन्तु मार पाते उन्हीं से भूख को बुझाते। ऊपर से जाड़ा इतना तेज था कि

थरमामीटर में पारा हिम-बिन्दु से बहुत नीचे उतर गया था। ९ दिन के उपरान्त एक गाय को पाकर वे लोग बहुत प्रसन्न हुए और उस सूखे दल में नवीन उत्साह और शक्ति का संचार हुआ। लेकिन जैसे जैसे वे आगे बढ़ते गए स्थिति में कोई भी सुधार नहीं हुआ और वह बिगड़ती ही गई। भूख से मृत्यु उनको ताक रही थी। एक दिन घास और कुछ जीव-जन्तुओं को खाकर पेट की ज्वाला शांत की। दूसरे दिन एक हिरन के सींग हड्डियां और जूते भून कर खाए गए और पिछले बसंत में मरे पड़े एक हिरन के मांस को भूखे लोग मरभुखों की तरह खा गए।

अन्त में स्थिति इतनी भयावह हो गई कि फ्रैंकलिन और बैक जो भी दल में अधिक शक्तिवान थे वे तेजी से साहस दुर्ग की ओर बढ़े जिससे कि वे वहां पहुंच कर रिचार्डसन और हुड को भोजन भेज सकें। ये दोनों इतने अधिक कमजोर और बीमार हो गए थे कि उनका चल सकना कठिन था। उनके सामने घोर निराशा छाई हुई थी।

आखिर फ्रैंकलिन साहस दुर्ग पहुंचा परन्तु वहां पहुंचकर उसे घोर निराशा और दुःख हुआ क्योंकि वह निर्जन और वीरान पड़ा था। वहां न तो कुछ खाने को था और न वे इंडियन ही थे जिन्हें वे पीछे छोड़ गए थे। फ्रैंकलिन और उसके साथी जब उस निर्जन स्थान में घुसे और उन्होंने देखा कि वहां खाने को कुछ नहीं है तो दुःख और निराशा से कातर होकर वे रो पड़े। वे अपने लिए इतने दुःखी नहीं हुए और न रोये जितने कि अपने उन साथियों के

लिए जिन्हें वे पीछे छोड़ आए थे और जिनका जीवन इस बात पर निर्भर था कि वे यहां से तुरन्त कुछ भोजन भेज सकते। एक रैंडियर की कुछ हड्डियां और खाल भूनकर रात को खाई गईं और थके हुए लोगों आग के सामने बैठ गए। कमरे के फर्श से लकड़ी निकाल कर आग जलाई गई थी। सुबह जब फ्रैंकलिन उठा तो उसके पर इतने सूज गए थे कि कुछ गज भी नहीं चल सकता था।

नवम्बर आने से पूर्व एक दूसरी भोपाल और दारुण दुर्घटना घटी। दल का एक व्यक्ति जो भूख और कष्ट से लगभग पागल हो गया था उसने हुड को मार डाला। अब एक के बाद दूसरा व्यक्ति भूख के कारण मरने लगा। जबकि फ्रैंकलिन रिचार्डसन बैंक, हैपबर्न भी मरने ही वाले थे तो तीन इंडियन आए। वे अपने साथ हिरन का सूखा मांस और कुछ चीजें लाए थे। वे एक क्षण भी पहले नहीं आए। ठीक उसी समय आए जबकि फ्रैंकलिन और उसके साथी अपने जीवन की अन्तिम घड़ियां गिन रहे थे। उनके ठीक समय पर पहुंच जाने से उन सबों का जीवन बच गया। उनकी यह दयनीय दशा देख कर उन इंडियनों ने बाहर जाकर शिकार किया और मछलियां पकड़ कर लाए। ताजा मांस और मछलियां खाने से उनका स्वास्थ्य कुछ दिनों में ठीक हो गया और वे यात्रा करने के योग्य हो गए। स्वस्थ होकर वे साहस दुर्ग से चल पड़े और मूस फैक्टरी पहुंचे। वहां हडसन कम्पनी के अफसरों के साथ रह कर उन्होंने जाड़े के दिन व्यतीत किये और पुनः स्वास्थ्य लाभ किया।

जब फ्रैंकलिन और उसके साथी नाविकों में इंग्लैंड लौटे तो वे पांच हजार पांच सौ पचास मील की यात्रा कर चुके थे। उन्होंने इस यात्रा में उन अकथनीय कठिनाइयों और विपत्तियों का सामना किया था जो कि खोज के इतिहास में अविस्मरणीय थीं। जब दूसरे वर्ष नाविकों में पैरी इंग्लैंड वापस लौटा और उसने फ्रैंकलिन से यात्रा के कष्टों को सुना तो वह एक बच्चे की भांति रो पड़ा। अन्य सबों को देखा पैरी उन कष्टों की गहनता को अच्छी तरह समझ सकता था। यद्यपि उसकी यात्रा में वैसे कष्ट नहीं उठाने पड़े थे।

## परी की यात्रा

जब फ्रैंकलिन कापर मैन रिवर की ओर बढ़ रहा था उस समय पैरी अपने जहाज फ्यूरी तथा हेक्ला को लेकर हडसन स्ट्रेट की ओर चल पड़ा। वहां से वह प्रशान्त सागर में घुसना चाहता था। मौसम खराब था अतएव गति धीमी होने के कारण वे लोग हिम खंडों के बीच जून के मध्य से पहले नहीं पहुंचे। वे हिमखण्ड कई सौ फीट ऊंचे थे और उनकी संख्या बहुत थी। दोनों जहाज उनको पार कर हडसन स्ट्रेट के मुंह पर पहुंच गए। हडसन की खाड़ी में पैरी के पूर्वपरिचित बहुत से स्थान थे अस्तु पैरी शीघ्र ही साउथेम्पटन द्वीप तथा फ्रोजन स्ट्रेट (जिस पर सौ वर्ष पूर्व बहुत कुछ विवाद हो चुका था) पहुंच गया। यह देखकर पैरी की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा कि वहां एक अत्यन्त सुन्दर खाड़ी है जिसका नाम उसने 'ड्यूक आफ यार्क बे' रक्खा। यह खोज कोई विशेष महत्व की नहीं थी क्योंकि उसमें कोई रास्ता नहीं था। खाड़ी

तेजी से बढ़ता आ रहा था नौका-संचालन का मौसम समाप्त होने पर था और अभी पैरी का कार्य प्रारंभ ही हुआ था। यह यात्रा खतरनाक और कठिन तो थी ही उसका परिणाम कुछ नहीं निकला।

पैरी इस अभियान में बेहरिंग-सन्ड की ओर बढ़ा था। उसने उत्तरी अमेरिका का दो सौ तीन समुद्र तट खोजा था और अब वह उस बर्फीले प्रदेश में जाड़े का मौसम व्यतीत करने की तैयारी कर रहा था। पहले की ही तरह पैरी ने इस प्रदेश में जाड़े के लम्बे महीने व्यतीत करने के लिए मनोरंजन और स्वास्थ्य दोनों का आयोजन किया। यहां तक कि बड़े दिन के भोज के लिए भुना हुआ मांस तथा अन्य खाद्य वस्तुओं का भी उसने प्रबन्ध किया। भुने हुए मांस को सुरक्षित रखने के लिए उसने मांस को भुनवा कर उस पर बाहर की ओर नमक लगा कर तथा कनवैस में लपेटकर डेक पर लटकवा दिया था। इसके अतिरिक्त जहां उसने जाड़ा व्यतीत करने का निश्चय किया था वहां पास में ऐस्किमो भी थे जिनसे उन सबों का खूब मन बहलता था।

एक दिन बर्फ बहुत गिर रहा था। खबर आई कि ऐस्किमो लोगों ने बर्फ पर कुछ शिकार किया है। यह खबर सुनकर स्त्रियां खुशी से फूली नहीं समाईं उस गांव में स्त्रियां खुशी से चीखने लगीं और एक दूसरे के घर में जाकर आपस में खुशी के मारे एक दूसरे से लिपटने लगीं। उसके बाद गांव की सभी स्त्रियां उस

मकान में घुसी जहाँ समुद्री घोड़ों को खाया जा रहा था। उन्होंने घोड़ों की चर्बी ली जिससे कि वे अपने घरों के दीपक जलाती थीं। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने बच्चों के लिए कुछ मांस भी लिया। ऐसा लगता था कि पुरुषों ने बहुत से घोड़े मारे थे। वे बराबर हो हो कर गा रहे थे। बड़े तो कुछ चीख कर गा रहे थे। शेष नृत्य कर रहे थे। वे कमर में एक पट्टा बांधकर घोड़ों के शव को खींचते थे। हर एक झोपड़ में दीपक जगमगा रहे थे जैसे कि सारे गांव में दिवाली मनाई जारही हो। गांव भर में प्रसन्नता की लहरें उठ रही थीं क्योंकि इन घोड़ों को काटा जा रहा था। प्रत्येक ऐस्किमो समुद्री घोड़ के मांस को खा रहा था। देखते देखते उन्होंने जितना मांस खा लिया वह कल्पना के बाहर था।

जुलाई में जाकर कहीं मौसम ऐसा हुआ कि जहाज बंदरगाह से बाहर निकल सके और अपनी यात्रा पर आगे बढ़ सकें। पेरी ने ऐस्किमो लोगों द्वारा बताए हुए मार्ग को अपनाया। बर्फ रास्ते को रोके हुए था। अगस्त में जाकर पेरी ने उस स्ट्रेट को ढूंढ निकाला जिसका नाम उसने अपने दोनों जहाजों फ्यूरी और हेक्ला के नाम पर रक्खा। पेरी को विश्वास था कि यह पतली जलधारा प्रशांत समुद्र को जाती है। अतएव वह आगे बढ़ता ही गया परन्तु थोड़ी दूर चल कर फिर बर्फ की एक अभेद्य दीवार उसके सामने आकर खड़ी हो गई। तब उसने स्थल मार्ग द्वारा खोज की। पेरी ने उसके बारे में लिखा है "यह स्ट्रेट प्रशांत समुद्र में जाती है यह इस खोज से इतना अधिक निश्चित हो गया कि मेरी यात्रा का यह भ्रम सफल

हो गया।"

सितम्बर का महीना आ गया था और एक बार फिर जहाजों को बर्फ़ों में सुरक्षित रखने का प्रबन्ध किया गया। एक महीना और वह भी छोटे से खोजी दल को बर्फ में रखना कठिन परीक्षा थी। परन्तु वे सब प्रसन्न थे। उन्होंने फ्यूरी जहाज के चारों ओर बारह फीट ऊँची दीवार बनाई जिससे कि जहाज की हिमभिश्रित हवाओं से रक्षा की जा सके। जाड़े का मौसम बहुत लम्बा था और शीत बहुत अधिक था। जब अगस्त का महीना आया तब कहीं बर्फ से छुटकारा मिला। पैरी तीसरी बार जाड़े के दिनों को उत्तरी ध्रुव की बर्फ में काटना नहीं चाहता था क्योंकि उसके आदमी कमजोर हो गए थे अतएव उसने घर लौटने का निश्चय किया। पैरी के जहाज जब अक्टूबर में शेटलैंड पहुँचे तो वहाँ के सब गिरजों के सब घण्टे बज उठे और हर्ष के कारण उस नगर के निवासियों ने रोशनी की। क्योंकि पैरी और उसके साथी सत्ताईस महीने उत्तरी ध्रुव का कठोर जीवन व्यतीत करके सकुशल घर लौटे थे। १४ नवम्बर १८२१ को वे लोग सकुशल इंगलैंड पहुँच गए।

इतने पर भी पैरी को शांति नहीं थी। वह फिर समुद्र-यात्रा के लिए छटपटाने लगा। उसे उत्तरी ध्रुव के रहस्य फिर वापस बुला रहे थे। वह तीसरी यात्रा पर फिर गया किन्तु तीसरी यात्रा महत्त्वपूर्ण नहीं थी क्योंकि वह कोई नई भूमि नहीं खोज सका। 'प्रिंस रिजेन्ट' इनलेट में बर्फ के कारण फ्यूरी जहाज नष्ट हो गया और पैरी के सम्पूर्ण दल को हैक्ला पर लौटना पड़ा। इस प्रकार

२१

१८२५ में पैरी की तीसरी प्र यात्रा समाप्त हुई।



# सोलहवां परिच्छेद

## कुक की यात्राएं

यद्यपि 'कुक' के पूर्व टौरेस, कार्पेन्टर, तस्मान और डैम्पियर ने आस्ट्रेलिया की यात्राएं की थीं परन्तु उस महाद्वीप की खोज के साथ 'कुक' का नाम अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है क्योंकि वास्तव में आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड को खोज निकालनेवाला वही था।

डैम्पियर १७०१ में न्यू हालैंड की यात्रा से वापस इंगलैंड लौटा। किन्तु बहुत समय तक इंगलैंडवासियों ने उस रहस्यमय दक्षिणी महाद्वीप की खोज के लिए कोई प्रयत्न नहीं किया। लगभग सत्तर वर्ष बाद इंगलैंड ने पुनः उस दक्षिणी महाद्वीप की खोज के लिए एक खोज अभियान भेजने का निश्चय किया। उस खोज अभियान का नेतृत्व 'जेम्स कुक' को सौंपा गया।

जेम्स कुक का बालकपन व्हिटबी के तट पर बीता था। इस कारण वह उत्तरी समुद्र और उसके मछुओं से भली भांति परिचित था। पास ही कोयले की खानें थीं इस कारण वह खानों में काम करने वाले मजदूरों के जीवन से भी परिचित था। यहां तक कि वह उन चोरों से भी परिचित था कि जो चोरी से पूर्वी तट पर विदेशों से माल लाते थे। १७५५ में वह शाही नौसेना में भर्ती हुआ और

'ईगल' जहाज पर मास्टर मेट नियुक्त हुआ। चार वर्ष बाद जब वोल्फे ने कनाडा में क्यूबेक पर 'पेम्ब्रोक' जहाज को लेकर आक्रमण किया तो जेम्स कुक उसके साथ था। उसके बाद जेम्स कुक का स्थानान्तर 'नार्थम्बरलैंड' जहाज पर हो गया और उसको सेंटलारेंस की खाड़ी का सर्वेक्षण करने के लिए चुना गया। उसका सर्वेक्षण कार्य इतना अच्छा और संतोषजनक था कि उसे न्यू फाउंडलैंड और लैब्राडोर के तट का सर्वेक्षण करने की आज्ञा दी गई। जब कुक न्यू फाउंडलैंड और लैब्राडोर के तट का सर्वेक्षण कर रहा था तो उसने जीवन में पहली बार सूर्यग्रहण देखा जिसके कारण उसको प्रशान्त महासागर की यात्रा के लिए जाना पड़ा। अंग्रेज ज्योतिषियों ने हिसाब लगाया था कि जून १७६९ में वीनस ग्रह दिखलाई देगा।

बात यह हुई कि रायल सोसायटी आफ ऐस्ट्रानामी ने बादशाह को इस आशय का प्रार्थनापत्र दिया कि इंग्लैंड संसार में ज्योतिष के ज्ञान के लिए प्रसिद्ध रहा है। वह पृथ्वी पर किसी भी देश से ज्योतिष के ज्ञान में पीछे नहीं है। यदि इंग्लैंड इस महत्वपूर्ण घटना का सही परीक्षण न कर सका तो उसकी प्रतिष्ठा को धक्का लगेगा। इंगलैंड के बादशाह ने सोसाइटी की इस प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। रायल सोसायटी ने इस कार्य के लिए जेम्स-कुक को चुना। इस कार्य के लिए ३७ टन के एक बड़े जहाज को चुना गया और उस पर ७ नाविक नियुक्त किए गए। जेम्स-कुक को यह आज्ञा दी गई कि वह वार्लैंड पर वीनस ग्रह'

का परिवीक्षण करे, प्रशान्त महासागर में नई खोज करे, और न्यूजीलैंड की खोज निकाले। कुक ने उस शाही जहाज पर इंगलैंड के राष्ट्रीय ध्वज को फहराया और मई १७६८ में वह उस महत्वपूर्ण यात्रा के लिए चल पड़ा।

उस जहाज पर बहुत तरह के लोग थे। अन्त समय पर जोसेफ बैंक्स भी उसमें सम्मिलित हो गए। वे रायल सोसाइटी के एक बड़े धनाढ्य सदस्य थे और प्राकृतिक इतिहास के विद्वान थे। उन्होंने उस जहाज पर जाने की आज्ञा प्राप्त करली थी कि जो ज्योतिषियों को लेकर दक्षिण समुद्र के नये देशों को जा रहा था। उस जहाज पर प्राकृतिक इतिहास की गवेषणा के लिए सभी सुविधाएं उपलब्ध थीं। उनके पास एक बहुत अच्छा पुस्तकालय था कीड़ों को पकड़ने के लिए और उन्हें सुरक्षित रखने के लिए सभी प्रकार के यंत्र तथा मशीनें थीं। दो चित्रकार और ड्राफ्ट्समैन भी साथ थे। इस सबकी तैयारी में बैंक का दस हजार पौंड व्यय हुआ।

जहाज पर जो ज्योतिष सम्बन्धी औजार थे वे बहुत बढ़िया थे। जहाज पर एक दूर तकने वाली और सरलता से किसी स्थान पर ले जाई जा सकने वाली वेधशाला थी। इसके अतिरिक्त सभी प्रकार की भोजन सामग्री यथेष्ठ मात्रा में सावधानी और सुरक्षा के साथ रक्खी गई थी जिससे जहाज पर जानेवालों को कोई बीमारी न हो। बहुत तरह का माल्ट नीबू और नारंगी तथा अन्य फलों का रस भी यथेष्ठ मात्रा में रख लिया गया था। कुक को यह आज्ञा दी गई थी कि जहां भी सम्भव हो ताजा भोजन खूब ले लिया

जाये जिससे कि यात्रियों का स्वास्थ्य ठीक रहे। कुक ने इस आज्ञा का अक्षर अक्षर पालन किया। यहां तक कि मदीरा बन्दरगाह पर उसने एक नाविक को इस कारण १२ कोड़े लगाने की आज्ञा दी क्योंकि उसने ताजा मांस खाने से इन्कार किया था। इस कारण सभी नाविकों का स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहा। रायो-डी जेनरो से जब जहाज चला तो सबका स्वास्थ्य उतना ही अच्छा था कि जितना इंगलैंड से चलने के समय था।

बड़ा दिन कुक ने रिवर-प्लेट के मुहाने पर बिताया। जनवरी १७६९ को कुक का जहाज ली-मेरी के जल संयोजक में से निकल कर आगे बढ़ा। स्टाटिन द्वीप पर श्री बैंक ने बहुत से नये पौधों को इकट्ठा किया और जहाज पर ले आए। इसके बाद जहाज सेंट जार्ज द्वीप पहुंचा। एक वर्ष पूर्व उस द्वीप में 'डालफिन' जहाज पर कैप्टेन वालिस आ चुके थे। कुक के जहाज के कुछ नाविक 'डालफिन' जहाज पर काम कर चुके थे और उस द्वीप के वासियों को जानते थे इस कारण वहां अ प की का मित्रवत स्वागत हुआ। शीघ्र ही उस द्वीप पर डेरे गाड़ दिए गए। एक किला बनाया गया जिसकी दीवारों पर तोपें चढ़ा दी गईं। सभी कीमती औजार भी उचित स्थान पर रख दिए गए। ३ जून को जब आकाश स्वच्छ था और असहनीय भीषण गरमी पड़ रही थी तो उन्होंने सूर्य पर से वीनस ग्रह को जाते स्पष्ट देखा।

उस द्वीप में तीन महीने ठहर कर कुक आगे बढ़ा। उसने 'तुपिया' नामक उस द्वीप के एक निवासी को साथ ले लिया। बात

गई थी कि दुनिया अच्छा रसोइया था और कुत्ते का मांस बहुत अच्छा भूनता था। उस द्वीप समूह के अन्य द्वीपों में भी कुक गया और उन सभी द्वीपों पर उसने इंगलैंड के बादशाह जार्ज तृतीय के नाम से कब्जा कर लिया।

सारे सितम्बर के महीने में समुद्र में यात्रा करते रहे ७ अक्टूबर १७६९ को उन्हें भूमि दिखलाई दी। सबसे पहले एक बालक निकोलस ने भूमि को देखा। इस कारण कुक ने उसका नाम यंग निकोलसहैड रख दिया। वहां के निवासी अंग्रेजों को देखकर खुश नहीं हुए, उनका व्यवहार अमुतापूर्ण था अतएव कुक को बंदूकें और तोपें चलवानी पड़ीं कि जिससे वे उन पर आक्रमण न करें।

मौरिस लोगों ने इतना बड़ा जहाज कभी नहीं देखा था। दूर से देखने पर उसकी सूरत एक विशाल चिड़िया के समान थी और पाल उसके पर के समान थे। वे उसके आकार और सुन्दरता को देखकर मुग्ध हो गए। परन्तु जब उसमें से एक नाव समुद्र में डाली गई और गोरे लोग अपने चमकीले रंगबिरंगे वस्त्रों में समुद्र-तट पर आकर उतरे तो मौरिस लोगों ने समझा कि वे देवता हैं। परन्तु वे लोग इन गोरों को देख कर खुश नहीं हुए। वे अपने भालों को अंग्रेजों की ओर तान कर अपना क्रोध प्रदर्शित कर रहे थे। समुद्र तट के रेतीले मैदान के पीछे सघन वन से हरी हुई पहाड़ियां थी जिन पर बर्फ दिखलाई पड़ता था। समीप के जंगल में बसे हुए गांवों से धुंआ उठता दिखलाई देता था। मौरिस लोग अंग्रेजों से

आक्रमण से प्रसन्न नहीं थे अतएव कुक ने वहां उतरना सुरक्षित नहीं समझा। वह दक्षिण की ओर चल पड़ा और उत्तर के द्वीप के पूर्वी किनारे पर उसने अपना जहाज ठहराया। वहां का प्रदेश वीरान था अतएव कुक उत्तर की ओर बढ़ता चला गया। दुर्भाग्यवश आकलैंड और वैलिंग्टन के बीच जो सबसे सुरक्षित बंदरगाह था उसको तो वह चूक गया परन्तु फिर भी 'कुक की खाड़ी' में लंगर डालने का उसे अच्छा स्थान मिल गया। वहां उसे मछलियां और मुर्गियां भी बहुतायत से मिल गईं। उस देश पर बादशाह जार्ज के नाम से अधिकार करके कुक उत्तर की ओर बढ़ता गया। उत्तर की ओर बढ़ते हुए कुक को बहुत सी नदियों के मुहाने देखने को मिले जिन्हें देख कर अंग्रेजों को टेम्स की याद आने लगी। जब वे उस भूमि के सुदूर उत्तरीय स्थान पर पहुँचे तो दिसम्बर का महीना था। उस समय ऐसी प्रबल आंधी आई कि उनका जहाज उस उत्तरी स्थान से जिसे कुक ने उत्तरी अन्तरीप नाम दिया दूर हट गया।

जनवरी १७७० में कुक मारिया अन्तरीप पहुंचा। उत्तरी द्वीप के पश्चिमीय तट पर दक्षिण की ओर चलते रहने पर कुक का जहाज क्वीन चारलट्टी साउंड पहुंचा। यह स्थान उस स्थान से केवल ७ मील ही था जहां तस्मान ने सर्व प्रथम भूमि के दर्शन किए थे।

यहां अंग्रेज समुद्र तट पर उतरे। वह प्रदेश सघन वनों से ढका था। बड़ी कठिनाई से कुक एक ऊँचे पहाड़ पर चढ़ गया और बहुत

दूर पूर्व की ओर कुक ने देखा कि उत्तरी द्वीप के पूर्व और पश्चिम की ओर जो समुद्र हिलोरें मार रहे हैं व दूर पूर्व में जाकर मिल गए हैं। उसने एक समस्या को हल कर लिया। उसने जान लिया कि टसमैन का स्टाटेन प्रदेश दक्षिणी महाद्वीप का भाग नहीं था। अब उसने निश्चय किया कि वह दो द्वीपों के बीच उस जलसंयोजक की ओर जिसे उसने खोज निकाला था जायेगा। अतएव वह उत्तर की ओर चला और टरनागेन अन्तरीप पहुंचा और उसने सिद्ध कर दिया कि वह प्रदेश दक्षिणी महाद्वीप का भाग न होकर एक स्वतन्त्र द्वीप है। अब कुक के नाविक कहने लगे कि उनका काम हो गया और उन्हें इङ्गलैण्ड वापस चलना चाहिए। परन्तु कुक ने उनकी बात पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया और दृढ़ता के साथ उसने अपना रुख फिर दक्षिण की ओर कर दिया। वहां के निवासियों से उसे यह पता लग गया था कि वहां दो बड़े द्वीप हैं अतएव उसने यह निश्चय किया कि जिस प्रकार उसने उत्तरी द्वीप के चारों ओर यात्रा की उसी प्रकार दक्षिणी द्वीप के चारों ओर भी उसे चक्कर लगाना चाहिए। जैसे ही कुक दक्षिण की ओर चला तूफान और आंधी ने उसको परेशान करना शुरू कर दिया परन्तु कुक उससे तनिक भी नहीं घबड़ाया और आगे बढ़ता ही गया। अंधड़ और तूफान इतना तेज था कि फरवरी के अन्त में दो दिन के भयङ्कर तूफान और प्रबल अंधड़ तथा भीषण वर्षा में जहाज का अगला पाल फट कर टुकड़े टुकड़े होगया और सात दिन तक उन्हें भूमि के दर्शन नहीं हुए। उस तूफान और भीषण वर्षा में मार्ग दिखलाई न देने के

कारण जहाज समस्त समुद्र में डूबी हुई चट्टानों से टकराते ही बचता था कि बच गया। उस समय वह जहाज टुकड़े टुकड़े होकर डूब जाने ही वाला था। कुक और उसके साथी बहुत बड़े खतरे से बच गए। १४ मार्च को सायंकाल के समय कुक एक खाड़ी में घुसा अतएव उसने उसका नाम डस्की खाड़ी ( डस्की-खाड़ी ) रख दिया। वहां से वह एक ऐसे स्थान पर गया जहां कि चार नदियां आकर गिरती थीं।

कुक ने न्यूजीलेंड के बारे में लिखा है 'पृथ्वी पर कोई भी देश इतना वीरान और बीहड़ नहीं दिखलाई देता जितना समुद्र से यह देश बीहड़ और वीरान दिखलाई देता है। जहां तक दृष्टि जाती है केवल पहाड़ों की चोटियां ही दिखलाई देती हैं। अन्त में २४ मार्च को दक्षिणी द्वीप के उत्तरी बिन्दु को पार कर लिया तब उसके सामने पूर्व परिचित मैंसेकर की खाड़ी हसमैन की खाड़ी तथा ज्वीन चार लैट्टी-साऊण्ड का जल लहरा रहा था।

कुक ने अपने साथियों से कहा कि हमने इस देश की परिक्रमा पूरी करली अतएव अब हमें इंगलैंड वापस चलना चाहिए।

ऐडमिरेलटी-बे में लाकर करके जहाज की मरम्मत की गई जिससे कि वापस लम्बी यात्रा के वह योग्य बन सके। उसके पाल सब फट कर जर्जर हो गए थे अतएव उनकी फिर से मरम्मत करने तथा जहाज की मरम्मत करने में बहुत परिश्रम और कठिनाई हुई।

उस समुद्र तट पर कुछ कीड़ों और पौधों की खोज करता हुआ तब तक कुक ने अपनी इस यात्रा का वर्णन लिख डाला।

उसने न्यूजीलैंड की प्रथम खोज का सच्चाई के साथ श्रम तस्मैन को दिया। परन्तु उसने लिखा कि यह मानना उसकी भूल थी कि यह दक्षिण महाद्वीप का एक भाग है।

वहां के निवासियों के बारे में उसने लिखा है कि वे मजबूत चौड़ी हड्डी वाले बलिष्ठ, फुर्तीले और लम्बे होते हैं। वे गहरे भूरे रंग के होते हैं उनके बाल काले और दाढ़ी घनी होती है। पुरुष और स्त्रियां अपने चेहरे तथा शरीर पर मछली के तेल में मिला कर लाल रंग लगाती हैं। वे पत्थर हड्डी और दांत के आभूषण पहिनती हैं और पुरुष बालों में कलंगी पर लगाते हैं। उनकी नावें बड़ी होती हैं जिनमें सौ आदमी एक साथ बैठ सकते हैं। वे जब जहाज के समीप आ जाते हैं तो उनका मुखिया एक कुल्हाड़ी घुमा कर चिल्ला कर कहता है तुम हमारे साथ समुद्र तट पर आओ हम तुम्हें मार डालेंगे। वे लोग नर मांस भक्षक थे अतएव यदि कोई उनके हाथ में पड़ जाता तो वे उसे मार कर खा जाते।

एक दिन रात्रि पड़ने पर जब सब लोग डैक छोड़कर सोने के लिए चले गए तो जहाज एक बड़ी चट्टान से टकरा कर बिलकुल अचल खड़ा हो गया। हर एक व्यक्ति डैक की ओर आया प्रत्येक व्यक्ति के मुख पर घोर निराशा और घबड़ाहट छाई हुई थी क्योंकि सबकी समझ में आ गया था कि परिस्थिति खतरे से पूर्ण और भयानक थी। तुरन्त उन्होंने पालों को उतार दिया और नावों को

समुद्र में उतारा तब उन्हें मालूम पड़ा कि वे कोरल चट्टानों पर फंस गए हैं। जहाज में कहीं छेद हो गया था और उसमें कुछ पानी आ रहा था। दो दिन और चिन्ता में कटे परन्तु भाग्यवश ऊंचा ज्वार आया और जहाज उसके साथ गहरे पानी में चला गया। सबों के चेहरे प्रसन्नता से खिल उठे। जहाज की मरम्मत करनी आवश्यक थी अतएव वे एक नदी में जाकर ठहर गए और जहाज की मरम्मत की जाने लगी। तुपिया और अन्य लोगों में बीमारी के चिन्ह दिखलाई देने लगे थे अतएव समुद्र तट पर एक अस्पताल स्थापित किया गया और ताजा मांस और भोजन पाने पर रोगियों का स्वास्थ्य सुधरने लगा। उस स्थान पर आज कुकटाउन नगर बसा हुआ है और कुक की एक मूर्ति वहां खड़ी हुई उस समुद्र को देखती है जिसे उसने अपने देश के लिए खोज निकाला था।

आगे खोज करने के लिए परिस्थिति अनुकूल नहीं थी। जहां तक नज़र जाती थी समुद्र चट्टानों से भरा दिखलाई देता था और समुद्र की लहरें बहुत तेज थी। जब कुक उस छोटी नदी के बाहर निकला तो उसने देखा कि समुद्र की लहरें बड़ी तेजी से चट्टानों से टकरा रही हैं। उस समय में जहाज को खेना बहुत ही दुष्कर था। एक बार तो कुक जैसा साहसी व्यक्ति भी निराश हो गया और उसने आशा छोड़ दी परन्तु सभी नाविकों के हर्ष का ठिकाना न रहा जब उन्होंने देखा कि खुले समुद्र में पहुंचने के लिए एक तंग परन्तु खुला मार्ग है। उस उत्तरी भूमि की नोक का नाम कुक ने ड्यूक आव यार्क के सम्मान में यार्क-अन्तरीप रक्खा। अब जहाज

को हिम-महासागर में जाने का रास्ता मिल गया। कुक ने लिखा है "मैं अब उस महाद्वीप के पूर्वी तट को खोजनेवाला था जिसे किसी भी योरोप निवासी ने पहले कभी नहीं देखा था। मैंने एक बार फिर इंगलैंड के राष्ट्रीय ध्वज को फहराया और हिज मैजेस्टी किंग जार्ज तृतीय के नाम से सम्पूर्ण पूर्वीय तट पर अधिकार कर लिया। इस पूर्वीय समुद्र तट का नाम हमने न्यू-साउथ-वेल्स रख दिया।"

कुक ने अब अपने जहाज को उस जल-संयोजक में से निकाला जिसे १६४ वर्ष पूर्व संयोगवश बिना जाने 'टारेस' ने पार किया था। इस समुद्र से निकलते ही 'न्यू गिनी' दिखलाई दी और कुक ने अपने जहाज को जावा की ओर मोड़ दिया। इसका कारण यह था कि उसके नाविक अब बीमार हो रहे थे और देश को लौटने के लिए तड़पता रहे थे। जहाज की भी हालत अच्छी नहीं थी। उसमें पानी आता था और रात दिन लगातार पम्प करके पानी को उलीचा जाता था नहीं तो पानी जहाज में भर जाता। जहाज के पाल इतने जर्जर और कमजोर हो गए थे कि वे तेज हवा के सामने नहीं ठहर सकते थे। कुक कुशलपूर्वक 'बटाविया' पहुँच गया और वहां डच लोगों ने उसका आदर सत्कार किया।

दो वर्ष पूर्व जब कुक प्लीमाउथ के बन्दरगाह से निकला था तब से कुक के जहाज पर केवल सात मनुष्यों की मृत्यु हुई थी। तीन डूब कर मरे दो अत्यन्त शीत से मर गए एक क्षयरोग से मरा, एक भोजन के विष से मर गया किन्तु स्कर्वी रोग से

व्यक्ति भी नहीं मरा जो खोज के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना थी। किन्तु बटाविया का जलवायु नाविकों को बिल्कुल अनुकूल नहीं आया। उनमें महामारी फैल गई। एक के बाद दूसरा व्यक्ति मरने लगा। ज्वर से सब लोग इतने कमजोर हो गए थे कि एक बार केवल बीस व्यक्ति ही जहाज पर काम करने योग्य रह गए थे।

जब बड़े दिन के अवसर पर जहाज वहां से चला तो वे सब प्रसन्न थे और जब तीन वर्षों के बाद वे लोग लंदन पहुंचे तो उनके हर्ष का ठिकाना नहीं था। कुक के इंगलैंड पहुंचने और उसकी नवीन खोजों के बारे में इंगलैंड में उस समय अधिक उत्साह प्रकट नहीं किया गया। कुक सम्राट् से सेंट जेम्स महलों में मिला उसने अपनी यात्रा का लेखा और नक्शे सम्राट की भेंट किए और सम्राट ने उसको लफ्टीनेंट से कैप्टेन बना दिया।

यद्यपि कुक द्वारा जो नवीन खोज की गई थी उसको इंगलैंड में उस समय कोई विशेष महत्व नहीं दिया गया परन्तु कुछ ही महीनों के बाद कुक को दो जहाज और वर्ष भर के लिए भोजन सामग्री के साथ सुदूर देशों की खोज के लिए भेजा गया।

यद्यपि कुक की दूसरी यात्रा बहुत ही महत्वपूर्ण थी किन्तु उसके फलस्वरूप कोई नया देश या महाद्वीप नहीं मिला। कुक कई महीनों तक दक्षिणी ध्रुव का चक्कर लगाता रहा और जब उसे विश्वास हो गया कि सुदूर दक्षिण में कोई महाद्वीप नहीं है तो वह वापस लौट आया। इस यात्रा के सम्बन्ध में उसने अपनी

वैतृक स्थान ह्विटबी में रहनेवाले एक मित्र को जो पत्र लिखा था उसका सारांश देना ही यथेष्ठ होगा।

उसने अपने मित्र को यह पत्र लंदन से सितम्बर में लिखा था। प्रिय मित्र मैं अब अपने उस वचन को जो मैंने तुम्हें अपनी दूसरी यात्रा पर जाने के पूर्व दिया था कि तुम्हें अपनी यात्रा का वर्णन लिख भेजूंगा पूरा कर रहा हूं। मैं 'आशा अन्तरीप ( केप आफ गुड होप ) से २२ नवम्बर १७७२ को दक्षिण की ओर चला। चलते चलते मैं ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां बर्फ ही बर्फ दिखलाई देता था और अधिक कोहरा छाया हुआ था। वहां असंख्य बर्फ के ऊंचे पहाड़ ( हिम गिरि ) तैरते नजर आए। भयंकर खतरा था और यात्रा में कठिनाई भी बहुत हो रही थी फिर भी मैं उस बर्फ के विस्तृत मैदान के दक्षिण में गया और कुछ दिनों तक भूमि की खोज में बर्फ से भरे समुद्र में भटकते रहने के बाद सत्रह जनवरी १७७३ को मैंने दक्षिण ध्रुव रेखा ( ऐन्टार्कटिक सर्किल ) को पार किया परन्तु उसी सायंकाल मुझे वहां से लौटना पड़ा क्योंकि उस भयंकर बर्फ में अधिक ठहर सकना खतरनाक ही नहीं असम्भव भी था।

जब मुझे उन ऊंची अक्षांश रेखाओं में भूमि मिलने का कोई चिन्ह नहीं दिखलाई दिया तो मैं उत्तर की ओर बढ़ा और खोज में भी कोई भूमि मिलने के चिन्ह न देखकर मैं न्यूजीलैंड की ओर चल पड़ा। न्यूजीलैंड पहुंच कर २६ मार्च को मैंने सौम्य खाड़ी ( डस्की-बे ) में लंगर डाला। वहां से मैं क्वीन चारलट्टी-साउंड

व्यक्ति भी नहीं मरा जो खोज के इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना थी। किन्तु बटाविया का जलवायु अंग्रेजों को बिलकुल अनुकूल नहीं पाया। उनमें महामारी पड़ गई। एक के बाद दूसरा व्यक्ति मरने लगा। ज्वर से सब लोग इतने कमजोर हो गए थे कि एक बार केवल बीस व्यक्ति ही जहाज पर काम करने योग्य रह गए थे।

जब बड़े दिन के अवसर पर जहाज वहां से चला तो वे सब प्रसन्न थे और जब तीन वर्षों के बाद वे लोग लंदन पहुँचे तो उनके हर्ष का ठिकाना नहीं था। कुक के इंग्लैंड पहुँचने और उसकी नवीन खोजों के बारे में इंग्लैंड में उस समय अधिक उत्साह प्रकट नहीं किया गया। कुक सम्राट् से सेंट जेम्स महलों में मिला उसने अपनी यात्रा का लेखा और नक्शे सम्राट को भेंट किए और सम्राट ने उसको लफ्टीनेंट से कैप्टेन बना दिया।

यद्यपि कुक द्वारा जो नवीन खोज की गई थी उसको इंग्लैंड में उस समय कोई विशेष महत्त्व नहीं दिया गया परन्तु कुछ ही महीनों के बाद कुक को दो जहाज और वर्ष भर के लिए भोजन सामग्री के साथ सुदूर देशों की खोज के लिए भेजा गया।

यद्यपि कुक की दूसरी यात्रा बहुत ही महत्वपूर्ण थी किन्तु उसके फलस्वरूप कोई नया देश या महाद्वीप नहीं मिला। कुक कई महीनों तक दक्षिणी ध्रुव का चक्कर लगाता रहा और जब उसे विश्वास होगया कि सुदूर दक्षिण में कोई महाद्वीप नहीं है तो वह वापस लौट आया। इस यात्रा के सम्बन्ध में उसने अपने

पैतृक स्थान ह्विटबी में रहनेवाले एक मित्र को जो पत्र लिखा था उसका सारांश देना ही यथेष्ठ होगा।

उसने अपने मित्र को यह पत्र लन्दन से सितम्बर में लिखा था। प्रिय मित्र मैं अब अपने उस वचन को जो मैंने तुम्हें अपनी दूसरी यात्रा पर जाने के पूर्व दिया था कि तुम्हें अपनी यात्रा का वर्णन लिख भेजूंगा पूरा कर रहा हूँ। मैं 'आशा अन्तरीप ( केप आफ गुड होप ) से २१ नवम्बर १७७२ को दक्षिण की ओर चला। चलते चलते मैं ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां बर्फ ही बर्फ दिखलाई देता था और बहुत कोहरा छाया हुआ था। यहां असंख्य बर्फ के ऊंचे पहाड़ ( हिम गिरि ) तैरते नजर आए। भयंकर खतरा था और यात्रा में कठिनाई भी बहुत हो रही थी फिर भी मैं उस बर्फ के विस्तृत मैदान के दक्षिण में गया और कुछ दिनों तक भूमि की खोज में बर्फ से भरे समुद्र में भटकते रहने के बाद सत्रह जनवरी १७७३ को मैंने दक्षिण ध्रुव रेखा ( ऐन्टार्कटिक सर्किल ) को पार किया परन्तु उसी सायंकाल मुझे वहां से लौटना पड़ा क्योंकि उस भयंकर बर्फ में अधिक ठहर सकना खतरनाक ही नहीं असम्भव भी था।

जब मुझे उन ऊंची अक्षांश रेखाओं में भूमि मिलने का कोई चिन्ह नहीं दिखलाई दिया तो मैं उत्तर की ओर बढ़ा और बीच में भी कोई भूमि मिलने के चिन्ह न देखकर मैं न्यूजीलैंड की ओर चल पड़ा। न्यूजीलैंड पहुंच कर २६ मार्च को मैंने डस्की खाड़ी ( डस्की-बे ) में लंगर डाला। वहां से मैं क्वीन चारलट्टी-साउंड

चला गया। वहां से मैं फिर सुदूर दक्षिण में भूमि की खोज [के] लिए गया। परन्तु सिवाय बर्फ भयंकर शीत और बुरे मौसम [के] मुझे कुछ नहीं मिला। मैं वहां ऊंची अक्षांश रेखाओं में चार महीनों तक बर्फ, शीत और खराब मौसम से चक्कर लगाता रहा। मैं एक बार दक्षिण अक्षांश रेखा को पार कर गया। किन्तु उसके आगे जाना सम्भव नहीं था क्योंकि वहां जो बर्फ था वह भूमि कि तरह कठोर था। वहां हमने बर्फ के ऊंचे पहाड़ देखे जिनकी चोटियां बादलों में छिपी हुई थीं। मुझे अब पूरा विश्वास हो गया कि सुदूर दक्षिण में कोई दक्षिणी महाद्वीप नहीं है। फिर भी मैंने कुछ अधिक समय तक इस समुद्र में ठहरने का निश्चय किया और इसी उद्देश्य से मैं थोड़ा उत्तर आकर ठहर गया।"

दूसरी यात्रा में कुक ने यह सिद्ध कर दिया कि दक्षिण अमेरिका या आस्ट्रेलिया के दक्षिण में कोई महाद्वीप या बड़ी भूमि नहीं है। केवल दक्षिणी ध्रुव के समीप बर्फीली भूमि है।

लेकिन उसने खोज को सरल बनाने के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण कार्य किया। उसने स्कर्वी रोग से बचने का उत्तम उपाय ढूंढ निकाला। अभी तक समुद्र पर लम्बी यात्रा करने में एक बड़ी कठिनाई यह थी कि लम्बे समय तक नमक मिला मांस तथा खाद्य पदार्थ खाने से स्कर्वी रोग फूट पड़ता था और बहुत से नाविक उससे मर जाते थे। लम्बे समय तक जहाजों का समुद्र में एक ठहरना इस कारण सम्भव नहीं था। युद्ध या खोज अभियान में जहाजों को ताजा भोजन प्राप्त करने के लिए समुद्र तट पर आना

पड़ता था। कुछ महीने की समुद्र यात्रा करने पर भी आधे नाविक इस भयंकर रोग से पीड़ित हो उठते थे। १७५६ में कप्तान पेलीसर 'ईगल' जहाज को लेकर जब प्लीमाऊथ बन्दरगाह में उतरा तो चार सौ में से एक सौ तीस स्कर्वी रोग से पीड़ित थे और एक महीने की यात्रा में बीस मर चुके थे।

दूसरी यात्रा में कुक ने यह निश्चय कर लिया था कि वह इस रोग से युद्ध करेगा और उससे बचने का उपाय ढूंढ निकालेगा। यह तो हम पहले ही लिख चुके हैं कि कुक की प्रथम तीन वर्ष की यात्रा में केवल पांच व्यक्तियों को यह रोग हुआ था। दूसरी यात्रा में उसने अपने प्रयोग को आगे बढ़ाया और इस सम्बन्ध में अधिक सावधानी बरती। उसका यह परिणाम हुआ कि तीन वर्ष की लम्बी यात्रा में एक आदमी भी स्कर्वी से नहीं मरा। उसने सबों को नियम किया कि वे प्रतिदिन ठंडे जल से स्नान करें। वह स्वयम् भी प्रतिदिन स्नान करता था। गाय और सूअर का नमक लगा मांस उसने खाने में कम मात्रा में देना आरम्भ किया। आटे में नमकीन गाय की चर्बी मिलाने के रिवाज को उसने बिल्कुल समाप्त कर दिया। नमकीन मक्खन और पनीर खाना बन्द कर दिया गया और मुनक्का अधिक खाने को दिया जाने लगा। गेहूं का भोजन में अधिक उपयोग किया जाने लगा। कुक शरीर की सफाई पर बहुत जोर देता और प्रति सप्ताह प्रत्येक मनुष्य के शरीर की सफाई की जांच करता। अपने सामने कपड़े धुलवाता तथा जहाज को भी खूब साफ रखा जाता और उनको धुआं देकर गरमाया जाता। इस प्रयोग से

परिणाम स्वरूप दूसरी यात्रा में यह रोग बिल्कुल नहीं हुआ।

१७७६ में रायल सोसायटी में इस विषय पर एक लेख पढ़ने पर जेम्स कुक को एक स्वर्ण पदक दिया गया जो आज भी ब्रिटिश म्यूजियम में रखा है।

अब कुक अड़तालीस वर्ष का हो चुका था किन्तु उसमें बीस वर्ष के युवक जैसी स्फूर्ति और साहस था। उसने यह प्रश्न सदैव के लिए तय कर दिया था कि अंटार्कटिक में कोई महाद्वीप है अथवा नहीं। परन्तु जब उत्तर पश्चिम के मार्ग का प्रश्न फिर उपस्थित हुआ तो उसने शाही सेना के प्रथम ऐडमिरल लार्ड सैंडविच को फिर अपनी सेवाएं समर्पित करदीं। उसकी प्रार्थना तुरन्त स्वीकार करली गई।

कुक ने जो कुछ मांगाएं रखी थीं पूर्ण रूप से वे दी गई और उसने अपने लिए पुराने 'रिजाल्यूशन' जहाज को चुना। एक दूसरा जहाज 'डिसकवरी' कैप्टेन क्लार्क की आधीनता में उसके साथ चला। यह यात्रा कुक की अन्तिम यात्रा थी क्योंकि उससे वह वापस नहीं लौटा। १७७६ में वह अपनी तीसरी और अन्तिम यात्रा के लिए निकल पड़ा। उसको आदेश था कि वह 'न्यू-अलबियन' जिसकी खोज ड्रेक ने की थी जावे और उन नदियों या पतली जलधारा का पता लगावे जो हडसन या बैफिन-बे को जाती हों।

एक बार कुक फिर टसमानिया और न्यूजीलैंड पहुँचा और प्रशान्त महासागर के द्वीपों में बहुत समय तक ठहरा। १७७७ में वह उत्तर की ओर चला। थोड़ी दूर चलने के उपरांत कुक को

एक द्वीप दिखलाई पड़ा। बड़े दिन का पर्व समीप था कुछ ही दिन रह गए थे अतएव कुक उस द्वीप पर इस आशय से उतरा कि उसको खाने कछुए और मछलियाँ खाने के लिए मिलेंगी। उसकी आशा पूरी हुई और उसके आदमियों ने तीन सौ कछुए पकड़े। वे बहुत अच्छे थे। कुक ने उस द्वीप का नाम 'क्रिसमस द्वीप' रख दिया और वह आगे बढ़ गया। कुछ दिनों की यात्रा के बाद वे एक द्वीप समूह के पास पहुँचे जिसकी पहले किसी को जानकारी नहीं थी। वास्तव में वे हवाई द्वीप पर थे। वहाँ के निवासी अपनी छोटी नावों में आये और आलू तथा सुअर के मांस को यात्रियों के हाथ बेचा। लंगर डालने के लिए उपयुक्त स्थान देखकर कुक ने वहाँ लंगर डाल दिया। वह समुद्र तट पर उतरा तो वहाँ के निवासियों ने उसका आदर और श्रद्धा से स्वागत किया। वे उसके सामने आकर पृथ्वी पर लेट जाते और उठने का संकेत करने पर ही उठते थे। वहाँ कुक ने खाने पीने का ताजा सामान भर लिया। यद्यपि वहाँ के निवासी अंग्रेजों को आदर की दृष्टि से देखते थे किन्तु उन्होंने जो भी वस्तुएं दीं उनका पूरा मूल्य वसूल किया। यहाँ तक कि उन्होंने उस पानी और लकड़ी का भी मूल्य वसूल किया जो अंग्रेज ले गए। मौसम ठण्डा और तूफानी था और जहाजों की गति धीमी थी। २२ मार्च को जहाज फ्लैटरी अन्तरीप पहुँचे और एक सप्ताह बाद वे एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ कुक को आशा थी कि अच्छा नौकाश्रय मिलेगा। उसने उस स्थान का नाम होप-बे (आशा खाड़ी) रख दिया। उस सम्पूर्ण समुद्र तट को कुक ने किंग जार्ज

क्योंकि कुक की पुस्तक में जो उस देश का वर्णन था वह बहुत उत्साहवर्धक नहीं था।

कुक की मृत्यु के अठारह वर्ष बाद उसके मित्र 'बैंक' ने ब्रिटिश सरकार से प्रार्थना की 'कुक' को दोषों का राज्य सरकार को उपयोग करना चाहिए।

सन् १७७६ में अमेरिका के ब्रिटिश उपनिवेश ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा करदी और बंदियों का अमेरिका की ओर जाना कुछ कम हुआ तब लोगों का ध्यान आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड की ओर गया। बैंक को कैप्टेन कुक के साथ की गई १७७० की बोटैनी-बे की यात्रा की याद थी। उसने इङ्गलैंड की सरकार से प्रार्थना की कि अपराधियों को आगे से अमेरिका न भेजकर न्यू साउथ-वेल्स में भेजना चाहिए।

अतएव १७८७ में ग्यारह जहाजों का बेड़ा जिस पर एक हजार व्यक्ति थे कैप्टेन फिलिप्स के नेतृत्व में इङ्गलैंड से चले। ३६ सप्ताह की कठिन यात्रा के उपरांत वे २ जनवरी १७८८ में बोटनी-बे में पहुँचे।

कैप्टेन फिलिप्स न्यू-साउथ-वेल्स का गवर्नर नियुक्त कर दिया गया था। पहुँचते ही फिलिप्स ने जान लिया कि बोटैनी-बे उपनिवेश बसाने के लिए उपयुक्त स्थान नहीं है। कारण यह थी कि वहाँ दलदल और रेता था और उसके तट पर अन्धड़ चलते थे। भीषण अन्धड़ के अतिरिक्त प्रशान्त समुद्र की वेगवती लहरें उसके तट से सदैव टकराती रहती थीं।

जैसे ही वहां के निवासियों ने अंग्रेजों के जहाजों को देखा वैसे ही वे अपने भालों को हिलाकर चिल्लाने लगे जैसा कि उन्होंने अठारह वर्ष पूर्व किया था।

उन दिनों गरमी थी इस कारण फिलिप्स ने खुली नाव में बैठकर समुद्र तट का निरीक्षण किया। उसने कुक के बनाए हुए नक्शे में एक खुली हुई जगह जिसको पोर्ट जैक्सन लिखा था देखी। उसने उन दो पहाड़ों के बीच उस खुली हुई जगह में अपनी नाव को चलाने के लिए कहा। उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा कि जब उसने देखा कि उसका जल शांत और स्वच्छ है तथा उसका बन्दरगाह बहुत सुन्दर और सुरक्षित है। उस पर सघन वनस्पति लहरा रही थी। इस दृश्य की सुंदरता स्वच्छ जल और वनस्पति को देख कर फिलिप्स ने उस स्थान पर अपना उपनिवेश बसाने का निश्चय किया और उस स्थान का नाम उसने सिडनी रखा। सिडनी उस समय इंग्लैंड का गृह सचिव था जिसने फिलिप्स की नियुक्ति की थी।

उसने लार्ड सिडनी को लिखा "हम दोपहर के बाद पोर्ट जैक्सन में घुसे तो हमें यह देखकर प्रसन्नता हुई कि यह दुनिया का सबसे सुन्दर बन्दरगाह है जिसमें एक हजार जहाज सुरक्षा से साथ ठहर सकते हैं। हमारे लिये यह एक महान और महत्वपूर्ण दिन था और मुझे विश्वास है कि यह दिन साम्राज्य की नींव डालने का दिन सिद्ध होगा।"

•

# सत्रहवाँ परिच्छेद

## फ्रैंकलिन की उत्तर की ओर यात्रा

उत्तरी अमेरिका का उत्तरी तट अभी तक अपरिचित पड़ा था। उसकी खोज नहीं की गई थी। इस कारण फ्रैंकलिन ने मकेंज़ी नदी के मुहाने के लिए एक दूसरा खोज अभियान किया। मकेंज़ी के मुहाने पर पहुँच कर खोजी दल दो भागों में विभक्त हो गया। एक पूर्व की ओर और दूसरा पश्चिम की ओर गया। फ्रैंकलिन को उत्तरी ध्रुव की यात्रा में जो असहनीय कष्ट उठाने पड़े थे उसकी याद अभी तक ताजी थी परन्तु उसकी परवाह न कर उस साहसी खोजी ने इस यात्रा का नेतृत्व स्वीकार कर लिया। उसके सहायक के रूप में उसके पुराने मित्र बक और रिचार्डसन थे। खोज अभियान के अधिकारी फरवरी १८२५ में इङ्गलैण्ड से चले और न्यूयार्क और कनाडा होते हुए वे जून में फोर्ट कम्बरलैंड पहुँचे। एक महीने के उपरान्त वे अथाबास्का झील के किनारे पहुँच गए। वहाँ से वे ग्रेट-बियर-लेक-रिवर के किनारे पहुँचे जो उस झील से निकल कर मकेंज़ी नदी में गिरती है। उनकी योजना यह थी कि उस नदी के द्वार के समुद्र में उतरेंगे। उन्होंने बियर झील के किनारे जाड़े के

महीने निकालने का निश्चय किया। फ्रैंकलिन कभी भी चुप बैठ नहीं रह सकता था अतएव उसने निश्चय किया कि वह उस बड़ी नदी के मुहाने तक एक छोटे से दल के साथ जावे जिससे कि वह अपने अभियान की तैयारी कर सके।

फ्रैंकलिन ने मैकेंजी के स्मारक स्वरूप उस नदी को जिसका सर्वेक्षण मैकेंजी ने किया था मैकेन्जी नदी नाम दिया। एक छोटी सी नाव में जबकि हवा अनुकूल थी और धारा तेज थी फ्रैंकलिन ने उस नदी में साढ़े चार दिनों में तीन सौ बारह मील की यात्रा की। जल का नमकीनपन असीम आकाश और ह्वेल मछली के चिह्न खोजियों को उत्साहित कर रहे थे। अन्त में वे ध्रुवीय समुद्र में पहुंच गए। विस्तृत समुद्र फैला हुआ था उसमें बर्फ नहीं था और न यात्रा के लिए कोई बाधा ही दिखलाई पड़ती थी।

जब फ्रैंकलिन समुद्र तट के पास पहुंचा तो रेशमी यूनियन जैक ( इंगलैण्ड का राष्ट्रीय ध्वज ) जिसे फ्रैंकलिन की मृत्युशैया पर पड़ी हुई पत्नी ने बनाया था फहराया गया। फ्रैंकलिन जब इंगलैंड से इस यात्रा के लिए चला उस समय उसकी पत्नी मृत्युशैया पर पड़ी थी किन्तु उसने फ्रैंकलिन को मातृभूमि की सेवा के लिए जाने को विवश किया। फ्रैंकलिन के इंगलैंड से चलने के कुछ ही दिनों बाद वह मर गई। मरते समय मृत्युशैया पर पड़ी हुई फ्रैंकलिन की पत्नी ने अपने पति से यह प्रार्थना की थी कि जब तक वह ध्रुवीय समुद्र में न पहुंच जावे उसे खोले भी न फहरावे। जब कि वह झण्डा ध्रुवीय समुद्र के गौरवमय तट पर फहर रहा था तो उन अंग्रेजों

ने इंगलैंड के बादशाह की जय जयकार की ।

डेकमिन ने लिखा है "पाठक कल्पना कर सकते हैं कि जब मैंने पहले उस झंडे को फहराता देखा तो मेरा हृदय भर आया परन्तु बाद को मैं उसे फहराता देखकर प्रसन्न हुआ क्योंकि मेरी प्रिय पत्नी की अन्तिम इच्छा पूरी हो गई थी ।

उस वर्ष वहां नौकावाहन करने के लिए बहुत देर हो गई थी यद्यपि वहां अगस्त में गरमी थी अतएव ६ सितम्बर को वह बियर-लेक की ओर लौट आया । जहाँ कि जाड़े का मौसम निकालने का निश्चय किया गया था । उसकी अनुपस्थिति में वहाँ एक छोटा सा किन्तु अच्छा आरामदायक उपनिवेश बन गया था । जिसमें पचास व्यक्ति जिन में कैनेडियन और इंडियन शिकारी तथा उनकी पत्नियाँ और बच्चे भी सम्मिलित थे रह सकते थे । अपने नेता के सम्मान में उन्होंने उसका नाम फ्रैंकलिन फुट रक्खा था । वे सब वहां जाड़े के दिन व्यतीत करने के लिए जम गए ।

जैसे जैसे दिन छोटे होते गये वैसे वैसे यह समस्या गम्भीर होती गई कि सायंकाल के लम्बे समय का किस प्रकार उपयोग किया जावे । अतएव वहां के रहनवालों के लिए एक स्कूल स्थापित किया गया जिसमें पढ़ना लिखना और हिसाब सिखाया जाता था । रविवार को छुट्टी रहती थी और सभी लोग प्रातः और सायंकाल प्रार्थना करते थे । और दिन सायंकाल को उस हाल में सब लोग खेल खेलते और इस प्रकार अपना मन बहलाते । इस प्रकार उस अभियान दल के सभी लोग एक दूसरे से बहुत घुल मिल गए । सभी का एक

ही उद्देश्य था कि किस प्रकार उस समय को हंसी खुशी से काटा जावे।

एप्रिल में मौसम गरम हो गया। भूमि पर बर्फ अभी थी अतएव इस समय का उपयोग नावें तैयार करने में किया गया। मई के महीने में झील में हंस बतख मुर्गाबी और गानेवाली चिड़ियां आने लगीं। मौसम ठीक हो गया था अस्तु जून में नावें नदी में डाल दी गईं और २४ जून को अभियान दल मकेंजी नदी के मुहाने की ओर चल पड़ा। वहां पहुंचकर दल दो भागों में बंट गया। फ्रेंकलिन ६ नाविकों के साथ 'लायन' जहाज पर था और बैक उसके साथ 'रिलायन्स' जहाज पर था। यह दोनों जहाज पश्चिम की ओर चले। रिचार्डसन का दल पूर्व की ओर चला। उसका काम था मैकेंजी नदी के मुह से कापरमाइन के समुद्र तट का सर्वेक्षण करना। ७ जुलाई को फ्रेंकलिन समुद्र के किनारे पहुंचा और अपने दोनों जहाजों पर इंगलैंड का राष्ट्रीय ध्वज फहराकर वे दोनों जहाज उस अनजाने समुद्र में ले चला। आगे बढ़कर वे समुद्र तट से एक मील दूर पानी में ठहर गए। एकाएक लगभग तीन सौ नावें जिनमें ऐस्किमो भरे थे उनकी ओर आती दिखलाई दीं। इन लोगों ने गोरे लोगों को कभी नहीं देखा था। लेकिन जब उन्हें समझाया गया कि यह लोग ऐसे रास्ते की खोज में आए हैं जिससे कि बड़े जहाज भी यहां तक आ सकें और उनसे व्यापार कर सकें तो उनकी प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा। वे फिर भी इन छोटे छोटे जहाजों को

घेरे हुए थे और उनमें से बीवें चुराने लगे। जब उन्हें रोका गया तो उन्होंने क्रुद्ध होकर चाकू निकाल लिए। परिस्थिति गम्भीर होते देख मैकेंजि ने बन्दूकें निकालने की आज्ञा दी। बन्दूकों को देखकर और उनकी गोली की आवाज और रफ्तार देखकर व लोग अपनी नावों को लेकर चले गए और छिप गए।

अब वायु अनुकूल थी। मैकेंजि के जहाज समुद्र तट के साथ साथ पश्चिम की ओर चले। कुछ दूर पहुंच कर बर्फ के कारण उन्हें समुद्र तट से हटना पड़ा। गहन कुहरा तूफानी हवाएं, और मूसलाधार वर्षा ने प्र्रुवीय समुद्र में नौपरिवाहन को अत्यन्त खतरनाक बना दिया। फिर भी मैकेंजि आगे बढ़ता ही गया और २७ जुलाई को एक बड़ी नदी के मुहाने पर पहुंचा। यह नदी इस तट पर ब्रिटिश सीमा में सबसे पश्चिमी नदी थी और ग्रेट ब्रिटेन और रूस की सीमाओं को बतलाती थी। मैकेंजि ने हिज-रायल-हाइनेस लार्ड क्लैरेंस के सम्मान में उसका नाम 'क्लेरेंस' रख दिया। एक संदूक में शाही तमगा वहां गाड़ दिया गया और हर्षध्वनि के के साथ यूनियन जैक ( इंगलैंड का राष्ट्र ध्वज ) फहराया गया।

फिर भी कुहरा और तूफान नहीं रुके। जैसे जैसे वे पश्चिम की ओर बढ़ते गए कुहरा और गहरा होता गया। अगस्त के मध्य में जाड़ा आ गया। नावों को खींचने और घसीटने के अत्यन्त कठोर श्रम के कारण सभी लोग थक कर अशक्त हो गए थे। यही नहीं वहां के मच्छरों और कीड़ों के कारण वे बहुत परेशान हो गए थे। वे मकेंजी नदी के मुहाने से ३७४ मील दूर थे और बर्फीली

अन्तरीप की आधी दूरी पर थे। फ्रैंकलीन के मन में अपार साहस और उत्साह था किन्तु वह अपने साथियों का जीवन और अधिक खतरे में नहीं डाल सकता था। अतएव वह रिटर्न-रीफ से लौट पड़ा। वहाँ से लौट पड़ने के बहुत बाद उसको ज्ञात हुआ कि कैप्टेन बीचे जिसे बेहरिंग स्ट्रेट के मार्ग से 'ब्लासम' जहाज में भेजा गया था उसने बर्रोसी अन्तरीप ( आइसी कैप ) को पूरा कर लिया था और फ्रैंकलिन की १६ मील की दूरी पर प्रतीक्षा कर रहा था।

२१ सितम्बर को फ्रैंकलिन भालू के निवासस्थान फोर्ट फ्रैंकलिन पहुँचा। डाक्टर रिचार्डसन आठ सौ मील की सफल समुद्र तट यात्रा करके उससे पहले ही वापस लौट आया था

जब रिचार्डसन ने फ्रैंकलिन को छोड़ा तो 'डालफिन' और 'यूनियन' जहाजों को लेकर वह अपरिचित पूर्वीय समुद्र तट की ओर गया। फ्रैंकलिन के दल की ही भाँति उसको कुहरे, तूफान और मच्छरों ने बहुत परेशान किया। परन्तु रिचार्डसन बढ़ता ही गया और मार्ग में जो द्वीप खाड़ी अन्तरीप आए उनका नाम रखता गया। उसने फ्रैंकलिन-बे पैरी-केप इत्यादि नाम रक्खे और एक स्थान पर जहाँ डालफिन लगभग बर्फ के कारण नष्ट होते होते बचा उसका नाम उसने 'डालफिन-स्ट्रेट' रक्खा। फ्रैंकलिन के दल के पहुँचने के पूर्व ही व वहाँ पहुँचे थे। उनको वहाँ पहुँचने में इतनी देर हो गई थी कि वे उस वर्ष वहाँ नहीं पहुँच सकते थे। उस किले में एक जाड़ा वहीं और व्यतीत करना था। दूसरे वर्ष वे वहाँ

वर्ष बाद २६ सितम्बर १८२७ को इंगलैंड पहुँचे।

फ्रैंकलिन उत्तर पश्चिम का रास्ता खोज निकालने में असफल हो गया परन्तु उसने तथा रिचार्डसन ने उत्तरी अमेरिका के एक हजार मील समुद्र-तट की खोज की जिसके लिए उसको सर की उपाधि दी गई और पैरिस भूगोल समिति ने उसको उस वर्ष सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण खोज करने के उपलक्ष में सोने का पदक दिया।

यह आश्चर्यजनक घटना ही कही जायेगी कि फ्रैंकलिन और पैरी अपनी ध्रुवीय खोजों से साथ साथ लौटे और नौसेना मंत्रालय में एक दूसरे से केवल दस मिनट के अन्तर पर पहुँचे।

## फ्रैंकलिन द्वारा उत्तर पश्चिम भाग की-खोज

यद्यपि उत्तरी अमेरिका का सम्पूर्ण तट खोज लिया गया था किन्तु उत्तर पश्चिम का मार्ग जिसके लिए इतनी खोजें की गईं वह अभी तक पूरा नहीं हो सका था। 'सर-जान बैरो' जो ध्रुवीय खोजों का जनक कहलाता है और जो नौसेना सचिव था उसने निश्चय किया उस मार्ग को खोजने के लिए एक खोज अभियान और भेजा जावे जो पिछली सभी खोजों को एक सूत्र में पिरो दे।

नए ध्रुवीय अभियान में अपनी सेवाएं देने के लिए बहुत से लोगों ने प्रार्थना की। लेकिन सर जान फ्रैंकलिन ने कहा कि इस अभियान का नेतृत्व करने का मेरा विशेष अधिकार है। उसने कहा कि और कोई कार्य मुझे इतना प्रिय नहीं जितना कि ध्रुवीय समुद्र की खोज करना।

उससे कहा गया कि अफवाह यह है कि आपकी उम्र ६० वर्ष की हो गई है और लगातार लम्बे वर्षों तक खोज अभियानों में कठोर परिश्रम करते रहने के बाद उसको अब विश्राम करना चाहिए।

साहसी यात्री ने कहा "नहीं नहीं मैं तो अभी केवल ५९ वर्ष का ही हूं। फिर कोई कुछ न कह सका और फ्रेंकलिन उस खोज अभियान का नेता नियुक्त कर दिया गया।

दो जहाज उसको दिए गए। उनमें तीन वर्ष के लिए खाद्य सामग्री रख दी गई। उन जहाजों पर १२९ नाविक और कई अधिकारी थे। १९ मई १८४५ को अन्तिम बार सर जान फ्रैंकलिन ने इंग्लैंड छोड़ा फिर उनको किसी ने नहीं देखा।

जहाजों पर जितने भी लोग थे उन सभी में उत्साह था और उत्तर पश्चिम मार्ग के रहस्य को जान लेने के लिए वे दृढ़ निश्चय थे। उन्हें सफलता का पूर्ण विश्वास था।

४ जुलाई को ग्रीनलैंड के पश्चिमी तट पर जहाजों ने डिस्को द्वीप में लंगर डाला। उसके उपरान्त सब चुप और शान्त। शेष कहानी अत्यन्त करुणाजनक है और उस विनाश की खोज में जो प्रति वर्ष खोज अभियान जाते रहे उनकी सूचना मात्र है।

१८४८ में जेम्स रास अपने खोये हुए मित्र फ्रैंकलिन की खोज

दूरी पर पहुँच

गया था किन्तु

ऐस्किमो अपने कपड़े में मौसेला के अधिकारी के बटन को लगाए हुए था। उसने सबका ध्यान आकर्षित किया। पूछा कि यह बटन कहाँ से आया तो ऐस्किमो ने बतलाया कि यह उन गोरों में से किसी का है जो एक द्वीप पर भूख से मर गए। परन्तु हमने उन गोरों को कभी नहीं देखा।

अन्त में फ्रेंकलिन का समाचार मिला। 'एम-क्लिन्टाक' दस मील चल कर विक्टोरिया अन्तरीप पहुँचा। वहाँ ऐस्किमो लोगों ने बर्फ का एक अच्छा झोंपड़ा बना लिया। दूसरे दिन प्रातःकाल सारा गाँव वहाँ आया। लगभग ४५ स्त्री पुरुष कम मरे हुए गोरियों के चिह्न लेकर आए। किसी के पास चाँदी का चम्मच था तो किसी के पास सोने की चैन थी। बटन चाकू इत्यादि बहुत सी वस्तुएं उन्होंने दिखलाईं पर उनमें से किसी ने भी उन गोरे लोगों को देखा नहीं था। एक आदमी ने बतलाया कि उसने उस द्वीप पर जहाँ कि वे मरे थे उनकी हड्डियाँ देखी हैं यद्यपि कुछ को दफना दिया गया था। उन्होंने बतलाया कि किंग-विलियम द्वीप के पश्चिम में एक जहाज जिसके तीन मस्तूल थे बर्फ से दब कर नष्ट हो गया। एक वृद्ध आदमी ने उस समुद्र तट का नकशा भाले की नोक से बर्फ पर बनाकर बतलाया। उसने बतलाया कि जहाँ जहाज डूबा था वह यहाँ से आठ यात्रा की दूरी पर है।

एम-क्लिन्टाक जहाज पर लौट आया। उसने स्लेज के द्वारा एक सौ बीस मील की यात्रा की थी। अमेरिका के समुद्र तट की जितनी अभी तक यात्रा हो चुकी थी उसमें उसने इस यात्रा को

घेरकर उसको पूरा किया।

दो अप्रैल को और अधिक दस स्लेजों के द्वारा किंग विलियम द्वीप की ओर चले। उस समय भी शीत बहुत अधिक पड़ रहा था और सूर्य की चकाचौंध कर देने वाली रोशनी आंखों के लिए बहुत कष्टदायक थी। आदमियों के चेहरे और होंठ सर्दी के कारण फट और झुलस गए। उनकी अंगुलियां भी सर्दी के कारण झुलस गई थीं। तीन सप्ताह की यात्रा के उपरान्त उन्हें विक्टोरिया-अन्तरीप पर बर्फ के झोंपड़े दिखलाई दिए जिनमें ऐस्किमो रहते थे। यहां उन्हें फ्रेंकलिन के दल के और अधिक चिन्ह मिले। ६ सुरक्षित मांस के टिन चम्मच, एक मेजवानी लकड़ी का तख्ता। पूछने पर ज्ञात हुआ कि किंग-विलियम-द्वीप के निवासियों ने दो जहाज देखे थे। एक जहाज तो गहरे पानी में डूब गया था और दूसरे को किनारे पर लाकर तोड़ डाला गया। उस वर्ष के अगस्त और सितम्बर में जहाजों को नष्ट किया गया था। जब जहाजों को नष्ट कर दिया गया तो गोरे लोग एक नाव लेकर बड़ी नदी की ओर चले गए और उस जाड़े में उनकी हड्डियां वहां पाई गईं।

मैक-क्लिन्टाक अब किंग विलियम द्वीप के दूसरे तट पर गया। वहां ऐस्किमो ने उन चांदी की तश्तरियों को दिखाया जिन पर फ्रेंकलिन तथा अन्य अधिकारियों के चिन्ह और हस्ताक्षर थे। उन्होंने बताया कि जहां यह दुर्घटना हुई वह यहां से पांच दिन की यात्रा की दूरी पर है। वहां अब उसका कुछ भी शेष नहीं बचा। वहां बहुत सी पुस्तकें भी थीं जो कि सब नष्ट हो गईं। एक स्त्री

ने बतलाया कि बहुत से गोरे लोग बर्फ़ के बड़ी नदी की ओर गए तो मर मर कर गिरते गए। कुछ को दफ़ना दिया गया और कुछ नहीं दफ़नाए गए। एम-क्लिनटाक आगे बढ़ा और १२ मई को किंग महानदी पर पहुँचा। भयंकर बर्फ़ीली हवा चल रही थी परन्तु फिर भी इन्होंने फ्रैंकलिन के अभियानसेवियों की खोज करने के लिए डेरा डाला। फावड़ों तथा कुदाली लेकर उन्होंने बहुत खोज की परन्तु सब व्यर्थ हुई। वहां कोई ऐस्किमो भी नहीं मिले जिनसे कुछ अधिक पता चलता। निराश होकर बीची की ओर वापस लौटने लगा। बर्फ़ पर धीरे धीरे समुद्र तट पर टहल रहा था कि उसको एक मानव का कंकाल दिखाई पड़ा। उसका मुंह नीचे था और वह आधा बर्फ़ में गड़ा था। वह एक नीली वास्कट पहने हुए था और उस पर एक कोट था। उस बूढ़ी स्त्री ने ठीक ही बतलाया था कि वे लोग चलते हुए मर मर कर गिरते गए। अब खोज करने वालों को सफलता की आशा हो चली। उनका परिश्रम सफल हुआ। किंग विलियम द्वीप के उत्तर पश्चिम तट पर उन्हें मीता जहाजी कागज मिला जिस पर जहाज के एक कर्मचारी ने खोज का संक्षिप्त समाचार लिखा था। उसमें लिखा था कि १८४६ में सब लोग कुशलपूर्वक थे। दोनों जहाजें बर्फ़ में बीचे-द्वीप के पास बर्फ़ में जम गए। उससे पूर्व इनलोग विलिंगटन चैनल में होकर कार्नवालिस द्वीप के पश्चिम की ओर लौट आए थे। उस समय सर जान फ्रैंकलिन खोज अभियान का नेतृत्व कर रहे थे। प्रथम

वर्ष के प्रयत्नों का फल उत्साहवर्धक था । १८४६ में वे किंग विलियम द्वीप के बहुत समीप पहुँच गए जबकि जाड़े ने उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया । २२ अप्रैल १८४८ में जहाजों को छोड़ दिया गया क्योंकि वे अप्रैल १८४६ से अप्रैल १८४८ तक बर्फ में जमे रहे निकले ही नहीं । सर जान फ्रैंकलिन ११ जून १८४७ को मर गए । उसके बाद कैप्टेन क्रोजियर ने नेतृत्व किया । अन्तिम वाक्य था कि कल २६ को हम फिश नदी के लिए प्रस्थान करेंगे ।

अब खोजियों ने फ्रैंकलिन की पुस्तकों कागजात तथा अन्य चिन्हों की खोज करने के लिए समीपवर्ती स्थानों को देखना प्रारम्भ किया । १ मई को उन्हें एक बड़ी नाव मिली उसमें कुछ कपड़े पड़े थे । ऐसा दिखता था कि उस नाव को फिश महानदी में जाने के लिए तैयार किया गया था ।

उसके पास ही दो मनुष्य कंकाल पड़े थे । कुछ घड़ियाँ बंदूकें एक बाइबिल विकार-आफ-वेकफील्ड पुस्तक प्रार्थना की पुस्तक सात आठ जोड़े जूते कुछ रेशमी रूमाल तौलिया साबुन स्पंज कंघे टूथब्रश छीन कारतूस डोरा सुई चाय चाकलेट और थोड़ी तम्बाकू भी वहाँ मिले ।

सब वस्तुओं को सावधानी से बटोरकर वे फॉक्स जहाज पर ले आए । वे १६ जून को जहाज के पास पहुँचे । दो महीने बाद जहाज बर्फ से छूट गया और 'एम-क्लिन्टाक' सितम्बर में लंदन पहुंचा और उसने सर जान फ्रैंकलिन द्वारा उत्तर पश्चिमीय मार्ग ढूंढ निकालने में सफलता प्राप्त करने और फिर दुर्घटना का शिकार

हो जाने का समाचार बतलाया।

फ्रैंकलिन के जो भी अवशेष मिले उनको लन्दन की युनाइटेड सर्विस इंस्टीट्यूशन के अजायबघर में बड़ी सावधानी के साथ रखा गया। वाटरलू प्लेस में उस महान वीर साहसी नाविक तथा उसके बहादुर साथियों का जिन्होंने उत्तर पश्चिम का मार्ग खोज निकालने में अपने प्राणों को उत्सर्ग कर दिया था स्मारक बनाया गया।

इंग्लैंड में सर जान फ्रैंकलिन को उत्तर पश्चिम का मार्ग खोज निकालनेवाला स्वीकार किया गया और वेस्ट मिनिस्टर ऐबे म उसके संगमरमर के स्मारक पर टैनिसन ने जो सर जान फ्रैंकलिन का भतीजा था प्रसिद्ध पंक्तियाँ लिखीं जिनका आशय नीचे लिखा है।

"यहाँ नहीं श्वेत उत्तरी ध्रुव को तुम्हारी हड्डियाँ प्राप्त करने का गौरव मिला। परन्तु हे वीर, तुम्हारी आत्मा उस आनन्ददायक यात्रा के लिए अग्रसर हो रही है जिसका अन्तिम स्थान कोई पृथ्वी का ध्रुव नहीं है।

# अठारहवाँ परिच्छेद

## नानसेन की उत्तरी यात्रा

उत्तरी ध्रुव की खोज के इतिहास में नानसेन का नाम सदैव अमर रहेगा। यद्यपि अन्य खोजियों ने भी उत्तरी ध्रुव की खोज में प्रशंसनीय कार्य किया है परन्तु 'नानसेन' और उसके जहाज 'फ्राम' का नाम इस सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय है।

नानसेन ने ग्रीनलैंड को पूर्व से लेकर पश्चिम तक पार कर लिया यह स्वयं में बहुत जोखिम का कार्य था। पैरी को छोड़कर अन्य कोई खोजी इस कार्य को नहीं कर सका था। नानसेन से कुछ वर्ष बाद उसने ग्रीनलैंड को और अधिक ऊँचे अक्षांश रेखा पर पार करके यह प्रमाणित कर दिया कि यह एक द्वीप है।

इस समय उत्तरीय ध्रुव समुद्र में हिम के बहने की ओर खोजियों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित हुआ। १८८१ में एक जहाज 'जीनेटी' साइबेरिया के समुद्र तट के पास टूटा था। उस जहाज के ध्वंसावशेष तीन वर्ष बाद ग्रीनलैंड के दक्षिण पश्चिम तट पर बहकर आ गए। इस घटना से नानसेन का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित हुआ कि बेहरिंग समुद्र से कोई जलधारा उत्तरी

प्रवाहित होकर अटलांटिक समुद्र तक अवश्य ही जाती है। अस्तु उसने यह योजना तैयार की कि यदि वह ऐसा मजबूत जहाज बना सके, जो बर्फ के दबाव को सह सके तो उसको बर्फ में जम जाने दिया जावे और फिर उसको उसी तरह से बहने दिया जावे जैसे कि 'जैनेट्टी' के ध्वंसावशेष बहे थे। उसको यह मालूम था कि बर्फ उसको बहाकर तीन वर्षों में उत्तरी ध्रुव तक ले जावेगा।

उसकी यह योजना बहुतों को असम्भव और मूर्खतापूर्ण प्रतीत हुई अतएव कोई उसे सहायता देने के तैयार नहीं था। किन्तु किंग-ऑस्कर ने उसकी यात्रा के व्यय के लिए एक हजार पौण्ड देना स्वीकार कर लिया। आर्थिक सहायता प्राप्त हो जाने पर 'फ्राम' जहाज का निर्माण किया गया। उस वीर अभियान की सफलता केवल इस बात पर निर्भर थी कि जहाज इतना मजबूत हो कि बर्फ के दबाव को सह सके। अतएव उसके निर्माण में बहुत सावधानी बर्ती गई। अंत में वह बनकर तैयार हो गया। उसमें बिजली भी लगा दी गई। उस जहाज में सभी सुविधाएं उपलब्ध करदी गई थीं। पुस्तकालय वैज्ञानिक ढंग से तैयार किया हुआ भोजन और आधुनिकतम यंत्र तथा औजार जहाज पर उपलब्ध थे। उस वीर अभियान के तेरह सदस्य थे।

१८९३ में गर्मियों के मध्य में एक सायंकाल के समय जब डूबते हुए सूर्य की लाल किरणें पृथ्वी पर पड़ रही थीं 'फ्राम' समुद्र में उतरा। जहाज नार्वे के समुद्र तट के साथ चल रहा था। क्रमशः जहाज ने बरगेन ट्रांडजेम और ट्रामसो को पार

किया परन्तु आगे चलकर उसको पश्चिमी भयंकर बर्फीली हवा चलने लगी। बर्फ तथा हवा की भयंकर मार के कारण जहाज समुद्र तट से दूर हट गया। अब भूमि नहीं दिखलाई पड़ती थी। २५ जुलाई को उन्हें 'नोवाया-जेम्ल्या' की भूमि दिखलाई दी। 'नोवाया-जेम्ल्या' गहरे कुहरे से ढका हुआ था। नानसेन और उसके साथी 'खाबारोवा' पर उतर गए और वे वहां के छोटे से चर्च में गए। वहां उन्होंने स्लेज गाड़ियों को खींचने के लिए ३४ बड़े कुत्ते मंगवाए और उन्हें जहाज पर रखा और आगे चल दिए। ५ अगस्त १८९३ को उन्होंने सफलतापूर्वक 'यूगार स्ट्रेट' को पार कर 'कारा समुद्र' में प्रवेश किया जो उस समय बर्फ से मुक्त था। पांच सप्ताह बाद जहाज ने चेल्युस्किन अन्तरीप को पार कर लिया जो पुरानी दुनिया का सबसे उत्तरी सीमा बिन्दु था।

इस प्रदेश के सम्बन्ध में नानसेन ने लिखा है, "वह भूमि नीची और वीरान थी। सूर्य को समुद्र के पीछे नीचे की ओर गए हुए बहुत समय हो गया था केवल एक अकेला तारा आकाश में चमक रहा था। यह तारा ठीक चेल्युस्किन-अन्तरीप के ऊपर नीले आकाश में चमक रहा था। ठीक चार बजे हमारे झंडे फहराये गए और अन्तिम तीन कारतूस झण्डों की सलामी के लिए समुद्र पर दागे गये।"

इसके उपरान्त 'फ्राम' को नये साइबेरियन द्वीपों के पश्चिम में उत्तर की ओर मोड़ा गया। अब जहाज अनजाने क्षेत्र में चल रहा था यह समुद्र अछूता और खुला हुआ था जिस पर पहले

कोई भी जहाज नहीं फंसा था। जहाज अब बहुत दृढ़ता और तेजी के साथ उत्तर की ओर बढ़ता जा रहा था। अनुकूल हवा तथा और पाल उसको जितनी तेजी से ला सकते थे वह उतनी ही तेजी से जा रहा था।

जब जहाज ७८ डिग्री अक्षांश तक पहुंच गया तो उन्हें गहरे कुहरे में से सफेद बर्फ दिखलाई पड़ा। कुछ दिनों बाद फ्राम बर्फ में थम गया। पतझड़ का मौसम समाप्त हो रहा था और शीतकाल की लम्बी रात आ रही थी। उस लम्बी रात के लिए तैयारी करने के अतिरिक्त और कुछ करने को नहीं था। अस्तु हम अपने जहाज को जाड़ों में रहने के लिए जितना आरामदायक बना सकते थे बना लिया।

अक्टोबर के महीने में बर्फ चारों ओर से भयंकर गर्जन करते हुए 'फ्राम' को दबाने लगा। बर्फ फ्राम के पास लम्बी और ऊंची दीवार के समान इकट्ठा होने लगा। वह फ्राम के ऊपर फैलने लगा। वास्तव में बर्फ 'फ्राम' को पीस डालने का पूरा प्रयत्न कर रहा था।

बड़ा दिन आया और चला गया। जनवरी १८९४ में थरमामीटर में पारा शून्य के नीचे तीस डिग्री तक पहुंच गया। फरवरी में 'फ्राम' बहना शुरू हुआ और अस्सी डिग्री उत्तर अक्षांश रेखा तक पहुंच गया। अस्सी डिग्री तक पहुंचने के उपलक्ष में नानसेन और उसके सहयोगियों ने खूब जश्न मनाया। सब लोग बहुत प्रसन्न थे। 'चलो बढ़ें' यह कह कर हर्ष ध्वनि कर रहे थे। वायु तेजी से बह रही थी। उसके बहने से तेज सीटी जैसी आवाज हो

हो रही थी। चारों ओर बर्फ ही बर्फ दिखलाई देता था। आकाश और बर्फीला समुद्र सब एक हो रहा था और जहाज तेजी से उत्तर की ओर जा रहा था। सभी यात्री प्रसन्न और उत्साह से भरे हुए थे। जहाज इतनी तेजी से बह रहा था कि यदि उसी गति से वह चलता गया तो पचास महीनों में उत्तरी ध्रुव पहुंच जायेगा।

१७ मई को जहाज इक्यासी डिगरी अक्षांश रेखा पर पहुंच गया। ३१ अक्टोबर तक वह ८२ डिगरी अक्षांश पर पहुंचा। उस दिन बयासी डिगरी अक्षांश पर पहुंचने के उपलक्ष में एक बड़ा भोज हुआ। हम अपने लक्ष्य की ओर खुशी खुशी बढ़ रहे हैं। हम नये साइबेरिया द्वीपों और फ्रेंज-जोसेफ लैंड के बीचों बीच हैं और जहाज में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जिसे अपने लक्ष्य प्राप्ति की सफलता में सन्देह हो प्रत्येक का यही विश्वास है की वह जिस लक्ष्य के प्राप्त करने के लिए आए थे वह अवश्य प्राप्त होगा। अतएव हर एक यात्री प्रसन्न और आह्लादित है।

अब नानसेन ने स्लेज गाड़ियों द्वारा लम्बी यात्रा की योजना बनाई। उसके संबंध में सभी आज विशेषज्ञों का कहना है कि यह यात्रा ध्रुव के इतिहास में सबसे अधिक साहसी यात्रा थी। जाड़ों में यात्रा की तैयारी की गई। जाड़े के दिन यात्रा की तैयारी में निकल गए। नानसेन बसंत के आगमन पर लम्बी यात्रा के लिए प्रस्थान करना चाहता था। जब १८९४ का नव वर्ष आया तो फ्राम' फिर पंद्रह महीने के लिए मजबूती के साथ बर्फ में जम गया। कुछ दिनों के बाद बर्फ का एक ताजा और भयंकर दबाव आया और जहाज

लगभग चूर चूर हो जाने को हो गया। सभी ने आवश्यकता पड़ने पर जहाज को छोड़ने की तैयारियां करलीं। एक दिन बहुत चिन्ता और घबड़ाहट में व्यतीत हुआ। बर्फ भयंकर गर्जन करते हुए जहाज को दबा रहा था। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि प्रलय का दिन आ गया है। परन्तु दूसरे दिन बर्फ का वह भयंकर दबाव शान्त हो गया। जहाज अब चौरासी डिग्री उत्तर अक्षांश पर पहुँच गया था। अभी तक कोई भी व्यक्ति इतने उत्तर में नहीं पहुंचा था।

इस समय तक लम्बी साहसी स्लेज यात्रा की तैयारियां पूरी हो गई थीं। उन्होंने बहुत छोटी और हल्की नावें बनाई थीं जो जुते जल में चल सकती थीं। यह नावें स्लेज गाड़ियों पर रख दी गई जिन्हें कुत्ते खींचते थे। नानसेन ने निश्चय किया वह अपने साथ केवल एक साथी जानसन को ले जायगा और सब जहाज पर ही रहेंगे।

अन्त में वह महान दिन आया। उस खोज अभियान का मुख्य लक्ष्य यह था कि न्यू-साइबेरियन द्वीपों से अपरिचित उत्तरी ध्रुव समुद्र होकर अटलांटिक महासागर में स्पिट्सबर्गेन या ग्रीनलैंड के पास पहुँचा जावे। सभी साथियों ने बड़े हृदयस्पर्शी शब्दों से नानसेन को विदाई दी और उसके बाद दोनों साहसी और खोजी अपनी लम्बी यात्रा पर चल पड़े। वे चार स्लेज गाड़ियों और अट्ठाइस कुत्तों को लेकर उस बर्फीले समुद्र रूपी रेगिस्तान की यात्रा के लिए चल पड़े। पहले सप्ताह उनकी यात्रा निर्विघ्न हुई और वे पच्चासी अक्षांश रेखा तक पहुंच गए। नानसेन ने उस यात्रा

के सम्बन्ध में लिखा है "सब से भी भयंकर और कष्टदायक बात थी वह केवल भयंकर शीत था जिसका हमें सामना करना था। हमारे कपड़े अब बर्फ के जिरहबख्तर बन गए थे। मेरी कोट की बांह से रगड़ रगड़ कर मेरी कलाई में गहरा घाव हो गया। वह घाव गहरा होता गया और हड्डी तक पहुंच गया। रात्रि को हम सोने के गरम थैले में अपने को बन्द कर लेट जाते। एक घंटे तक हमारे दांत भयंकर शीत के कारण किटकिटाते रहते तब कहीं जाकर हमारे शरीरों में थोड़ी गरमी उत्पन्न होती।

इतनी भयंकर ठंड के होते हुए भी नानसेन दृढ़तापूर्वक उत्तर की ओर बढ़ता गया। वह कठोर बर्फ की बड़ी बड़ी चट्टानों पर चल रहा था और जहां तक दृष्टि जाती थी बर्फ ही बर्फ दिखलाई देता था। ८ अप्रैल को आगे बढ़ना असम्भव हो गया। नानसेन स्लेज से उतर पड़ा और पास के एक बहुत ऊंचे बर्फ के पहाड़ पर चढ़ गया। ऊंचे पर खड़े होकर उसने चारों ओर देखा। चारों ओर बर्फ के बड़े बड़े टीलों और चट्टानों के सिवाय और कुछ नहीं था। अतएव उसने निश्चय किया कि वह फ्रांज जोसेफ-लैंड की ओर बढ़े जो वहां से लगभग चार सौ मील दूर था। नानसेन ८६ डिगरी उत्तर अक्षांश रेखा तक पहुंच गया था जहां तक कोई व्यक्ति अभी तक नहीं पहुंच सका था।

जब नानसेन दक्षिण की ओर बढ़ा तो सूर्य की गरमी बढ़ने लगी जिससे उन्हें बहुत आराम मिला परन्तु उनकी भोजन सामग्री लगभग समाप्त हो गई थी और उन्हें प्रतिदिन एक कुत्ते को मार कर

दूसरे कुत्तों को उसका मांस खिलाना पड़ता था। यहाँ तक कि अंत में उनके पास केवल तेरह कुत्ते रह गए। पुनः में नानसेन को भयंकर बर्फ के तूफानों का सामना करना पड़ा और कुत्तों की संख्या घट कर केवल सात रह गई। यद्यपि वे अब फ्रैंज जोसेफ-लैंड की समीप में आ गए थे किन्तु फिर भी उन्हें कोई सुविधाजनक तट दिखलाई नहीं दे रहा था। नानसेन को जहाज छोड़ तीन महीने हो गए थे कुत्तों का भोजन बिलकुल समाप्त हो गया था और वे बेचारे भूख के मारे अपनी काठी खाने लगे थे। जब स्थिति इतनी भयावह हो उठी तभी नानसेन एक सील मछली मारने में सफल हो गए। उससे उन्हें एक महीने का भोजन मिल गया। नानसेन ने इस सम्बन्ध में लिखा है 'यह बहुत सुखदायक परिवर्तन था। अब हम जितना चाहें भोजन कर सकते थे। सील का मांस भून कर खाने में बड़ा स्वादिष्ट लगता था। हम दोनों उस क्षेत्र में जहां बर्फ ही बर्फ था सील-मांस की दावत उड़ा रहे थे।

उसके बाद उन्होंने एक समुद्री दीप देखा जो बर्फों की मार और वे उस स्थान पर जिसे उन्होंने इच्छमा शिविर का नाम दिया था ठहरे रहे। यह प्रदेश अत्यन्त वीरान था आगे बढ़ना कठिन था किन्तु खाने को भरपेट मिल जाता था।

२४ जुलाई को नानसेन को भूमि दिखलाई पड़ी। हर्ष से वे दोनों यात्री प्रसन्नविभोर हो गए। दो वर्षों के बाद उनको कभी न हटने वाले बर्फ का सफेद आवरण दूर कर पृथ्वी के दर्शन हुए थे। उन्हें मानो नया जीवन प्राप्त हुआ था।

अब उनके पास स्लेज गाड़ी को खींचने के लिए केवल दो कुत्ते शेष रह गए थे। इस कारण नानसेन और उसके साथी को गाड़ी को खींचने में कुत्तों की मदद करनी पड़ती थी। तेरह दिन लगातार वे उस दिशा में चलते रहे जिधर भूमि दिखलाई दी थी। अन्त में सात अगस्त को व बर्फ के सिरे पर आकर खड़े हो गए। उनके पीछे अनन्त कष्ट और कठिनाइयां थीं और सामने घर जाने के लिए प्रशान्त जल मार्ग फैला हुआ था। उन्होंने अपनी छोटी और हल्की नावें पानी पर डालीं जो जल पर थिरकने लगीं। जब कुहरा साफ हुआ तो उन्हें ज्ञात हुआ कि वे फ्रैंज जोसेफ-लैंड के पास के पश्चिमीय तट पर हैं। अब उन्हें बड़ी आशा बंध गई। परन्तु शीघ्र ही उन्हें घोर निराशा का सामना करना पड़ा। नियति ने उनके साथ बहुत क्रूरता की। वे नावों से उतर कर समुद्र तट पर शिविर लगाकर आराम कर रहे थे कि एक भयंकर तूफान उठा और तेज हवा चली उसके कारण बर्फ बहकर समुद्र तट पर आ गई और नानसेन की छोटी और हल्की नावें उस बर्फ में जम गईं। इन नावों के जम जाने से उस जाड़े में घर पहुंचने की आशा समाप्त हो गई। अब उन्हें विवश होकर वहां रहना पड़ा। भाग्यवश वहां समुद्री घोड़े और रीछ बहुत थे इस कारण उनको भूखों मरने की नौबत नहीं आई। जब नानसेन ने देखा कि जाड़ा यहीं व्यतीत करना होगा तो वह जाड़ों के निवास की तैयारियां करने लगा। कई दिनों तक व दोनों समुद्री घोड़ों को काटने और उनकी खाल निकालने में लगे रहे और उन्होंने यथेष्ठ तेल और खून इकट्ठा कर

लिया। उन्होंने समुद्री घोड़ों के मांस और चर्बी को उनकी खाल से ढक कर ढेर बनाकर सुरक्षित कर लिया।

सितम्बर के महीने में उन्होंने कुहरे और बर्फ में रहने के लिए झोंपड़ा तैयार किया। वह घोड़ों की खाल और हड्डियों से तैयार किया गया था और पत्थर तेल का लैम्प जलाकर उसे गरम करने की व्यवस्था की गई थी। उस झोंपड़े में नानसेन और उसका साथी रीछ की खाल ओढ़ कर और बिछाकर रात्रि को सोते थे। इस प्रकार उन्होंने जाड़े के लम्बे महीने व्यतीत किए। अक्तोबर में सूर्य लुप्त हो गया और दिन में भी अन्धेरा रहने लगा। जीवन बहुत नीरस और उदास हो गया क्योंकि वह तीसरा जाड़ा था जो उन लोगों को उत्तरी ध्रुव प्रदेश में व्यतीत करना पड़ रहा था। नानसेन ने बड़ा दिन थोड़े से गरम जल से अपने शरीर को धोकर और जानसन ने अपनी कमीज को उल्टी पहिन कर मनाया। बाहर का मौसम बहुत खराब और तूफानी था और उसकी बर्फीली ठंड से उनकी जान निकलती थी। उन्हें पुस्तक की तीव्र इच्छा होती किन्तु पुस्तक वहां अलभ्य वस्तु थी। नानसेन और जानसन यह हिसाब लगाकर अपने दिन काट रहे थे कि उनका जहाज 'फ्राम' अब कहां तक बह गया होगा और उसके घर पहुंचने की अब सम्भावना हो सकती है।

नानसेन और जानसन अपने अत्यन्त गन्दे कपड़ों से बहुत परेशान थे। वे चाहते थे कि उन अत्यन्त गन्दे चिकट कपड़ों को जो शरीर पर सरेस की तरह चिपक गए थे उतार कर फेंक दें। उनके

पास साबुन नहीं था और उन कपड़ों की चिकनाहट पर पानी का कोई भी असर नहीं होता था। मई में जाकर कहीं मौसम ऐसा हुआ कि वे अपने झोंपड़े को छोड़ सके। उन्होंने अपनी नावों को बर्फ पर खींचना शुरू किया और स्लेज गाड़ियों को खींचते हुए वे फ्रांज-जोसेफ लैंड के दक्षिण की ओर बढ़े।

एक बार तो नानसेन लगभग डूबते डूबते बचा। वे दोनों छोटी द्वीपों के दक्षिण में पहुंच गए थे। उन्होंने अपनी हल्की नावों को एक स्थान पर रख दिया और पास के बर्फीले टीले पर चढ़ गए। लेकिन उन्हें यह देखकर बहुत घबराहट हुई कि उनकी नावें बह चली थीं। नानसेन नीचे दौड़ा कुछ कपड़े उतार कर फेंक दिए और उसके पीछे पानी में कूद पड़ा। नाव तेज़ी से बही जा रही थी। पानी बर्फ के समान ठंडा था किन्तु यह उनके लिए जीवन मरण का प्रश्न था। बिना नावों के निष्प्राण और निर्जीव व्यक्तियों के समान थे। जो कुछ भी उनके पास था वह उन नावों में ही था। इस कारण नानसेन ने पूरी चेष्टा की कि वह नावों को पकड़ ले। उसने पूरा ज़ोर लगाकर नावों तक पहुंचने की कोशिश की। उसके हाथ पैर क्रमशः कठोर होते जा रहे थे और थकावट बढ़ रही थी। अन्त में नानसेन ने नाव के किनारे को हाथ फैलाकर पकड़ लिया। उसने प्रयत्न किया कि वह अपने को पानी से निकाल कर नाव में चढ़ जावे किन्तु उसका शरीर ठंड के कारण इतना अकड़ गया था कि वह पानी से निकल ही नहीं सका। किसी प्रकार नानसेन ने अपना एक पैर नाव के सिरे पर रख दिया और

जैसे तैसे उस पर चढ़ गया। दोनों नावों को एक साथ खेना सरल नहीं था। ठंडी तेज हवा उसको भीगी ऊनी कमीज में उसके शरीर को बेधती हुई निकल रही थी। ठंड के मारे उसका बुरा हाल था उसके दांत किटकिटा रहे थे और उसका सारा शरीर कांप रहा था। अन्त में किसी प्रकार वह बर्फ के किनारे पहुँच गया। वह बुरी तरह से कांप रहा था। जानसन ने उसके गीले कपड़े उतार कर उसको सोने वाले रीछ की खाल के थैले में बंद कर दिया जिससे कि कुछ गरमी आ जावे। वह जोखिम की स्थिति टल गई।

१७ जून १८९६ का दिन था नानसेन अकेला समुद्र तट का सर्वेक्षण कर रहा था जबकि कुत्ते के भौंकने की आवाज उसको सुनाई पड़ी और उसने सामने देखा कि किसी पशु के तलवे पर चिह्न बर्फ पर बने हैं। नानसेन आश्चर्यचकित हो गया और वह भूमि की ओर चल पड़ा। एकायक उसको मनुष्य की सी आवाज सुनाई पड़ी। तीन वर्षों में पहली बार उसको मनुष्य की आवाज सुनाई दी थी। नानसेन ने अपनी सारी शक्ति लगाकर पुकारा उसको उत्तर मिला और एक काली मनुष्य की छाया दूर से बर्फ के टीलों में चलती दिखलाई दी। वह एक मनुष्य था। वे दोनों जल्दी चलकर एक दूसरे के पास आ गए। नानसेन ने अपना टोप हवा में घुमाया। उसने भी वैसा ही किया। उसने जक्सन को पहचान लिया क्योंकि उसने उसको एक बार देखा था। बड़े प्रेम से दोनों ने टोप हाथ में लेकर एक दूसरे की अभ्यर्थना की और हाथ मिलाया। उन दोनों के

ऊपर कुहरे का आवरण था और पैरों के नीचे कठोर बर्फ । परन्तु वे एक दूसरे से मिलकर ऐसे प्रसन्न हुए मानो उन्हें स्वर्ग मिल गया हो ।

जैक्सन ने पूछा क्या आप नानसेन हैं । उत्तर मिला हाँ । ध्रुव की खोज करने वाले उस साहसी वीर के हाथ को प्रेम से पकड़ कर जैक्सन ने हिलाया और उसकी सफलता पर उसको बधाई दी । जैक्सन और उसके साथियों ने फ्लोरा अन्तरीप पर जाड़े का मौसम व्यतीत किया था जो फ्रांज-जोसेफ-लैंड का दक्षिणतम बिन्दु था और वे विण्डवर्ड जहाज की प्रतीक्षा में थे जो उन्हें घर ले जाने के लिए आने वाला था ।

२ जुलाई को विण्डवर्ड जहाज आ पहुंचा और तेरह अगस्त तक यह वार्दे पहुंच गया । नानसेन के सुरक्षित लौट आने की सूचना सारे विश्व में प्रसारित करदी गई । एक सप्ताह बाद नानसेन का छोटा किन्तु मजबूत फ्राम जहाज भी जिसने तीन वर्ष तक लगातार बर्फ के दबाव से संघर्ष किया था सुरक्षित पहुंच गया । और ९ सितम्बर १८९६ को नानसेन और उसके साहसी वीर साथी फ्राम जहाज में विजयोल्लास के साथ क्रिश्चियानिया पहुंचे । वह अभी तक सब खोजियों से अधिक उत्तर में पहुंचा था और उत्तरी ध्रुव के बहुत समीप होकर आया था ।

# उन्नीसवाँ परिच्छेद

## उत्तरी ध्रुव पर विजय

६ अप्रैल १९०९ खोज के इतिहास में स्वर्णिम दिवस था क्योंकि उस दिन 'पैरी' उत्तरी ध्रुव पहुँचने में सफल हो गया। शताब्दियों तक जिस उत्तरी ध्रुव ने अनेक साहसी मनुष्यों के प्रयत्नों को विफल कर दिया था उस दिन पैरी द्वारा विजित हो गया। उस दिन 'पैरी' ने अपना लक्ष्य प्राप्त किया जिसके लिए संसार के महान राष्ट्र प्रयत्नशील थे। वास्तव में पैरी ने अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जीवन के लम्बे तेईस वर्ष समर्पित कर दिये थे।

पैरी को उत्तरी ध्रुव की यात्रा करने की प्रेरणा 'नोरडेन्स-कियोल्ड' की ग्रीनलैंड की खोज पुस्तक को पढ़ने से मिली। उस समय वह संयुक्तराज्य अमेरिका की नौसेना में लेफ्टीनेंट पद पर काम रहा था। उसने १८८६ में ग्रीनलैंड की खोज अभियान में सम्मिलित होने के लिए नौसेना से छुट्टी ली और ग्रीनलैंड गया। वहाँ से जब वह लौटा तो उत्तरी ध्रुव की यात्रा करने का ज्वर उसके रोम रोम में भर गया। ग्रीनलैंड के खोज अभियान से लौटने पर उसने इस महाद्वीप को उत्तर में जहाँ तक भी सम्भव हो

पार करने की योजना तैयार की। बहुत कठिनाइयों के बाद वह अपनी उस योजना के अनुसार ग्रीनलैण्ड को उत्तर तक पार कर सका और वह पहला खोजी था जिसने संसार को यह बतलाया कि ग्रीनलैंड एक द्वीप है। अब पैरी की एक सफल उत्तरी ध्रुव के खोजी के रूप में प्रसिद्धि हो गई। उसके मस्तिष्क में केवल एक ही विचार था कि किस प्रकार उत्तरी ध्रुव पहुंचा जावे परन्तु उसके पास धन की बहुत कमी थी। कोई उसको सहायता देने के लिए तैयार न था। उस उत्साही खोजी ने हिम्मत नहीं हारी और छियानवे दिनों में उसने एक सौ अड़सठ व्याख्यान देकर धन एकत्रित किया और 'कैसल्म' जहाज को किराए पर यात्रा के लिए ले लिया। जून १८९१ में वह फिलाडेलफिया से ग्रीनलैंड की यात्रा के लिए चल पड़ा। उसकी पत्नी जोसफाइन भी पहली यात्राओं में उसके साथ गई थी इस बार भी उसके साथ थी। पैरी जहाज पर तीन साथियों और पर्याप्त कुत्ते लेकर ग्रीनलैंड के पश्चिमी तट की ओर बढ़ा। मैकार्मिक खाड़ी पर पहुंच कर पैरी ने एक छोटी सी झोंपड़ी तैयार की। उसकी पत्नी गर्भवती थी प्रसव काल समीप आ रहा था। उस झोंपड़े में उसकी पत्नी ने एक पुत्री को जन्म दिया। नवजात शिशु को गरम फर में लपेट कर बंडल बनाकर रख लिया गया। उससे उत्तर में तब तक कोई योरोपियन बच्चा उत्पन्न नहीं हुआ था। जब यह बात ऐस्किमो लोगों ने सुनी तो वे यह निश्चय करने के लिए कि यह लड़की कहीं बर्फ की तो नहीं बनी है दूर दूर से उसे देखने आने लगे। अपने जीवन

के ६ महीने तक नवजात शिशु चौबीस घण्टा लैंप की गरम रोशनी में रहता था ।

पैरी ने उत्तरी ध्रुव की जोखिम भरी यात्रा कई बार की । यहाँ उन सब यात्राओं का वर्णन कर सकना कठिन है । एक खोज अभियान में उसका हाथ जम गया । दूसरे अभियान में उसका पैर टूट गया । परन्तु वह साहसी और जोशी निराश नहीं हुआ । अनुभव के आधार पर अन्तिम और सबसे बड़े अभियान की तैयारियाँ करता रहा । जब उसके उत्तरी ध्रुव के अन्तिम बड़े अभियान की तैयारियाँ पूरी हो गईं तो उसे बहुत प्रसन्नता हुई और वह बहुत उत्साही प्रतीत होता था ।

'रूजवेल्ट' जहाज जिसका नाम संयुक्तराज्य अमेरिका के प्रेसीडेंट के नाम पर रखा गया था और जिसका उपयोग 'पैरी' ने ग्रीनलैंड की अन्तिम यात्रा में सफलतापूर्वक किया था उसीको उस ने उत्तरी ध्रुव की अन्तिम यात्रा के लिए चुना । जुलाई १९०८ में पैरी ने जहाज पर संयुक्तराज्य का राष्ट्रीय ध्वज फहराया और न्यूयार्क से उत्तरी ध्रुव की यात्रा के लिए चल पड़ा ।

जब जहाज चला तो हजारों व्यक्ति जो पैरी को विदा करने आए थे हर्ष ध्वनि करने लगे । यह एक विचित्र बात थी कि जिस दिन पैरी पृथ्वी के सबसे अधिक ठंडे स्थान के लिए प्रस्थान कर रहा था न्यूयार्क में बहुत अधिक गरमी थी । जब जहाज नदी में आगे बढ़ने लगा तो किनारे का शोर कम होता गया । आगे चलकर जहाज प्रेसीडेंट रूजवेल्ट के जहाज 'मेफ्लावर' के पास से

निकला तो उसने अपनी छोटी तोप से गोला दाग कर उत्तरी ध्रुव की यात्रा पर जानेवाले उस जहाज को सलामी दी। किसी भी जहाज को जो पृथ्वी के सिरे की यात्रा को निकला हो इतनी भावनापूर्ण विदाई नहीं दी गई थी। प्रेसीडेंट रूजवेल्ट स्वयं जहाज पर आए और हर एक यात्री से हाथ मिलाया। पैरी से बोले "पैरी मुझे तुममें और तुम्हारी क्षमता में विश्वास है यदि मनुष्य के लिए यह सम्भव है तो मैं तुम्हारी सफलता में विश्वास करता हूँ।" सबों की शुभ कामना के साथ रूजवेल्ट जहाज अपनी लम्बी यात्रा पर चल पड़ा।

२६ जुलाई १९०८ को उत्तरी ध्रुव रेखा को पैरी ने तीसरी बार पार किया और १ अगस्त १९०८ को वह मार्क-अन्तरीप पहुँच गया जो मनुष्य जाति का सबसे उत्तरी स्थान था। यह सभ्य संसार और उत्तरी ध्रुव के संसार की विभाजन रेखा थी। कई ऐस्किमो परिवारों और ढाई सौ कुत्तों को जहाज पर लेकर पैरी उत्तर की ओर बढ़ता चला गया।

इस यात्रा के सम्बन्ध में पैरी ने लिखा है "कल्पना कीजिए साढ़े तीन सौ मील तक ठोस जमे हुए बर्फ की। बर्फ के सभी रूप हमें यहां देखने को मिलते हैं। बर्फ का पहाड़, चौरस मैदान के आकार का बर्फ ऊबड़ खाबड़ बर्फ। और कल्पना कीजिए एक छोटे काले मजबूत और सुदृढ़ जहाज की जो बर्फ से संघर्ष करता हुआ आगे बढ़ता है। उस जहाज पर ६९ पागल व्यक्ति हैं जो 'केप्पिन की खाड़ी' और ध्रुवीय समुद्र के बीच सर्पीली मार्ग के उस स्वप्न

को चरितार्थ करने के लिए पार करना चाहते हैं जिसके लिए बहुत से वीर साहसी लोग बर्फ में जमकर और भूख से तड़प कर मर गए।"

पेरी ने वही पुराना मार्ग पकड़ा जो 'स्मिथ-साउंड' के पास से सेबाइन-अन्तरीप होकर निकलता था। यहां १८८४ में ग्रीली के लोगों दल को भूख से तड़प तड़प कर मरना पड़ा था। चौबीस आदमियों में से केवल सात जीवित बचे थे।

अब बहुत कुहरे और बर्फ ने जहाज को घेर लिया और पेरी को विवश होकर जाड़ा व्यतीत करने की तैयारियां करनी पड़ीं। जाड़ा व्यतीत करने के लिए पेरी ने 'शेरीडन' अन्तरीप को चुना जहां १९०६ में वह पहले भी जाड़ा व्यतीत कर चुका था। यहां उन्होंने 'रूजवेल्ट' का सामान उतार लिया और वहाँ की ऐस्किमो कुत्ते बर्फ में दौड़ने के लिए छोड़ दिए गए। यहां एक छोटा सा गांव बस गया और ऐस्किमो पुरुष और स्त्रियां शिकार के लिए चले गए। पेरी ने पहले की ही भांति यहां से नब्बे मील दूर ग्रांट लैंड का सबसे अधिक उत्तरी बिन्दु कोलम्बिया अन्तरीप से उत्तरी ध्रुव पर आक्रमण करने का निश्चय किया।

१२ अक्टोबर को सूर्य छिप गया और वे लोग प्रसन्नतापूर्वक उस महान अंधकार में प्रविष्ट हुए।

पेरी लिखता है "हमारे जाड़े के निवास की कल्पना कीजिए। साढ़े चार सौ मील उत्तरी ध्रुव से दूर हमारा जहाज बर्फ में जकड़ा तट से डेढ़ सौ गज पर पड़ा था और चारों ओर सर्वत्र बर्फ ही बर्फ था। बर्फीली तेज हवा सनसनाती हुई

और सीटी जैसी तेज आवाज करती हुई बहती रहती है। तापक्रम शून्य से ६० डिगरी नीचे तक चला जाता है। बाहर समुद्र की जलधारा में ज्वार भाटे के साथ बर्फ और गर्जन के साथ चलता है।"

बड़ा दिन आया। सबों ने उसको बड़े उत्साह के साथ मनाया। ऐस्किमो लोगों की दौड़ हुई। एक बच्चों की दौड़ हुई दूसरी पुरुषों की और तीसरी ऐस्किमो माताओं की दौड़ हुई जो अपने बच्चों को फर में लपेट कर दौड़ीं।

अंत में १२ फरवरी १९[illegible] को पहला स्लेज दल कोलम्बिया अन्तरीप की ओर चल पड़ा। एक सप्ताह बाद स्वयं पैरी सब सामान लेकर स्लेजों के द्वारा चला। सब लोग कोलम्बिया अन्तरीप पर मिल गए। वहां एकत्र होकर सबों ने उत्तर की महान जोखिमपूर्ण यात्रा की तैयारी की। उस चोटी दल में ७ पैरी के साथी १९ ऐस्किमो एक सौ चालीस ऐस्किमो कुत्ते और अट्ठाइस स्लेज गाड़ियां थीं। प्रत्येक स्लेज गाड़ी पर सभी आवश्यक सामान था। प्रत्येक स्लेज गाड़ी पर खाने पकाने के बर्तन चार आदमी कुत्ते और पचास सात दिन की भोजन सामग्री। मौसम साफ शान्त और ठंडा था।

एक मार्च को यह स्लेज गाड़ियां कोलम्बिया अन्तरीप से चल पड़ीं। पूर्व की बर्फीली हवा चल रही थी। शीघ्र ही आदमी और कुत्ते उस बर्फ में आंख से ओझल हो गए। मार्ग की कठिनाइयों और जोखिम की तनिक भी परवाह न करके वे गाड़ियां दिन प्रतिदिन आगे बढ़ने लगीं। कभी कभी उन्हें कोलम्बिया अन्तरीप के किनारे

के लिए एक छोटे दल को पीछे भेजना पड़ता था। कभी किसी खोजी यात्री को जिसका पैर या ऐड़ी बर्फ से जल जाती और वह आगे बढ़ना नहीं चाहता उसे पीछे बाद के शिविर में भेजना पड़ता था। कहीं खुला जल आ जाता तो उसको नावों द्वारा पार करने में देर लगती। यह सब कठिनाइयां झेलते हुए और कठिन यात्रा की जोखिम उठाते हुए वे आगे बढ़ते ही चले गए। यहां तक कि इन साहसी खोजियों ने पिछले सब रेकार्ड तोड़ दिए। उत्तरी ध्रुव में रहनेवाला रीछ भी यहां से आगे नहीं जाता था वे उसके आगे निकल गए और ८७ डिग्री उत्तर अक्षांश रेखा को पार कर गए। वे उस प्रदेश में पहुंच गए जिस प्रदेश में लगातार ६ महीने तक दिन ही रहता है। यह वह स्थान था जो कि लक्ष्य के बहुत समीप था और यहां से पेरी को तीन वर्ष पूर्व भोजन की कमी के कारण लौट जाना पड़ा था।

इस प्रकार वे एक महीने तक लगातार चलते रहे। एक के बाद दूसरा दल पीछे भेजा जाता रहा यहां तक कि अन्तिम सहायक दल भी पीछे भेज दिया। अब पेरी केवल अपने काले नौकर हेनसन और चार ऐस्किमो के साथ रह गया था। उसके पास पांच स्लेज गाड़ियां चालीस चुने हुए कुत्ते और चालीस दिन के लिए खाद्य सामग्री थी जबकि वह अकेला उत्तरी ध्रुव पर आक्रमण करने के लिए जो वहां से एक सौ तैंतीस मील दूर था चल पड़ा। अगले सप्ताह की प्रत्येक घटना रोमांचकारी थी। कुछ घण्टे सोने के बाद यह छोटा सा खोजी दल तो एप्रिल १९ ई. की अर्धरात्रि

के बाद अन्तिम यात्रा के लिए चल पड़ा । पैरी दल का नेतृत्व कर रहा था ।।

पैरी ने लिखा 'जब मैं पास की पहाड़ी पर चढ़ा और उत्तरी ध्रुव से सीधी आने वाली ठंडी हवा मेरे शरीर पर लगी तो मुझे हार्दिक उल्लास हुआ ।"

पैरी को भय था कि अब भी यदि कहीं खुला जल मिल गया तो वह अपना लक्ष्य प्राप्त करने में असफल हो सकता है । वह अब उस यात्रा को शीघ्र समाप्त करना चाहता था । पैरी दस घण्टे में बीस पच्चीस मील चलता थोड़ा विश्राम करता या सोता और फिर चल देता । यह क्रम बराबर चलता रहा । अब पैरी ८८ डिग्री उत्तरी अक्षांश रेखा पर पहुंच गया था । पैरी अब बड़ी तेजी से आगे बढ़ रहा था । जितना विश्राम उसके लिए नितान्त आवश्यक था वह केवल उतना ही विश्राम लेता था । ५ अप्रैल को वह उत्तरी ध्रुव से केवल पैंतीस मील रह गया था । पैरी उस बर्फ से ढके हुए जल में तेजी से आगे बढ़ रहा था । ६ अप्रैल को वह उत्तरी ध्रुव पहुंच गया ।

पैरी ने इसके सम्बन्ध में अपनी डायरी में लिखा है "आखिर मैं उत्तरी ध्रुव पर पहुंच गया । तीन सौ वर्षों के अनवरत परिश्रम का यह पुरस्कार था । यह मेरे जीवन का बीस वर्ष तक स्वप्न और ध्येय रहा था । मैं आज जबकि यहां पहुंच गया हूं तो मुझे यह बहुत साधारण घटना प्रतीत होती है ।

तुरन्त ही बर्फ के टीलों पर संयुक्तराज्य अमेरिका की राष्ट्रीय

ध्वजाएं फहराने लगीं और पैरी ने गौरव के साथ सूर्य की रोशनी में उनको ध्रुव पर फहराते देखा। उस अत्यन्त जोखिम को ध्रुव प्रदेशों में यात्रा करते समय पैरी अपने शरीर पर एक रेशमी झंडा लपेटे रहता था जिसको उसकी प्रिय पत्नी ने बनाया था। उसने उस ऐतिहासिक स्थल पर अब उस झंडे को फहराया जहां कोई उत्तर पूर्व और पश्चिम नहीं था।

वहां भूमि का चिन्ह भी नहीं था। चारों ओर बर्फ ही बर्फ दिखलाई देती थी। पैरी वहां अधिक दिनों नहीं ठहर सकता था क्योंकि भोजन सामग्री के समाप्त हो जाने का भय था। साथ ही इस बात का खतरा था कि उनकी वापसी यात्रा के पूर्ण होने के पहले कहीं बर्फ पिघल न जावे।

इसलिए थोड़ा आराम करके वे कोलम्बिया अन्तरीप के लिए वापस लौट पड़े। वे बहुत तेजी से चलकर सोलह दिन में ही कोलम्बिया अन्तरीप पहुंच गए। कोलम्बिया अन्तरीप से उत्तरी ध्रुव तक पौने पांच सौ मील की यात्रा करने में उन्हें सैंतीस दिन लगे थे। लौटते समय पैरी प्रतिदिन तीस मील की गति से लौटा।

वहां से सारा अभियान दल रूजवेल्ट जहाज की ओर लौटा। १८ जुलाई १९०९ को वह स्वदेश की ओर लौट पड़ा। अमेरिका पहुंचने पर सारा अमेरिका हर्षोन्मत्त हो उठा। वायरलैस से समस्त सभ्य संसार में यह खबर फैल गई कि पैरी उत्तरी ध्रुव पर संयुक्त-राज्य अमेरिका की राष्ट्रीय ध्वजा गाड़ आया। चार सौ वर्षों का त्याग साधना और तपस्या सफल हुई। खोज के इतिहास में यह चिरस्मरणीय दिवस था।

# बीसवां परिच्छेद

## दक्षिणी ध्रुव की यात्रा

पेरी ने १९ ९ में अमेरिका की राष्ट्रीय ध्वजा को उत्तरी ध्रुव पर फहराया था। १९११ में एक नार्वेनिवासी ने दक्षिणी ध्रुव को विजय कर उस पर अपने देश का राष्ट्रीय झंडा फहराया। परन्तु अन्तिम सफलता में पहुले के खोजियों द्वारा किया हुआ काम और प्राप्त किया हुआ अनुभव बहुत अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ। इस कारण यहां स्काट और सैक्लिटन के प्रयत्नों का उल्लेख कर देना अप्रासंगिक नहीं होगा।

१८७४ में चैलेंजर जहाज के द्वारा एन्टार्कटिक सर्किल (दक्षिणी ध्रुव रेखा) को पार कर लेने से दक्षिणी ध्रुव के बारे में खोजियों की रुचि बहुत बढ़ गई थी। बहुत सोच विचार के बाद यह निश्चय किया गया कि खोज के लिए विशेष रूप से उपयुक्त एक जहाज बनाया जावे। उसका नाम 'डिसकवरी' रक्खा जावे और कैप्टेन स्काट के नेतृत्व में दक्षिण ध्रुव को एक खोज अभियान भेजा जावे।

अगस्त १९ १ में स्काट डिसकवरी जहाज को लेकर इंगलैंड से चला। न्यूजीलैंड होकर उसने ३ जनवरी १९ २ को दक्षिणी

व व रेखा को पार कर लिया। तीन सप्ताह के उपरान्त वह उस बर्फ की दीवार के पास पहुंचा जिसने १८४ में रास को आगे बढ़ने से रोक दिया था। एक सप्ताह तक स्काट उस बर्फ की दीवार के साथ साथ चलता रहा। वहां से माउंट ऐरेबिस और टरर स्पष्ट दिखलाई देते थे किन्तु पैरी पहाड़ कहीं दिखलाई नहीं पड़ते थे। यह प्रत्यक्ष था कि दूर पर भूमि समुद्र से बहुत ऊंची दिखलाई पड़ती थी। उसने उस भूमि का नाम किंग-ऐडवर्ड-सप्तम की भूमि रख दिया। स्काट अपने साथ एक गुब्बारा लाया था। उसके सहारे वह आठ सौ फीट ऊंचा चढ़ गया। वहां से उसे दिखलाई पड़ा कि *सुदूर दक्षिण में एक विशाल हिमखंड फैला हुआ है।*

अब जाड़ा व्यतीत करने के लिए स्थान की तलाश करने की आवश्यकता थी। जाड़े का मौसम आ गया था। अस्तु स्काट मुरडो की खाड़ी में वापस लौट आया। वहां उसने अपने झोंपड़े बनाए और जाड़ा व्यतीत किया। वहां से वह दो नवम्बर १९ २ को दक्षिण के लिए स्लेज गाड़ियां लेकर चल पड़ा। स्काट अपने तीन साथियों के साथ चार स्लेज गाड़ियां और उन्नीस कुत्ते लेकर दक्षिण की ओर लगातार दिन तक चलता गया। किन्तु बर्फ बहुत अधिक था। कुत्ते उस बर्फ को सहन नहीं कर सके और एक एक करके वे मरते गए। यहां तक कि एक कुत्ता भी नहीं बचा और स्काट और उसके साथियों को स्लेज गाड़ियां खींचनी पड़ीं। यही नहीं खाद्य सामग्री भी चुकने लगी अतएव विवश होकर स्काट को रुकना पड़ा। जहां तक स्काट पहुंच सका था उससे दूर बहुत ऊंची

पर्वतमालाएं दिखलाई पड़ती थीं। स्काट ने उस पर्वतमाला का नाम इस खोज अभियान के जनक मरखाम के नाम पर मार्कहैम रख दिया।

१ दिसम्बर को ऐसी भयानक बर्फीली हवा चली कि उनका आगे बढ़ना असम्भव हो गया। अत्यन्त शीत और भूख से पीड़ित वे लोग सारे दिन अपने जाल के सोने के थैलों में पड़े रहे। वापस आने का दुखद विचार और उनकी निर्बलता उन्हें परेशान कर रही थी। अब भोजन सामग्री केवल चौदह दिन की रह गई थी परन्तु अत्यन्त पतिव्रतापूर्वक व वापस लौट पड़े। किसी प्रकार वे गिरते पड़ते डिपो तक पहुंचे। शैकिल्टन को स्कर्वी का रोग हो गया था और उसकी दशा बिगड़ती जा रही थी। जब किसी प्रकार वो फरवरी को वे लोग डिस्कवरी जहाज तक पहुंच गए तो चिन्ता मिटी। यद्यपि ये लोग दक्षिणी ध्रुव तक नहीं पहुंच सके किन्तु उन्होंने बहुत दूर दक्षिण में प्रवेश किया जहां अभी तक कोई भी नहीं पहुंचा था। उन्होंने यात्रा के नए तरीकों का परीक्षण किया था और उन्होंने ९९ मील की दूरी को ९१ दिनों में पार किया था। शैकिल्टन यात्रा के लिए बेकार हो गया था इस कारण उसको स्वदेश वापस भेज दिया गया किन्तु 'डिस्कवरी' जहाज जो बंदरगाह में बर्फ में जम गया था वह १९०४ में निकल सका।

शैकिल्टन १९०३ में इंग्लैंड लौट गया था परन्तु दक्षिण ध्रुव का बर्फीला रेगिस्तान उसको पुनः बुला रहा था। अतएव निमरॉड' जहाज को लेकर अगस्त १९०७ में पुनः दक्षिण की।

चल पड़ा। उसको इंगलैंड की महारानी ने एक यूनियन जैक ( इंगलैंड का राष्ट्रीय ध्वज ) प्रदान किया और आदेश दिया कि वह दक्षिण में जितनी दूर पहुँच सके वहाँ उसको गाड़ दे।

जहाज पर पैट्रोल मोटरकार ऐस्किमो कुत्ते और मंचूरिया के टट्टू लेकर वह न्यूजीलैंड से प्रथम जनवरी १६०८ को चल पड़ा। उसको विदा करने के लिए लगभग तीस हजार देशवासी समुद्र तट पर एकत्रित हुए थे। तीन सप्ताह के बाद उन्हें महान बर्फ की दीवार दिखलाई देने लगी। कुछ दिनों के बाद 'इरबस' और टेरर पहाड़ दिखने लगे। शैकिल्टन की इच्छा थी कि वह वाड़ के दिन किंग ऐडवर्ड सातवें की भूमि पर व्यतीत करे। परन्तु एक विशाल हिमखंड ने उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया। इस कारण शैकिल्टन ने पिछली बार जहाँ 'डिस्कवरी' को गाड़ में ठहराया गया था। उससे बीस मील उत्तर का स्थान पड़ाव स्थापित करने के लिए चुना। जहाज पर मंचूरिया के टट्टुओं को उतारा गया। बर्फ पर उतर कर वे टट्टू बहुत प्रसन्न थे। जहाज में उनको बहुत थकावट हो गई थी। शैकिल्टन एक बड़ा झोंपड़ा भी साथ था जो शीघ्र ही खड़ा कर दिया गया। दक्षिण ध्रुव के वीरान बर्फीले प्रदेश में ऐसा सुन्दर और आरामदायक मकान कभी नहीं खड़ा किया गया था। फोटो धोने के लिए अन्धेरा कमरा था रोशनी के लिए गैस का प्रबन्ध था एक बड़ा स्टोव गरम करने को था और रहने के लिए आरामदायक छोटे छोटे कमरे थे जिनमें तस्वीरों के द्वारा सजावट की गई थी। फोटोग्राफी का अन्धेरा

'सदर्न रोडवे' कहते हैं और जो सीधा दक्षिणी ध्रुव को जाता था। लेकिन उनके टट्टुओं की दशा उस बर्फीले प्रदेश में चलने से बहुत खराब हो गई थी। उन्हें तीन टट्टुओं को गोली से मार देना पड़ा और सात दिसम्बर को आखिरी टट्टू गिर कर मर गया। अब वे लोग एक बड़े पठार पर पहुंच गए थे जो कि समुद्रतल से दस हजार फीट ऊंचा था। यह दक्षिण की ओर ऊंचा उठता गया था। बड़े दिन को उन लोगों ने उस ऊंचे प्रदेश में एक छोटे से डेरे में रहकर मनाया। अभी तक उन अछूते प्रदेशों में किसी मनुष्य के पैर नहीं पड़े थे। अड़तालीस डिग्री पाला पड़ता हुआ बर्फ, और शरीर को काट देने वाली तेज बर्फीली हवा में वे अपनी स्लेज गाड़ियों को खींच रहे थे। अब उनके पास केवल एक महीने का भोजन बच गया था। बर्फीली हवाओं का सामना करते हुए और कम खाना खाकर भी वे लोग दस हजार पचास फीट की ऊंचाई पर चढ़ गए। यह दिन ९ जनवरी का था और वे अठासी डिग्री दक्षिण अक्षांश रेखा तक पहुंच गए थे। उसी समय एक भयंकर बर्फीला तूफान आया जिसके कारण उनका आगे बढ़ना असम्भव हो गया। साठ घण्टे तक वे भूखे प्यासे बेहद ठंड के कारण अपने सोने के थैलों में छिपे हुए अधमरे से पड़े रहे। उस यात्रा में वैसे कठिन दिन कभी नहीं बीते। चारों यात्रियों की अंगुलियां और चेहरे ठंड के मारे झुलस गए। उन्होंने यह निश्चय किया कि तूफान के कम होते ही दूसरे दिन वे इंगलैंड का झंडा लेकर दक्षिण की ओर बढ़ेंगे और यह उनका अन्तिम पड़ाव होगा। वे [illegible] जनवरी

तक चलते चले गए अब वे दक्षिणी ध्रुव से केवल सत्तानवे मील रह गए थे। वहाँ उन्होंने यूनियन जैक फहराया और उस विस्तृत पठार पर अपने बादशाह के नाम से अधिकार कर लिया।

"हम केवल बर्फ ही बर्फ देख रहे थे बर्फ के अतिरिक्त वहाँ और कुछ नहीं था। उस पठार में कहीं ऊँचा नीचा प्रदेश नहीं है सारा पठार सफेद बर्फ का एक विशाल मैदान है जो दक्षिण ध्रुव की ओर फैला हुआ है। मुझे विश्वास है कि दक्षिणी ध्रुव इसी पठार पर स्थित है।

वहाँ से चारों घर की ओर लौटे। शैकिल्टन ने उदास होकर कहा कि दक्षिणी ध्रुव तक न पहुँचने के लिए हमें चाहे कितना खेद क्यों न हो परन्तु हमें संतोष है कि हमने भरसक प्रयत्न किया। जबकि वे वापस चल रहे थे तो बर्फीला तूफान उनका पीछा कर रहा था। २८ जनवरी को वे महान बर्फ की दीवार के पास पहुँचे। उनकी भोजन सामग्री लगभग समाप्त हो चुकी थी। प्रतिदिन उनके खाने में ६ बिस्कुट और घोड़ा का थोड़ा सा मांस होता था। जिन मंचूरिया के टट्टुओं को पिछले सप्ताह में गोली मार दी थी उन्हीं का मांस अब खाया जा रहा था। परन्तु इस खाने से उनका स्वास्थ्य खराब होता जा रहा था। अस्तु जब वे लोग फरवरी १९ ९ में 'निमरॉद' जहाज पर पहुँचे तो वे चारों ही बहुत कमजोर और बीमार थे।

शैकिल्टन इंगलैंड १९ ९ के पतझड़ में पहुँचा तो उसे मालूम हुआ कि पिछली गरमियों में एक दूसरा खोज अभियान

दक्षिणी ध्रुव को स्काट के नेतृत्व में जानेवाला है। उस अ
अभियान के लिए जैसी अच्छी तैयारियाँ की गई थीं वैसी तैयारि
पहले किसी भी खोज अभियान के लिए नहीं हुई थीं। उत्तरी ध
के बर्फ से ढके पठार पर चलने के लिए मोटर स्लेज गाड़ी बना
गई थी। जो गहरे बर्फ में भी चल सकती थीं। लेकिन
मोटर गाड़ी ले जाया था वह गहरे बर्फ में नहीं चल सकती थी
स्काट के साथ १९ टट्टू और ३ कुत्ते थे।

जुलाई १९१ में चलकर स्काट २६ जनवरी १९११
मुर्दों साउंड में जाड़ा व्यतीत करने के लिए ठहर गया। नवम्बर
वहाँ जाकर वह दक्षिण ध्रुव अभियान के लिए चल सका।

स्काट ने जाड़े के निवास स्थान को २ नवम्बर को छोड़ा
साठ मील तक वह मोटर स्लेज गाड़ियों की लकीर पर चलते र
जो कि पाँच दिन पहले ही बिछा दी गई थीं। मोटर गाड़ियों
दल उनकी ८० डिग्री दक्षिणी अक्षांश रेखा पर स्काट की प्रतीक्ष
कर रहा था। मोटर स्लेज गाड़ियों ने संतोषजनक का
किया। क्योंकि बर्फ की महान दीवार की ऊबड़ खाब
बर्फीली सतह पर भारी बोझ को खींचने का काम किया। उन्हें
आगे इस कारण छोड़ना पड़ा कि ठंडी हवा से ठंडे ऐंजिन बहुत
अधिक गरम हो जाते थे। स्काट ने हर चार मील पर बर्फ के मोटे
स्तूप बना दिए जिससे कि वापस लौटने वाले दल को रास्ते को
जानने में आसानी हो। प्रत्येक अक्षांश रेखा पर एक
भोजन सामग्री छोड़ दी गई। जैसे जैसे

'स्काट' ने मरने से पूर्व जो लेख अपने देशवासियों के ना लिख कर छोड़ा वह कभी भुलाया नहीं जा सकता। 'मुझे इ भयंकर यात्रा के लिए तनिक भी खेद नहीं है जिससे यह सिद्ध क दिया कि पहले की तरह आज भी अंग्रेज और कष्ट सह सकते हैं एक दूसरे की विपत्ति में मदद कर सकते हैं और मृत्यु का प्रसन्नता पूर्वक सामना कर सकते हैं। यदि हम जिन्दा रहते तो मैं अपने साथियों की कष्ट-सहिष्णुता साहस और विपत्तियों का सामना करने की वह अपूर्व कहानी सुनाता कि जिसे पढ़ कर प्रत्येक अंग्रेज के हृदय में रोमांच हो उठता। परन्तु अब तो यह मृत्यु के समय लिखा हुआ लेख और हमारे मृत शरीर ही वह कहानी कहेंगे। परन्तु मुझे विश्वास है कि हमारा महान और समृद्धिशाली देश हमारे आश्रितों की देखभाल और उनके निर्वाह का समुचित प्रबन्ध करेगा।"

स्काट १७ जनवरी १९१२ को दक्षिणी ध्रुव पर पहुंचा था किन्तु कैप्टेन आमुण्डसेन १४ दिसम्बर १९११ को ही दक्षिण ध्रुव पर पहुंच चुका था। आमुण्डसेन नार्वे देश का निवासी था। अपने देशवासी 'नानसेन' के उदाहरण से प्रेरणा लेकर वह उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों की यात्रा में रुचि रखता था। केवल अड़तालीस टन के छोटे से जहाज और केवल अपने ६ साथियों को लेकर उसने उत्तरी चुम्बकीय ध्रुव का सर्वेक्षण किया, बेहरिंग स्ट्रेट को पार किया और उत्तर पश्चिमी मार्ग को खोज निकाला। उसके लिए उसे शाही भूगोल समिति से शाही पदक पुरस्कार [illegible] दिया था।

आदमियों के पैर बर्फीली ठंड से झुलस गए और कुत्तों की दशा बहुत खराब हो गई अतएव उसको वापस लौटना पड़ा फिर वह २ अक्टूबर को दक्षिणी ध्रुव के लिए चला। 'स्काट' के चलने से वह ठीक एक सप्ताह पूर्व अपनी उस ऐतिहासिक यात्रा पर चल पड़ा था। उसके पास खाने की सामग्री यथेष्ट थी। गाड़ी में दूध तथा सील मछलियां प्रचुर मात्रा में थीं। अग्नियान की व्यवस्था बहुत अच्छी थी। उसके साथ आठ साथी थे और चार स्लेज गाड़ियां थीं जिनमें प्रत्येक में तेरह कुत्ते जुड़े हुए थे।

आमुण्डसेन जन्म का नेता था उसकी नेतृत्व और संगठन शक्ति विलक्षण थी वह कठिनाई आने से पूर्व ही उसका अनुमान कर लेता था। उसके इस गुण के कारण उसको दक्षिणी ध्रुव की यात्रा में सफलता मिली।

जब आमुण्डसेन दक्षिणी ध्रुव की ओर बढ़ा तो अत्यन्त घना कुहरा छाया हुआ था और भयंकर बर्फीला तूफान चल रहा था। परन्तु साहसी नार्वेजियन यात्री उसमें आगे बढ़े चले जा रहे थे। बर्फ में जो कहीं कहीं दरारें थीं वे बड़ी भयंकर थीं एक कुत्ता उनमें गिर गया और उसको वहीं छोड़ना पड़ा। दूसरे दिन कुत्ते तो दरार को पार कर गए किन्तु स्लेज गाड़ी उसमें गिर पड़ी। स्लेज गाड़ी को निकालने के लिए उस गहरी दरार में कूदना पड़ा और स्लेज गाड़ी के सामान को एक एक करके ऊपर लेना पड़ा तब कहीं खाली स्लेज गाड़ी ऊपर खींची जा सकी। जाड़ा इतना भयंकर था कि बोतल में ब्रान्डी जम गई और उसके टुकड़े कर कर के सबों

की दी गई।

कुत्ते स्लेज गाड़ियों को ठीक तरह से खींचते थे। प्रत्येक यात्री अपने कुत्तों की देखभाल का जिम्मेदार था। वही उनको खिलाता और अपने से हिलाता था। इस प्रकार नवम्बर भर वे लोग दक्षिण की ओर चलते गए और उस महान विस्तृत पठार पर पहुँचे जिसका उल्लेख शैकिल्टन ने किया था। वहाँ एक पंद्रह हजार फीट ऊँची चोटी का आमुण्डसेन ने 'नानसेन पर्वत' नाम रख दिया।

१४ दिसम्बर १९११ को आमुण्डसेन अपने लक्ष्य दक्षिणी ध्रुव पहुँच गया। मौसम अच्छा था और भूमि स्लेज गाड़ियों के चलने के लिए बहुत अच्छी थी। इसमें आमुण्डसेन ने लिखा है "हम १४ दिसम्बर १९११ को ३ बजे सायंकाल दक्षिणी ध्रुव पहुँच गए। सब साथी इकट्ठे हो गए। सबों ने अपनी रेशमी राष्ट्रीय ध्वज को पकड़ लिया और एक साथ उसको गाड़ दिया। हमने उस विशाल पठार का नाम जिस पर दक्षिणी ध्रुव स्थित है 'किंग हाकोन सप्तम' के नाम पर रख दिया। यह पठार एक विशाल मैदान के समान मीलों फैला हुआ था।"

वहाँ यह छोटा सा यात्री दल तीन दिन तक शिविर लगाकर रुका और उसने समीपवर्ती स्थान का निरीक्षण किया। सूर्य की रोशनी बहुत तेज थी और मौसम अच्छा था। इस कारण वे लोग भली भाँति उस स्थान का निरीक्षण कर सके। १७ दिसम्बर को उन्होंने एक छोटा सा तम्बू जमीन में गाड़ दिया और उस पर

नार्वे का झण्डा लगाकर और 'फ्राम' जहाज का चित्र लगाकर स्वदेश की ओर लौट पड़े।

इस प्रकार दक्षिणी ध्रुव भी विजय हो गया।

उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव की खोजों में जितने पर्यटकों ने अपने प्राण गंवाए हैं उतने व्यक्ति किसी भी खोज में नहीं मरे और न भविष्य में किसी खोज में उतने लोगों के मरने की सम्भावना है।

उन साहसी खोजियों ने पृथ्वी के प्रत्येक भाग की खोज निकाला और पृथ्वी को एक विशाल मानव परिवार का निवास स्थान बनाने में सहायक हुए।



# इक्कीसवां परिच्छेद

## डेविड लिविंगस्टन की अफ्रीका की खोज

"मैं या तो इस प्रदेश के भीतरी भाग में पहुंचने का मार्ग खोज निकालूंगा या मर मिटूंगा" ( लिविंगस्टन )

उन्नीसवीं शताब्दी के अफ्रीका महाद्वीप की खोज निकालने वालों में सबसे महत्वपूर्ण खोजी डेविड लिविंगस्टन के ऊपर लिखे गये हैं।

जब लिविंगस्टन दस वर्ष का बालक था तभी से उसमें चरित्र की दृढ़ता प्रकट होने लगी थी और वह दृढ़ निश्चयी इतना था कि जिस बात का निश्चय कर लेता उसको पूरा करता। १० वर्ष की उम्र में वह स्काटलैंड के सूती कपड़े के कारखाने में काम करता था। उस समय उसने निश्चय किया कि मैं पढ़ूंगा। जब उसे पहले सप्ताह की मजदूरी मिली तो वह लैटिन व्याकरण की एक पुस्तक खरीद कर लाया। चौदह घंटे प्रतिदिन कारखाने में काम करने पर उसके पास पढ़ने को तनिक भी समय नहीं बचता था। परन्तु वह शिक्षा प्राप्त करने के लिए आतुर था। अतएव वह समय निकाल ही लेता था। निरंतर परिश्रम करते रहने से उसने शिक्षा प्राप्त करली।

१६ वर्ष की आयु होने पर उसने चिकित्सक मिशनरी बनने का संकल्प कर लिया। लिविंग्स्टन जब मिशनरी बना तो उसने चिकित्सा द्वारा मानवीय कष्टों को दूर करने का कार्य अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। लंदन मिशनरी सोसायटी ने उसकी सेवाओं को स्वीकार कर लिया और १८४० में वह दक्षिण अफ्रीका में काम करने के लिए भेज दिया गया। तीन महीने की समुद्र यात्रा के बाद वह केप-टाउन पहुंचा और एक बैलगाड़ी से सात सौ मील की यात्रा कर वह कुरुमान पहुंचा। कुरुमान में एक छोटा सा मिशन था जहां डाक्टर मोफ्फट बीस वर्षों से बेचुआना लोगों में सेवा कार्य कर रहे थे। वहां उसने बहुत अच्छा कार्य किया जिससे प्रसन्न होकर उसको उत्तर में नया मिशन स्थापित करने के लिए भेजा गया। लिविंग्स्टन ने डाक्टर मोफ्फट की पुत्री से विवाह किया था और उसके तीन बच्चे थे। १८४९ में वह अपनी पत्नी और बच्चों को लेकर एक बैलगाड़ी में उत्तर की यात्रा के लिए चल पड़ा। उत्तर का मार्ग कलाहारी की विस्तृत मरुभूमि में से होकर जाता था। लिविंग्स्टन का परिवार कलाहारी रेगिस्तान को पार करता हुआ जोगा नदी के पास पहुंचा। देसी नावों में लिविंग्स्टन का परिवार इस सुन्दर नदी के मार्ग से 'नगामी' झील में पहुंचा। लिविंग्स्टन ने लिखा है "मैं पहला योरोपियन था कि जो उस सुन्दर झील में नाव द्वारा आया। उस झील का जलवायु बहुत अस्वास्थ्यकर था। बच्चों को ज्वर आने लगा और मच्छरों ने उनका जीवन संकटमय कर दिया। जहर विषधर मक्खियों ने आगे खोज का कार्य अत्यन्त

कठिन बना दिया । अतएव लिविंगस्टन का परिवार अपने मुख्य कार्यालय को वापस आ गया । लेकिन लिविंगस्टन इससे संतुष्ट नहीं था अतएव १८५१ में वह अपनी स्त्री और बच्चों सहित फिर जेम्बसी नदी की खोज में चल दिया । अफ्रीका के रहनेवालों का यह विश्वास था कि 'जेम्बसी' नदी मध्य अफ्रीका से निकलती है किन्तु पुर्तगाल वालों ने जो नक्शे बनाए थे उनमें जेम्बसी का उद्गम स्थान पूर्व में दिखलाया गया था ।

लिविंगस्टन लगातार खोज करता रहा । जून १८५१ में वह जेम्बसी के उद्गम स्थान पर पहुँचा तो उसको ज्ञात हुआ कि जेम्बसी मध्य अफ्रीका से निकलती है । यह एक महत्वपूर्ण खोज थी क्योंकि उस नदी का उद्गम स्थान नहीं माना जाता था । जब लिविंगस्टन वहाँ पहुँचा तो उन गोरों को देखने के लिए झुंड के झुंड स्त्री-पुरुष ( मकोलोलो जाति ) रंग बिरंगे कपड़ों में उन्हें देखने आए । लिविंगस्टन उस अपरिचित नदी के बारे में और अधिक खोज करना चाहता था परन्तु उसको अनुभव हो गया कि पत्नी और बच्चों के साथ खोज करना केवल कठिन नहीं वरन खतरनाक भी है अतएव वह समुद्र तट की ओर लौटा और उन्हें इंग्लैंड जानेवाले जहाज पर सवार कराकर अकेला मध्य अफ्रीका में खोज करने के लिए लौट आया ।

११ नवम्बर १८५३ को लिविंगस्टन मध्य अफ्रीका के लिनियान्टी नगर से पश्चिम समुद्र तट की ओर जेम्बसी नदी के सम्बन्ध में खोज करने के लिए चल पड़ा क्योंकि अफ्रीका में यह

अद्भुत प्रचलित थी जेम्बसी नदी के बारे में यह कोई नहीं जानता कि यह कहां से आती है और कहां जाती है।

सत्ताईस स्वामिभक्त मकोलोलो जाति के नौकरों को लेकर थोड़े से बिस्कुट थोड़ी सी चाय थोड़ी सी शक्कर, बीस पौन्ड कहवा और तीन पुस्तकें एक कम्बल और भेड़ की खाल बिछाने के लिए एक छोटा सा तंबू और कम्बल जिसमें एक थोड़ी कमीज पतलून और जूते थे और कुछ वैज्ञानिक औजार लेकर वह अपनी यात्रा पर चल पड़ा। उसके मकोलोलो साथी नावों में जेम्बसी की धारा में चल पड़े।

लिविंगस्टन ने लिखा है 'यहां पानी नहीं बरसता है इस कारण गरमी भयंकर पड़ रही है। जब धूप निकलती है तो धूप के कारण और जब बादल होते हैं तो उमस के कारण बहुत परेशानी होती है।' सारी यात्रा में लिविंगस्टन ज्वर से पीड़ित रहा लेकिन उसके मकोलोलो साथियों ने उसकी बहुत सेवा की। जैसे ही वे लोग कहीं रुकते लिविंगस्टन के मकोलोलो नौकर उसके बिछौने के लिए घास काट कर बिछा देते और उसका तंबू गाड़ देते। तंबू में सब सन्दूक रख दिए जाते। उसके दाएं और बाएं मकोलोलो नौकर सोते और तंबू के सामने मुख्य नाव चलाने वाला नाविक सोता।

जब हम घाटी से आगे बढ़े तो वर्षा हो गई थी। समस्त वन प्रदेश सुन्दर और हरा भरा हो गया था। सब जगह तरह तरह के फूल खिले हुए थे। प्रातःकाल वन-प्रदेश चिड़ियों के मधुर संगीत से भर जाता था।

१ जनवरी १८५४ को जम्बेजि नदी को छोड़ दिया और बैलों पर चढ़ कर वे सघन वनों से आच्छादित उस प्रदेश में घुसे जिसमें से होकर उन्हें जाना था। वर्षा तेज हो रही थी। दलदल और नदियों को पार करते हुए वे लोग चले जा रहे थे। एक दिन लिविंग्स्टन के बैल ने उसको गिरा दिया और वह वहाँ औंधा पैदल चलने लगा। वह कमजोर होता जा रहा था। उसके पास खाने को कम रह गया था। वह बराबर वर्षा में भीगता था और ज्वर उसका पीछा नहीं छोड़ता था। इन कारणों से वह केवल हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया था। ३१ मार्च को वह उस ऊंची भूमि के सिरे पर पहुंचा जिस पर कि वह यात्रा कर रहा था। वह इतना कमजोर था कि मुझे वहाँ सवारी से नीचे उतरना पड़ा और पैदल चलने में मैं कहीं गिर न जाऊं इस कारण अफ्रीकन साथी मुझे पकड़े रहते थे। उसके पीछे 'चलोकों' की खूंखार पार्टी थी। चन्द दिन की यात्रा के बाद वे पुर्तगाल के प्रदेश में दाखिल हुए। वहां लिविंग्स्टन को योरोपियन लोगों से मिलने का अवसर मिला और एक छोटा सा कस्बा होने के कारण कुछ आवश्यकता की वस्तुएं भी मिल गई। वहां दस दिन तक लिविंग्स्टन ने आराम किया और ताजा होकर फिर पश्चिम की ओर समुद्र तट को चल दिया। एक महीने की यात्रा के बाद ३१ मई १८५४ को वे 'लोआण्डा' नगर के पास पहुंचे। अब काले अफ्रीकी घबड़ाने लगे क्योंकि गोरे लोग समुद्र के किनारे काले अफ्रीकी लोगों को पकड़कर दास बना लेते थे। लिविंग्स्टन ने उन्हें भरोसा दिलाया कि तुमने मेरी इतनी सेवा की,

है मैं तुम्हें धोखा नहीं दूंगा । उस नगर में एक अंग्रेज था उसने अपना बिस्तर रोगी और थके हुए यात्री को दे दिया । लिविंगस्टन ने लिखा है कि ६ महीने तक ज़मीन पर सोने के बाद एक अच्छे और नरम बिस्तर पर सोने के सुख को मैं कभी नहीं भूल सकूंगा ।

उसके अफ्रीकी साथियों को अंग्रेज़ी जहाज़ पर आराम से ठहराया गया । लिविंगस्टन को स्वदेश लौटने की सुविधा भी उस अंग्रेज ने देनी चाही किन्तु लिविंगस्टन ने उस सुखदायक प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया । उसने अपने मकोलोलो साथियों को उनके शासक के पास ले जाने का निश्चय किया कि जिससे वह वहां से ज़ैम्बसी नदी के मार्ग द्वारा पूर्वीय समुद्र तट तक रास्ता बनाये ।

इस उद्देश्य से उसने घर जाने का लालच और आराम को छोड़ दिया और २ सितम्बर १८५४ को उसने लोआन्डा को तथा 'गोरे लोगों का समुद्र' अर्थात् अटलांटिक महासागर को छोड़ दिया । उनका मार्ग 'अंगोला' देश में से होकर जाता था जिसमें जंगली कहवा बहुत पैदा होता था और कपास की खेती बहुत होती थी । मौसम पहले की तरह खराब था किन्तु लिविंगस्टन धीरे धीरे पूर्व की तरफ बढ़ रहा था । उसको ज्वर बराबर चढ़ रहा था । एक वर्ष बाद सितम्बर १८५५ में वह लिनायन्ती मध्य अफ्रीका पहुंचा जहां से वह चला था । जो कुछ सामान वह वहां छोड़ गया था वह सुरक्षित था और स्वदेश से बहुत से पत्र आए हुए थे । उसके इतनी लम्बी यात्रा से लौटने पर वहां लोगों को बहुत खुशी

हुई। उसके अफ्रीकी साथियों ने जो विभिन्न वर्गों यात्रा में देखी थीं उन्हें उन्होंने अपने जाति भाइयों में खूब फैलाया। लिविंगस्टन उनकी आँखों में एक वीर पुरुष था और उसकी दया की वे बड़ी प्रशंसा करते थे। अतएव जब लिविंगस्टन ज़म्बेसी की नीचे जाने वाली धारा के द्वारा समुद्र की यात्रा की तैयारियाँ कर रहा था तो उसे साथ में जाने के लिए यात्रियों के मिलने में तनिक भी कठिनाई नहीं हुई।

३ नवम्बर को वह अफ्रीका को पार करने के लिए तैयार हो गया। उसके पास इस बार पहले की अपेक्षा अधिक साधन थे। बैल के स्थान पर वह इस बार घोड़े पर था और उसका मार्गदर्शक सेषटुइ नदी को भली भांति जानता था। पहली रात उन्हें भयंकर वर्षा और बिजली की कौंध और कड़क का सामना करना पड़ा। कुछ दिनों की यात्रा के पश्चात वे लोग प्रसिद्ध ज़म्बेसी जल प्रपात के पास आए। लिविंगस्टन ने इंगलैंड की महारानी के नाम पर उसका नाम "विक्टोरिया जलप्रपात" रख दिया। उस प्रपात को अफ्रीकी लोग ज़म्बेसी कहते थे जहाँ धुआँ गर्जन करता है लिविंगस्टन ने इस जल प्रपात का बड़ा सजीव और सुन्दर चित्र खींचा है।" भाप के समान जलकण जिन्हें लोग ठीक ही धुआँ कहते हैं की पांच धाराएं ऊपर उठकर बादलों में मिल जाती हैं। यह दृश्य अत्यन्त सुन्दर और मनमोहक है। किसी भी यूरोपियन ने पहले उसे नहीं देखा था। जल प्रपात से जब मैं आधा मील दूर रह गया तब मैंने बड़ी नाव छोड़ दी और छोटी हल्की डोंगी में बैठ

गया। मेरे साथ वहाँ के अनुभवी नाविक थे जो कि उस स्थान के सभी खतरों से परिचित थे। वे मुझे नदी के बीच में स्थित एक टापू पर ले गए और उस स्थान के ठीक किनारे पर ले गए जहाँ पानी गिरता था। उस शिला के किनारे तक पेट के बल खिसक कर मैंने नीचे खड्ड में झांक कर देखा। जैम्बसी के एक किनारे से दूसरे किनारे तक वह गहरा चौड़ा भयंकर खड्ड था जिसमें जैम्बसी भीषण गर्जना करती हुई गिरती थी। उस खड्ड में देखने पर केवल बहुत सफेद बादल के समान जलकणों के सिवाय और कुछ नहीं दिखलाई पड़ता है। उस बादल से ऊपर की ओर भाप की धाराएं उठती हुई प्रतीत होती हैं जो आकाश में तीन सौ फीट तक ऊंची चली जाती हैं।"

लिविंग्स्टन ने अपने सौ आदमियों के साथ उस खतरनाक यात्रा को जारी रखा। यह क्षेत्र किसी समय जन-संख्या से परिपूर्ण था किन्तु उस समय वीरान था। 'बमोंडर' जाति के लोग इधर रहते थे। वे लिविंग्स्टन के आने की बात सुन कर बहुत प्रसन्न थे। वे उससे झुंड के झुंड मिलने आते और उसके आने से प्रसन्नता प्रगट करते। लिविंग्स्टन के लिए वे बहुत बड़ी मात्रा में खाने की सामग्री लाते। लिविंग्स्टन उनके बच्चों का भी बीमार होने पर इलाज करता। वे लिविंग्स्टन का बहुत आदर करते और उसे शान्तिदूत की भांति मानते थे।

जब लिविंग्स्टन समुद्र तट के समीप पहुँचा तो उसे ज्ञात हुआ कि इधर के लोग योरोपियनों से शत्रुता रखते हैं। यह बात

लिविंगस्टन को एक पुर्तगाली पर्यटक ने बतलाई। उसने लिविंगस्टन को बतलाया कि पिछले दो वर्षों से हम पुर्तगाली लोग यहाँ के आदिवासियों से लगातार युद्ध कर रहे हैं। फिर भी लिविंगस्टन निराश नहीं हुआ उसने आगे बढ़ने का निश्चय कर लिया। यद्यपि युद्ध से प्रभावित क्षेत्रों में यात्रा करना जोखिम और कठिनाई से खाली नहीं था किन्तु लिविंगस्टन को वे अपने निश्चय से नहीं हटा सकीं। यही नहीं लिविंगस्टन के साथ जो पशु थे उनको विषैली मक्खियों ने बुरी तरह जख्मी कर दिया था। इन सघन जंगलों में हाथी और गैंडा बहुत बड़ी संख्या में थे जिनका हर समय भय बना रहता था। इन विपत्तियों के अतिरिक्त अनेक बीमारी के कारण सभी लोग परेशान थे। यह सब खतरे और कठिनाइयों के होते हुए भी लिविंगस्टन ने अपनी यात्रा जारी रखी।

३ मार्च को लिविंगस्टन टेट पहुँचा जो समुद्र तट से दो सौ साठ मील था। टेट की यात्रा बहुत ही सुन्दर और आकर्षक थी। सफेद और पीले संगमरमर के ऊँचे पहाड़ बहुत सुन्दर दिखलाई पड़ते थे। नदियों का जल संगमरमर की चट्टानों पर से बहता हुआ अत्यन्त सुन्दर दिखलाई पड़ता था। नदी का सम्पूर्ण मार्ग संगमरमर की चट्टानों पर से था। भाँति भाँति के रंगबिरंगे पक्षी नदी के जल में किलोल करते थे और जल पर उड़ते थे। टेट पुर्तगाल की अन्तिम चौकी थी। यहाँ के गवर्नर ने लिविंगस्टन का यथोचित आदर सत्कार किया। परन्तु लिविंगस्टन ज्वर से पीड़ित था इस कारण वह वहाँ तीन सप्ताह रुका और जब वह स्वस्थ होकर यात्रा के योग्य

होगया तब आगे बढ़ा। उसने अपने साथ के (मकोलो) आदमियों को वहीं छोड़ दिया और उनसे कहा कि वे वहीं रुके रहें। वह किसी दिन फिर लौटेगा और उन्हें उनके घर वापस लौटा ले चलेगा। उन्हें लिविंगस्टन पर इतना गहरा विश्वास था कि वे वहां तीन वर्ष उसकी प्रतीक्षा करते रहे जबकि वह अपने वचन के अनुसार वापस लौटा और उन्हें उनके देश वापस ले गया।

'टेट' से लिविंगस्टन जैम्बसी नदी के मार्ग से आगे बढ़ा। जैम्बसी नदी का पानी ऊंचा चढ़ा हुआ था। वह नाव द्वारा 'सेना' पांच दिन में पहुंच गया। 'टेट' की दशा बहुत खराब थी किन्तु 'सेना' की दशा उससे दस गुनी खराब थी। लिविंगस्टन ने लिखा है कि पुर्तगाल के यह प्रदेश इतनी पतित और दयनीय स्थिति में पहुंच गए थे कि उसका वर्णन भी नहीं किया जा सकता। यद्यपि लिविंगस्टन ज्वर से बहुत अधिक पीड़ित था परन्तु फिर भी वह बिना थके आगे बढ़ता गया। उसने जैम्बसी की प्रमुख सहायक नदी 'मासर' को पार किया जिसको बाद में उसने खोजा और हिन्द महासागर के समुद्र तट पर पहुंच गया। वह समुद्र तट पर २ मई १ ५६ को पहुंचा। उस दिन से ठीक चार वर्ष पूर्व वह 'केपटाउन' से इस लम्बी और जोखिम भरी महान यात्रा के लिए चला था। उसने ग्यारह हजार मील की यात्रा सघन वनों जिनकी पक्षियों भयंकर जन्तुओं के प्रदेश में से होकर की थी और यह यात्रा मुख्यतः नदियों द्वारा की गई। उसका यह कार्य अद्वितीय था। ६ सप्ताह लिविंगस्टन हिन्द महासागर के समुद्र

तट पर स्थित 'क्विलिमेन' नामक स्थान पर ठहरा। यह स्थान दल-दल और रेते से भरा था और उसके चारों ओर चावल के खेत थे। ६ सप्ताह रुकने के बाद लिविंगस्टन 'फ्रौलिक' नामक जल-पोत पर सवार होकर इंगलैंड की ओर चल दिया। वह अपने साथ एक स्वामिभक्त मकोलोनी 'सकेबू' को इंगलैंड ले गया। उस स्वामिभक्त निर्धन सेवक ने लिविंगस्टन से प्रार्थना की कि वह उसके साथ चलना चाहता है। लिविंगस्टन ने उससे कहा कि यदि तुम उस ठंडे देश में जाओगे तो मर जाओगे। उस काले सेवक ने कहा कि यदि मुझे मरना है तो आपके चरणों में ही मरूंगा।

उसने कभी समुद्र नहीं देखा था। समुद्र की लहरें उस नाव से टकराती थीं जिस पर वह आ रहा था। वह बहुत भयभीत हो गया और मारिशस पहुंचते पहुंचते वह पागल हो गया और समुद्र में कूद कर मर गया।

१२ दिसम्बर १८५६ को लिविंगस्टन लंदन पहुंचा। वह एक साधारण पादरी की भांति अफ्रीका गया था उसे उस समय इंगलैंड में कोई जानता भी नहीं था। जब वह लौटा तो उससे पहले ही वह देश में प्रसिद्ध हो गया था। रायल भूगोल समिति ने उसे अपना स्वर्ण पदक प्रदान किया। फ्रांस और स्काटलैंड ने उसको मान और आदर दिया। उसके स्वागत में बड़े बड़े आयोजन हुए और अन्त में वह सीधा सादा पादरी जिसका मुख अफ्रीका की तेज धूप से झुलस चुका था उसको इंगलैंड की महारानी ने विंडसर महल में आमंत्रित किया। लिविंगस्टन द्वारा अफ्रीका में इतनी

लम्बी यात्रा के कारण उसका नाम देश भर में प्रसिद्ध हो गया। उससे उत्साहित होकर और लोगों ने भी अफ्रीका की खोज करनी प्रारम्भ की।

१० मार्च १८५८ को लिविंगस्टन फिर इंगलैंड से चला। इस बार उसको आदेश हुआ था कि वह अफ्रीका के आन्तरिक भागों की खोज करे पूर्व तथा मध्य अफ्रीका के भूगोल की जो जानकारी उसने प्राप्त की है उसका विस्तार करे और व्यापार को बढ़ाने का प्रयत्न करे। इंगलैंड की सरकार ने उसे क्विलिमेन' का ब्रिटिश कौंसल नियुक्त कर दिया। यह प्रदेश जेम्बसी नदी के मुहाने पर था। इस बार लिविंगस्टन अपने साथ एक छोटी 'स्टीमलांच' भी लाया था जिसे अफ्रीकी लोग श्रीमती लिविंगस्टन के नाम पर 'मा-राबर्ट' कहते थे। राबर्ट उनकी सबसे बड़ी संतान थी अतएव अफ्रीकन उस स्टीम लांच को राबर्ट की माँ कहकर पुकारते थे। उस स्टीमलांच में क्विलिमेन' से लिविंगस्टन शायर नदी तक गया जो जेम्बसी के मुहाने के पास उससे मिलती है।

लिविंगस्टन उस नदी में अपनी स्टीम लांच में दो सौ मील तक गया। उस सुन्दर प्रदेश में नदी की धारा के विरुद्ध दो सौ मील की यात्रा बहुत ही आकर्षक और सुन्दर थी। परन्तु दो सौ मील के बाद नदी में इतने अधिक उतार चढ़ाव थे कि कोई भी नाव उसको पार नहीं कर सकती थी। लिविंगस्टन ने नाव को वहीं छोड़ दिया और वहां से पैदल यात्रा प्रारम्भ की। लिविंगस्टन उस झील की खोज करना

चाहता था जिसके बारे में अफ्रीकन लोग बहुत सी बातें कहते थे। एक महीने तक लगातार चलते रहने पर लिविंगस्टन उस झील के पास पहुंचा। पैदल का मार्ग बहुत कठिन था। दलदल भूमों में से होकर पगडंडियां गई हुई थीं उन्हीं पर चलना पड़ता था। यह पगडंडियां पहाड़ों वनों चट्टानों और झाड़ियों में एक समान बनी थीं।

१८ एप्रिल को शिरवा झील दिखलाई दी। लिविंगस्टन ने देखा कि एक विशाल झील है जिसमें मगर मछलियां हिपोपोटेमी तथा जोंक इत्यादि भांति भांति के जन्तु भरे पड़े थे। उसके समीप का प्रदेश बहुत हरा भरा और सुन्दर था। उस झील की लहरें एक बड़ी चट्टान से आकर टकराती थीं। उससे उस प्रदेश की सुन्दरता और अधिक बढ़ जाती है। उसके समीप ही गगनचुम्बी ऊंची पर्वत श्रेणियां अपना मस्तक ऊंचा किए खड़ी थीं।

उस झील को किसी भी गोरे मनुष्य ने उससे पहले नहीं देखा था। यद्यपि अफ्रीका की झीलों में शिरवा झील छोटी थी किन्तु यह इंगलैंड की सब झीलों को मिला लिया जावे तो भी उनसे बड़ी थी। शिरवा झील की खोज करने के बाद लिविंगस्टन 'शेड' लौट आया और 'न्यासा झील' की यात्रा की तैयारियां करने लगा।

शायर नदी के किनारे उसी स्थान पर जहां कि वह पहले उतरा था उतर कर लिविंगस्टन द्वितीय मकोलोलो कुलियों और दो मार्गदर्शकों को लेकर शायर के पहाड़ी प्रदेश में चढ़ने लगा। बारह सौ फीट चढ़ कर उसने उस पहाड़ी को पार किया जिस पर

न्यासालैंड के ब्रिटिश कमिश्नर का राज भवन खड़ा है। जब कि वे 'न्यासा' झील से एक दिन की यात्रा की दूरी पर थे तब उनसे लोगों ने बतलाया कि यहां तो ऐसी कोई झील कहीं आसपास नहीं है। हां शायर नदी जरूर फैलती जाती है और उसके अन्तिम सिरे तक पहुंचने में दो महीने लगेंगे। वहां ऊंची चट्टानें हैं जो आकाश छूती हैं।

लिविंगस्टन के साथियों ने कहा कि हमें अब वापस अपने जहाज पर लौट जाना चाहिए। झील को ढूंढने का प्रयत्न करना व्यर्थ है।

लेकिन लिविंगस्टन नहीं माना। उसने कहा झील को ढूंढ निकालना आवश्यक है। वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ। १६ सितम्बर १८५९ को उसे एक जल का विशाल प्रवाह दिखाई दिया। वास्तव में वह न्यासा झील का आरम्भ था।

लिविंगस्टन ने वहां के लोगों से पूछा कि इसका दूसरा सिरा कितनी दूर है। लोगों ने आश्चर्यचकित होकर उत्तर दिया इस झील का कोई अन्त भी है हमने अपने जीवन में कभी नहीं सुना। एक वृद्ध ने कहा कि यदि कोई बालक इस झील के दूसरे सिरे के लिए पैदल चले तो जब वह वृद्ध हो जायेगा तो सम्भव है कि दूसरे सिरे तक पहुंच जावे। लिविंगस्टन समझ गया कि इस जल मार्ग के द्वारा अफ्रीका के मध्य की यात्रा हो सकती है। उसने अफ्रीका के भीतरी भाग के लिए एक महान जल-मार्ग खोज निकाला था। उस भाग में दासों का व्यापार बहुत अधिक होता

था। बहुत से दासों को हाथीदांत अन्दर के देशों से पूर्वी समुद्री तट तक लाने के लिए खरीदा जाता था। झुण्ड के झुण्ड यह खरीदे हुए दास हाथी दांत को लाने का काम करते थे। लिविंगस्टन ने सोचा कि यदि 'नयासा' झील पर एक स्टीमर चला दिया जावे तो यह दासों की खरीद का व्यापार ठप्प हो सकता है क्योंकि अफ्रीकन निवासियों से योरोप की बनी वस्तुओं के बदले में हाथी दांत खरीदा जा सकेगा। उसने इंगलैंड को इस सम्बन्ध में पत्र लिखे। वहां की स्थिति के सम्बन्ध में पढ़कर बहुत से ईसाई पादरियों में उन दासों के लिए दया का संचार हुआ और उनकी मुक्ति के लिए कार्य करने के लिए वे अफ्रीका में आकर शायर नदी के किनारे बस गए। बिशप मैकेंजी और कुछ सहायक आकर नदी के उपनिवेश में आकर बस गए। १८६२ में श्रीमती लिविंगस्टन भी आ गईं और अपने साथ नयासा झील के लिए एक नया स्टीमर साथ लाईं। लेकिन वह मौसम बहुत ही अस्वास्थ्यकर था। समीपवर्ती निचला प्रदेश था और वनस्पति से भरा हुआ था। यहां मलेरिया का विष प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होता था। श्रीमती लिविंगस्टन आते ही ज्वर से पीड़ित हो गईं और एक सप्ताह के अन्दर में ही वे मर गईं। उनको शुपंगा के समीप एक विशाल वृक्ष की छाया में दफना दिया गया। आज भी जब कोई यात्री उस ओर से निकलता है तो उस समाधि के दर्शन करना नहीं भूलता जिसमें वह महिला चिर निद्रा में सोई हुई है। श्रीमती लिविंगस्टन को इस बात का संतोष होगा कि उन्हें इस प्रदेश में दफनाया गया

जिसे कि सबसे पहले उसके पति ने सभ्य संसार के लिए खोज निकाला था।

पत्नी की मृत्यु का आघात लिविंगस्टन के लिए असहनीय था। वह एक बार तो किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। परन्तु उसने अपने मन को सम्हाला और मन की निराशा को दूर किया। उसने पुनः अपने कर्तव्य की ओर ध्यान दिया और उस स्टीमर को 'लेडी न्यासा' के नाम से न्यासा झील में चलाना आरम्भ किया। परन्तु इस कार्य में उसे निराशा और असफलता ही प्राप्त हुई। अन्त में अपनी प्रिय पत्नी की मृत्यु के ठीक दो वर्ष बाद रोवूमा नदी के रास्ते वह 'लेडी न्यासा' स्टीमर को जंजीबार ले गया और वहां से वह उसी स्टीमर में बम्बई की ओर चला। उसके पास उस समय पैसे की बहुत कमी थी। उसको आशा थी कि बम्बई में स्टीमर बिक जायेगा।

१ एप्रिल १८६४ को लिविंगस्टन उस खतरनाक यात्रा के लिए चल दिया। उसके मित्रों ने और जानकार लोगों ने उसे सचेत किया कि बहुत जल्दी ही मानसून हवाएं हिन्द महासागर में तीव्र वेग से वर्षा करेंगी और समुद्र बहुत अशान्त हो जायेगा। उस छोटे से स्टीमर में जो नदियों और झीलों के लिए बनाया गया है प्रशान्त महासागर में यात्रा करना बहुत जोखिम का काम है उसे इस खतरे में नहीं पड़ना चाहिए। जो जीवन भर खतरे से खेला हो उसे भला यह चेतावनी कहां रोक सकती थी। लिविंगस्टन ने खतरे की तनिक भी परवाह न की और वह अपने उस स्टीमर में

चल पड़ा। कुछ दिनों बाद ही मानसून चलने लगी। महासागर अशान्त हो गया, ऊँची ऊँची लहरें उठने लगीं। प्रतिक्षण खतरा बढ़ने लगा। परन्तु लिविंगस्टन कुद्ध समुद्र से संघर्ष करता हुआ ढाई हजार मील की यात्रा उस छोटे से स्टीमर में समाप्त कर बम्बई के पास पहुँच गया। दूर से जब लिविंगस्टन ने बम्बई के बन्दरगाह में मस्तूलों का एक जंगल सा देखा तो वह प्रसन्न हुआ क्योंकि वह अब सुरक्षित था। कुछ दिन बम्बई में रहकर लिविंगस्टन ने अपने छोटे स्टीमर को वहीं छोड़ दिया और एक जहाज द्वारा इंग्लैंड चला गया।

उस समय किसी ने लिविंगस्टन की इस नई खोज के महत्व को नहीं समझा और न किसी ने न्यासालैंड के महत्व को ही आंका जो बाद में ब्रिटेन का संरक्षित राज्य बना। लिविंगस्टन ने एक बड़ी झील को ढूँढ निकाला था जो समुद्र तल से १६० फीट ऊँचाई पर स्थित थी। जो ३६० मील लम्बी और ४० मील चौड़ी थी। जिस पर आज ब्रिटिश स्टीमर चलते हैं और बहुत सा व्यापार होता है। झील के पूर्वी किनारे पर जो ऊँची और लम्बी पर्वतमाला है जिसको लिविंगस्टन पर्वतमाला के नाम से पुकारा जाता है वह इस बात का प्रमाण है कि लिविंगस्टन ने एक बहुत बड़ी खोज की थी।

## लिविंगस्टन की अंतिम यात्रा

१८६६ में अफ्रीका महाद्वीप का महान यात्री फिर अपनी अंतिम यात्रा पर चल पड़ा। चलते समय उसने पहाड़ या भी

रोवूमा पर्वत पर चढ़ूँगा और न्यासा झील के उत्तरी सिरे के पास से निकल कर टैंगानिका झील के दक्षिणी सिरे का चक्कर लगाकर अफ्रीका के उस भाग के जलविभाजक का पता लगाऊंगा।

लिविंगस्टन जनवरी १८६६ में जंजीबार पहुँचा और दो महीने के बाद रोवूमा नदी के मुहाने पर पहुँचा। घने जंगल में होकर वह उसके किनारे किनारे ऊपर की ओर चला। उसके खोज अभियान में बम्बई के तेरह सिपाही एक मिशन से नौ हब्शी जंजीबार से दो आदमी 'सूसी' और 'अमोदा' तथा कुछ अन्य लोग जो पहले दास थे और जिन्हें लिविंगस्टन ने मुक्त कराया था साथ में थे। बोझ ढोने के लिए ६ ऊंट तीन भैंसे दो खच्चर चार गधे थे। रोवूमा की खाड़ी से पत्र लिखते हुए लिविंगस्टन ने लिखा कि अब जब मैं अफ्रीका की यात्रा के लिए चलने ही वाला हूँ तो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। एक अपरिचित जंगलों से भरे हुए देश को खोज निकालने के लिए जो यात्रा की जाती है उसका आनन्द वही जान सकता है जिसे वह अवसर मिला है। चलने से स्वास्थ्य ठीक रहता है और मनमें विश्वास और आशा आकुल होती है।

लेकिन लिविंगस्टन को यात्रा में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जैसे ही वे नदी के किनारे किनारे चले जहरीली मक्खियों ने पशुओं को काट कर जख्मी कर दिया। एक के बाद दूसरा जानवर मर कर गिरता गया। लिविंगस्टन के साथी पशुओं के साथ ऐसी क्रूरता का व्यवहार करते थे कि उसकी आत्मा सिहर

उठती थी। एक दिन उनमें से कुछ लोग पीछे रह गए और अन्तिम भैंसे को मार कर खा गए। उन्होंने लिविंगस्टन से आकर कहा कि वह मर गया और एक शेर आकर उसको खा गया।

लिविंगस्टन ने पूछा कि क्या तुमने शेर के शरीर पर धारियाँ और पट्टियाँ देखी थीं। सभी ने एक स्वर से कहा हाँ हमने शेर के शरीर पर धारियाँ देखी थीं। यह एक ऐसा झूठ था कि जो छिप नहीं सकता था क्योंकि अफ्रीका में धारीदार शेर होता ही नहीं है।

११ अगस्त को एक बार फिर लिविंगस्टन न्यासा झील पहुंचा। न्यासा झील पहुंच कर लिविंगस्टन अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने लिखा है "न्यासा झील पहुंचकर मुझे ऐसी प्रसन्नता हुई जैसी किसी को अपने पुराने घर में पहुंचकर होती है जिसको उसे देख सकने की कभी आशा नहीं थी। मैं उस ताजे स्वच्छ जल में स्नान कर बहुत आनन्दित हुआ।

झील के दूसरे तट पर स्थित कोटा-कोटा के अरब शासक के पास लिविंगस्टन ने खबर भेजी कि वह नाव भेज दे जिससे कि वह झील को पार कर सके। उसका कोई उत्तर न आने पर वह स्थल के रास्ते चल दिया। उसने जाकर नदी को पार कर झील के दक्षिणी सिरे का चक्कर लगाया। जब वह न्यासा झील की दक्षिणी पश्चिमी खाड़ी के चारों ओर यात्रा कर रहा था कुछ लोगों के आक्रमण की खबरें आने लगीं। कुछ लोगों के आक्रमण से लिविंगस्टन के आदमी भयभीत हो गए। उन्होंने आगे जाने से एक दम इन्कार कर दिया। सब सामान फेंक कर वे भाग कर और

अपने शिकार की खोज में दिखलाई देते हैं। रात में गैंडे की घर्र घर्र की आवाज बड़ी भयानक प्रतीत होती है।

वहां से लिविंगस्टन पश्चिम की ओर बढ़ा। यहां उसे एक अरब दल मिला जिसके साथ वह तीन महीने तक रहा। यहां से वह म्वोरो झील की ओर चल पड़ा। सोलह दिन की लम्बी और कठिन यात्रा के उपरांत वह म्वोरो झील पहुँचा। म्वोरो झील एक बड़ी झील है और उसके पूर्व और पश्चिम में पर्वत श्रेणियां हैं। उसके किनारे दलदली और रेतीले हैं। लिविंगस्टन वहां एक मछुआरे के झोपड़े में ठहरा।

उस झील के समीपवर्ती प्रदेश में ६ सप्ताह ठहर कर वहां की जानकारी प्राप्त कर लिविंगस्टन पुनः अरब दल के पास लौट आया। १८६८ के वसंत में उसने 'बांगवेलो' झील को खोज निकालने का निश्चय किया। उसकी इस यात्रा का उसके साथियों ने घोर विरोध किया और कई नौकर उसको छोड़ गए। परन्तु लिविंगस्टन ने इसकी तनिक भी परवाह न की। केवल पांच नौकरों के साथ वह मध्य अफ्रीका की सबसे बड़ी झीलों में गिनी जाने वाली उस झील पर पहुँचा। लिविंगस्टन १८ जुलाई को झील के किनारे पहुँचा था। उसका पानी गहरा हरे रंग का था और वहां ठंड बहुत अधिक थी क्योंकि वायु में नमी थी।

इस नमी के कारण समीपवर्ती प्रदेश एक विशाल स्पंज के समान बन गया था। ऐसे दलदल या जल से परिप्लावित भूमि प्रदेश वहां बहुत थे। इस झील की यात्रा में लिविंगस्टन को

चलनीय ऐसे दलदल मिले। प्रत्येक को पार करने में आधा घण्टे का समय लग जाता था।

लिविंगस्टन का ध्यान नील नदी के उद्गम स्थान को खोज निकालने की ओर लगा हुआ था। उसका कहना था कि नील नदी के उद्गम स्थान को खोज निकालना उतना ही महत्वपूर्ण था जितना उत्तर पश्चिम का मार्ग ढूंढ निकालना था। उसका अनुमान था कि इन दो बड़ी नदियों के बीच से बहनेवाली महानदी अपर नाइल हो सकती है।

दिसम्बर में वह टेंगानाइका झील के लिए चल पड़ा। १८६८ का नया वर्ष उसके स्वास्थ्य के लिए अच्छा प्रमाणित नहीं हुआ। आधे रास्ते वह बहुत अधिक बीमार हो गया। वह लगातार भीग रहा था। उसे प्रतिदिन आधे नदियां कमर तक अत्यन्त ठंडे पानी में चल कर पार करनी पड़ती थीं। जब वह बहुत अधिक बीमार हो गया तो उसने अपनी डायरी में लिखा "मैं अब बहुत अधिक बीमार हो गया हूं अब मैं चल नहीं सकता मुझे दाहिने फेफड़े का निमोनिया हो गया है और मैं दिन रात खांसता रहता हूं। मुझे मेरे सेवक एक खाट पर लेकर चलते हैं। सूर्य की किरणें इतनी तेज हैं कि शरीर का जो हिस्सा खुला रह जाता है वह झुलस जाता है। मैं पत्तियों के गुच्छे से अपने सर और मुंह पर साया किए रहता हूं।

१४ फरवरी १८६९ को वह झील के पश्चिमी किनारे पर पहुंचा और कुछ समय वहां ठहरने के बाद उसको उजीजी के लिए

नाव पर सवार करा दिया गया। यद्यपि वह पहले से अच्छा था परन्तु फिर भी वह बहुत निर्बल था। उसने अपने सम्बन्ध में डायरी में लिखा 'आशा है कि 'उजीजी' पहुंचने तक जीवित रहूंगा।

अन्त में वह झील के किनारे पर अरब बस्ती पहुंचा। वहां उसको वह वस्तुएं मिलीं जो कुकसी के रास्ते जंजीबार से आई थीं। यद्यपि उनमें से बहुत सी वस्तुएं चोरी चली गई थीं परन्तु फिर भी गरम कपड़े चाय और कहवा मिल जाने से उसको बहुत आराम मिला और उसका स्वास्थ्य सुधरने लगा। वहां तीन महीने ठहरने से उसका स्वास्थ्य सुधरने लगा। वहां से वह मनयूमा प्रदेश की ओर फिर यात्रा के लिए चल पड़ा जिसके बारे में उसने सुना था कि वहां बहुत बड़ी नदियां बहती हैं।

इस यात्रा में अरब उसका मार्ग प्रदर्शन कर रहे थे। उनका व्यापार मार्ग महानदी लौलाबा तक जाता था जो अफ्रीका के मध्य में जंजीबार के पश्चिम कुछ हजार मील दूरी पर थी। सितम्बर १८६६ में जब लिविंगस्टन अपने अरब साथियों के साथ बम्बारा पहुंचा तो वह पहला यौरोपियन था जिसने इस प्रदेश को देखा था।

वहां उसने अच्छी तरह आराम किया। कुछ स्वस्थ हो जाने पर उसने लौलाबा के पश्चिम में जाकर उसकी खोज करने के लिए एक बड़ी नाव खरीदने का निश्चय किया। मनयूमा प्रदेश सुन्दरता का मानो प्रतीक है। यहां पर्वतों पर आम के ऊंचे-ऊंचे पेड़ हैं और

वहां के जंगलों का सौन्दर्य अवर्णनीय है। उन पेड़ और ऊंचे वृक्षों पर बड़ी सुन्दर बेलें चढ़ी रहती हैं। बहुत प्रकार के जंगली फल वहां मिलते हैं। कुछ फल तो इतने बड़े होते हैं जैसे कि बच्चे का सर। उन जंगलों में अनेक प्रकार के सुन्दर पशु और पक्षी भी मिलते हैं।

अरब व्यापारी के साथ लिविंगस्टन मनयूमा के विचित्र और अत्यन्त सुन्दर प्रदेश में घूमता फिरा। एक वर्ष की यात्रा के पश्चात् वह लौलाबा ( कांगो ) नदी के किनारे पहुंचा। ३१ मार्च १८७१ को वह कांगो ( लौलाबा ) नदी के किनारे पहुंचा था।

वह उसके जीवन में स्मरणीय दिन था क्योंकि वह लौलाबा ( कांगो ) नदी के पास पहुंच गया था। लिविंगस्टन ने उस नदी के बारे में लिखा है "यह एक बहुत बड़ी नदी है। यह कम से कम तीन हजार गज चौड़ी और बहुत अधिक गहरी है। इसके किनारे गहरे और ढलुवां हैं और इसकी धारा बहुत तेज है।" लिविंगस्टन संसार की दूसरी सबसे बड़ी नदी की खोजबीन करके देख रहा था। यह कांगो नदी थी परन्तु वह उसको नील नदी समझता था।

वह वहां एक गांव ( न्यांग्वे ) में चार महीने तक ठहरा। वहां के निवासी भयंकर नरभक्षक थे। एक दिन उसने एक आदमी को दस बकरों की हड्डियों को रस्सी से बांध कर अपने कंधे पर लटकाए देखा जिनके स्वामियों को उसने मार कर खा लिया था। दूसरे दिन वहां एक भयंकर हत्याकांड हो गया। एक मुर्गी पर झगड़ा हो गया और उस समय में लगभग चार सौ व्यक्ति मारे

गए। परन्तु ये अफ्रीकन काले हब्शियों को पकड़ कर उनको दास बना लेते थे। इससे लिविंग्स्टन को उनसे भी घृणा थी। अतएव उसने उनके साथ रहना उचित नहीं समझा। १० जुलाई १८७१ को वह वापस 'उजीजी' की ओर चल दिया और तीन महीने में सात सौ मील की यात्रा करके वह उजीजी पहुँच गया। परन्तु इस यात्रा में उसका स्वास्थ्य फिर बहुत गिर गया और जब वह उजीजी पहुँचा तो केवल हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया था। वहां पहुँच कर उसे ज्ञात हुआ कि वह वृद्ध जिसकी देखभाल में वह अपना सारा सामान छोड़ गया था उसे लेकर चम्पत हो गया है।

लिविंग्स्टन का स्वास्थ्य तो बहुत गिर ही गया था इस दुर्घटना से उसको और निराशा हुई। जब वह अत्यन्त दुखी और निराश था तब उसे अनायास ही सहायता प्राप्त हो गई।

टंगानाइका झील के किनारे लिविंग्स्टन और स्टेनले की भेंट खोज के इतिहास में एक अत्यन्त हृदयस्पर्शी घटना है। उस घटना का वर्णन लिविंग्स्टन के शब्दों में ही पढ़िये 'जब मैं अत्यन्त निराश और दुखी था तब एक प्रातःकाल 'सूसी' मेरा स्वामिभक्त सेवक बहुत तेजी से दौड़ता हुआ आया और हांफता हुआ बोला "एक अंग्रेज है" मैंने उसे देखा है और यह कह कर वह भाग कर उससे मिलने चला गया। कारवाँ के आगे अमेरिकन झंडे को देखकर यात्रियों की राष्ट्रीयता का पता चलता था। लिविंग्स्टन ने देखा कि उस कारवाँ के साथ ढेर का ढेर सामान था टिन के टब थे बड़े बड़े खाना पकाने के बर्तन थे और बहुत सा विलासिता का

सामान था। उसने कल्पना की कि वह कोई समृद्धिशाली विलासितापूर्ण यात्री होगा। उसकी तरह दीन हीन यात्री नहीं है।

वह 'न्यूयार्क हेरल्ड' समाचारपत्र का भ्रमणशील संवाददाता "हेनरी मोर्टन-स्टेनले" था उसको समाचार पत्र ने लिविंगस्टन के सही सही समाचार लाने के लिए, और यदि लिविंगस्टन मर गया हो तो उसकी अस्थियां लाने के लिए भेजा था। समाचार पत्र ने उसके लिए चार हजार पौंड व्यय किए थे।

अब स्टेनले का हाल पढ़िए। जब वह उजीजी में पहुंचा तो लिविंगस्टन के स्वामिभक्त सेवक से उसे ज्ञात हुआ कि लिविंगस्टन अभी जीवित है। विदेशियों को देखकर वहां एक भारी भीड़ एकत्रित हो गई थी। उसको चीरते हुए स्टेनले वहां आया जहां एक गोरा आदमी जिसके लम्बी भूरी दाढ़ी थी खड़ा था।

स्टेनले ने लिखा है "जैसे ही मैं आगे बढ़ा मैंने देखा कि लिविंगस्टन पीला, थका हुआ और चिन्तित था। मैं आगे बढ़ा और मैंने अपना टोप उतार कर अभ्यर्थना करते हुए कहा कि मैं कल्पना करता हूं कि आप डाक्टर लिविंगस्टन हैं। डाक्टर लिविंगस्टन ने अपनी टोपी को थोड़ा उठाकर मुस्कराकर कहा—हां। तब हम दोनों ने एक दूसरे के हाथों को पकड़ लिया और मैंने जोर से कहा, ईश्वर को अनेक धन्यवाद है कि मैं आपको देख सका। लिविंगस्टन ने धीमी आवाज में कहा कि तुम मेरे लिए नया जीवन लाए हो।

कुछ दिनों तक स्टेनले लिविंगस्टन के मकान के लम्बे बरामदे में बैठकर उससे उसकी खोजों का आश्चर्यजनक

पलंग सुलता रहा। कुछ दिनों के बाद लिविंगस्टन अच्छा होने लगा। स्वस्थ हो जाने पर उसने स्टेनले को साथ लेकर टैंगानाइका झील के उत्तर में बहनेवाली नदी का सर्वेक्षण किया और यह मालूम कर लिया कि वह नील नदी नहीं है।

स्टेनले ने लिविंगस्टन को बहुत समझाया और उस पर दबाव डाला कि वह घर लौट जाये और पूर्ण स्वास्थ्य लाभ कर फिर नील नदी के उद्गम स्थान को खोजने के लिए अफ्रीका आये। यद्यपि लिविंगस्टन बहुत कमजोर और थका हुआ था। उसने इंग्लैंड जाने से इनकार कर दिया। उसने कहा कि अपने देश में आराम से रहने के लिए मैं तभी जाऊंगा जब मैं नील नदी के उद्गम स्थान को ढूंढ निकालूं गा।

२२ अगस्त १८७२ को वह अपनी अन्तिम यात्रा पर चल पड़ा। स्टेनले ने समुद्र तट से उसकी यात्रा के लिए उचित सामान व्यवस्था कर दी थी। उसके साथ साठ आदमी थे और यथेष्ट गद्हे लगाए थीं। लिविंगस्टन बड़े उत्साह से यात्रा पर चला किन्तु थोड़े दिनों की यात्रा के बाद ही उसको अनुभव हो गया कि वह इतना निर्बल हो गया है कि यात्रा की कठिनाइयों को सहन नहीं कर सकता। दिन प्रतिदिन वह कमजोर होता गया। फिर भी वह किसी प्रकार अपने गद्हे पर चढ़ बैठा था। लेकिन नवम्बर में उसकी सवारी का गदहा मर गया और उसको पैदल यात्रा करनी पड़ी। जब वह बंगवेलो झील के उत्तर में स्थित दलदल प्रदेश में उतर रहा था तो यात्रा की भयंकरता और कठिनाई हद से अस्तर

पहुँच गई। वर्षा का मौसम चरम सीमा पर था। समस्त भूमि दलदल बन गई थी और लिविंगस्टन के दल के सामने भूखों मरने की नौबत आ गई थी। भोजन सामग्री समाप्त हो चुकी थी। ऊपर से रोग के मच्छरों विषैली मक्खियों तथा काटने वाली चींटियों ने सारे दल को परेशान कर रखा था। इन सब कठिनाइयों का सामना करते हुए भी लिविंगस्टन आगे बढ़ता ही गया। बड़ा दिन आया और चला गया। १८७३ का नया वर्ष आया परन्तु लिविंगस्टन नहीं रुका। एप्रिल में लिविंगस्टन बीमार था और उसके स्वामिभक्त नौकर उसको उठा कर चलते थे। २७ एप्रिल १८७३ को उसने अपनी डायरी में अन्तिम वाक्य लिखा। "मैं लगभग समाप्त हो चुका हूँ लेकिन हम 'मोलीलामो' नदी के किनारे पहुँच गए हैं।'

उसके स्वामिभक्त नौकरों ने उसको एक झोंपड़ में लिटा दिया। एक रात्रि को लिविंगस्टन उसी झोंपड़े में अकेले मर गया। प्रातःकाल उसके स्वामिभक्त सेवकों ने उसे मरा पाया। दुखियों ने अपने प्रिय स्वामी के हृदय को बंगवेलो झील के निकट उसी स्थान पर जहाँ वह मरा था इलाला गाँव के पास वन में एक बड़े वृक्ष के नीचे गाड़ दिया। फिर वे अपने स्वामी के शव को वृक्ष की छाल तथा पाल के पुराने कपड़ों में लपेट कर समुद्र तट की ओर ले चले। उन थोड़े से स्वामिभक्त सेवकों में सूसी और चूमा भी थे। सैकड़ों मील वे अपने परम प्रिय तथा महात्मा स्वामी के पावन शरीर को लेकर समुद्र के किनारे पहुँचे और उसके पवित्र शरीर को उन्होंने अंग्रेजों को सुरक्षित सौंप दिया। वहाँ से लिविंगस्टन का

शव इंग्लैंड भेजा गया और बड़े सम्मान के साथ इंग्लैंड के राष्ट्र पुरुषों के साथ उसको 'वेस्ट मिनिस्टर ऐबे' में दफनाया गया।

किसी कवि ने उसके सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है। 'उसके नाम की रक्षा करने के लिए किसी स्मारक की आवश्यकता नहीं है। वह सच्चाई के लिए जिया और मरा यही उसका अमर यश है। संगमरमर की प्रशस्तियां जिन पर उसका नाम खुदा है चटक कर टूट जायेंगी परन्तु उसका यश सदैव अमर रहेगा।'

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि जब तक संसार में खोज का इतिहास विद्यमान है और लोगों में खोज की प्रवृत्ति बनी है। लिविंगस्टन का नाम अमर रहेगा।



# वाईसवा परिच्छेद

## तिब्बत की खोज

आधुनिक काल में तिब्बत ने जितना पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित किया है सम्भवतः किसी देश ने नहीं किया। हेरोडोटस से लेकर पेथ्रुस्वेड तक समय समय पर भिन्न भिन्न देशों के खोजियों ने इस रहस्यमय देश को खोज निकालने का प्रयत्न किया। तिब्बत की खोज में सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि तिब्बत के शासक योरोपियन लोगों को तिब्बत में घुसने नहीं देते थे। तिब्बत ऊंची पर्वतमालाओं से घिरा हुआ था। इस पर्वतीय और ऊबड़ खाबड़ रहस्यमय देश के मध्य में उसकी राजधानी ल्हासा थी जिसे यहां के निवासी देवताओं का स्थान मानते थे और यहां बुद्ध का अवतार दलाईलामा निवास करता था। ल्हासा रहस्यमय दुनियां से दूर और पवित्र था। तिब्बत के निवासी एकान्तताप्रिय हैं। यद्यपि चीन ने तिब्बत पर अपना प्रभुत्व जमाने की भरसक चेष्टा की परन्तु तिब्बतियों ने चीन के प्रभुत्व को कभी भी स्वीकार नहीं किया। यही कारण था कि सभी देशों के खोजी तिब्बत के लिए लालायित रहते थे।

अठारहवीं शताब्दी में भारत में प्रथम अपना प्रभुत्व

स्थापित करने में सफल हो गए थे। वारेन हेस्टिंग्ज की इच्छा थी कि महान हिमालय के पार तिब्बत से मित्रता कर सम्बन्ध स्थापित किया जावे। इस उद्देश्य से उसने एक तरुण अंग्रेज जार्ज बोगले को तिब्बत भेजा। बोगले को हेस्टिंग्ज ने नीचे लिखा आदेश दिया था "मैं चाहता हूँ कि तुम 'ल्हासा' जाओ और तिब्बत और बंगाल के बीच व्यापार स्थापित करने का प्रयत्न करो। तुम इस देश की उन वस्तुओं के नमूने साथ ले जाओ जो कि वहां बिक सकें और यह पता लगाओ कि तिब्बत में कौनसी वस्तुएं बनाई जाती हैं वहां के उद्योग धंधे क्या हैं तुम यह भी पता लगाना कि बंगाल से ल्हासा तक सड़कें कैसी हैं। तुम तिब्बत में अधिक समय तक रहना जिससे कि तुम उस देश का अच्छी तरह से अध्ययन कर सको।

बोगले तरुण था तिब्बत के सम्बन्ध में उसको तनिक भी जानकारी नहीं थी। वारेन हेस्टिंग्ज की आज्ञानुसार वह मई १७७४ में तिब्बत यात्रा के लिए चल पड़ा। बोगले भूटान के रास्ते तिब्बत गया। वहां से उसने पूर्वी हिमालय को पार कर तिब्बत की सीमा में प्रवेश किया। अक्टोबर के अन्त में वह तिब्बत के पहले कस्बे 'फारी' पहुंचा। वहां से वह 'ग्यान्त्सी' की बड़ी मंडी पहुंचा और ब्रह्मपुत्र को पार किया। आगे बढ़कर वह 'ताशीलामा' के निवास स्थान तक पहुंच गया। ताशीलामा और उस तरुण अंग्रेज में गहरी मित्रता हो गई। ताशीलामा दलाई लामा के बाद तिब्बत में सबसे अधिक प्रभावशाली और महत्वपूर्ण धर्म गुरु था। बोगले ने ताशीलामा का वर्णन इस प्रकार किया है सोने के नक्काशीदार

सिंहासन में रेशमी तकियों के बीच ताशीलामा आसन लगाए बैठा था। वह पीले रेशमी वस्त्र धारण किए था। उसके एक ओर उसका वैद्य चंदन की जलती हुई लकड़ियां पकड़े था और दूसरी ओर एक व्यक्ति उसका पात्र थामे था। चंदन की लकड़ियों से अत्यन्त धीमी सुगन्ध निकल रही थी।"

ईश्वर के उस राजदूत ने बोगले से कहा "मैंने फिरंगियों की महान शक्ति के बारे में सुना था परन्तु मेरा कार्य तो भगवान की प्रार्थना करना है अतएव मैं अपने देश में फिरंगियों को घुसने नहीं देना चाहता था। लेकिन मैंने सुना है कि फिरंगी सच्चे और न्यायप्रिय लोग हैं।"

बोगले ल्हासा जाना चाहता था किन्तु उसको आगे बढ़ने की आज्ञा नहीं दी गई और उसे निराश होकर लौटना पड़ा।

टामस मैनिंग दूसरा अंग्रेज था जो तिब्बत में घुसा परन्तु ल्हासा पहुंचनेवालों में वह सर्वप्रथम था। वह व्यक्तिगत रूप से तिब्बत की खोज करना चाहता था। वह चीन में रह चुका था और उसने तिब्बती भाषा सीख ली थी। एक चीनी नौकर को लेकर और एक लम्बी दाढ़ी लगाकर वह कलकत्ता से चला और भुटान होकर तिब्बत की सीमा पर अक्टोबर १८११ में पहुंचा। वहां उसने नाव से ब्रह्मपुत्र नदी को पार किया। ९ दिसम्बर को वह पवित्र नगर 'ल्हासा' में घुसा। दलाईलामा के भव्य और ऊंचे 'पोटाला' राजप्रासाद को देखकर वह आश्चर्यचकित रह गया।

'ल्हासा' के बड़े प्रवेश द्वार में वह घुसा। पोटाला राजप्रासाद

स्थापित करने में सफल हो गए थे। वारन हेस्टिंग्ज की इच्छा थी कि महान हिमालय के पार तिब्बत से मित्रता का सम्बन्ध स्थापित किया जावे। इस उद्देश्य से उसने एक तरुण स्कॉच जार्ज बोगले को तिब्बत भेजा। बोगले को हेस्टिंग्ज ने नीचे लिखा आदेश दिया था "मैं चाहता हूँ कि तुम 'ल्हासा' जाओ और तिब्बत और बंगाल के बीच व्यापार स्थापित करने का प्रयत्न करो। तुम इस देश की उन वस्तुओं के नमूने साथ ले जाओ जो कि वहां बिक सकें और यह पता लगाओ कि तिब्बत में कौनसी वस्तुएं बनाई जाती हैं वहां के उद्योग धंधे क्या हैं तुम यह भी पता लगाना कि बंगाल से ल्हासा तक सड़कें कैसी हैं। तुम तिब्बत में अधिक समय तक रहना जिससे कि तुम उस देश का अच्छी तरह से अध्ययन कर सको।

बोगले तरुण था तिब्बत के सम्बन्ध में उसको तनिक भी जानकारी नहीं थी। वारेन हेस्टिंग्ज की आज्ञानुसार वह मई १७७४ में तिब्बत यात्रा के लिए चल पड़ा। बोगले भूटान के रास्ते तिब्बत गया। वहां से उसने पूर्वी हिमालय को पार कर तिब्बत की सीमा में प्रवेश किया। अक्टोबर के अन्त में वह तिब्बत के पहले कस्बे 'फारी' पहुंचा। वहां से वह 'ग्यान्त्सी' की बड़ी मंडी पहुंचा और ब्रह्मपुत्र को पार किया। आगे बढ़कर वह 'ताशीलामा' के निवास स्थान तक पहुंच गया। ताशीलामा और उस तरुण स्कॉच में गहरी मित्रता हो गई। ताशीलामा दलाई लामा के बाद तिब्बत में सबसे अधिक प्रभावशाली और श्रद्धास्पद धर्म गुरु था। बोगले ने ताशीलामा का वर्णन इस प्रकार किया है सोने के नक्काशीदार

सिंहासन में रेशमी तकियों के बीच ताशीलामा आसन लगाए बैठा था। वह पीले रेशमी वस्त्र धारण किए था। उसके एक ओर उसका वैद्य चंदन की जलती हुई लकड़ियाँ पकड़े था और दूसरी ओर एक व्यक्ति उसका थाल थामे था। चंदन की लकड़ियों से अत्यन्त भीनी सुगन्ध निकल रही थी।"

ईश्वर के उस उपदूत ने बोगले से कहा 'मैंने फिरंगियों की महान शक्ति के बारे में सुना था परन्तु मेरा कार्य तो भगवान की प्रार्थना करना है अतएव मैं अपने देश में फिरंगियों को घुसने नहीं देना चाहता था। लेकिन मैंने सुना है कि फिरंगी सच्चे और न्यायप्रिय लोग हैं।

बोगले ल्हासा जाना चाहता था किन्तु उसको आगे बढ़ने की आज्ञा नहीं दी गई और उसे विवश होकर लौटना पड़ा।

टामस मैनिंग दूसरा अंग्रेज था जो तिब्बत में घुसा परन्तु ल्हासा पहुंचनेवालों में वह सर्वप्रथम था। वह व्यक्तिगत रूप से तिब्बत की खोज करना चाहता था। वह चीन में रह चुका था और उसने चिनी भाषा सीख ली थी। एक चीनी नौकर को लेकर और एक लम्बी दाढ़ी लगाकर वह कलकत्ते से चला और भूटान होकर तिब्बत की सीमा पर अक्तूबर १८११ में पहुंचा। वहां उसने नाव से ब्रह्मपुत्र नदी को पार किया। ९ दिसम्बर को वह पवित्र नगर 'ल्हासा' में घुसा। दलाईलामा के भव्य और ऊंचे 'पोटाला' राजप्रासाद को देखकर वह आश्चर्यचकित रह गया।

'ल्हासा' के बड़े प्रवेश द्वार में वह घुसा। पोटाला राजप्रासाद

को जाने वाली सड़क चौड़ी थी। ल्हासा में जहां देखो वहां भिखारी और बौद्ध भिक्षु दिखलाई पड़ते थे जो सूर्य की धूप खा रहे थे। वहां के निवासी गंदे थे और गलियों में कुत्ते घूमते थे। नगर को देखने के बाद मैनिंग पवित्र दलाईलामा की अभ्यर्थना करने पोटाला राजप्रासाद में गया। वह अपने साथ दो थमथान और दो मोमबत्तियां तथा तीबेंडर का सुगंधित तेल तथा बढ़िया नानकिंग की चाय ले गया। जब वह दलाई लामा ( जो सात वर्ष का बालक था ) के सामने ले जाया गया तो उसने तिब्बत की प्रथा के अनुसार तीन बार पृथ्वी पर अपना सिर झुकाकर उसकी अभ्यर्थना की और अपना टोप उतार कर पवित्र दलाई लामा का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए झुक गया। बालक दलाई लामा के चेहरे पर पवित्र मुस्कान थी और उसका असीम सुन्दर मुख पवित्र आभा से दीप्त था। मैनिंग ल्हासा में चार महीने रहा। उसके बाद उसे पेकिंग बुला लिया गया और उसे अनिच्छापूर्वक वहां से जाना पड़ा। वह उसी मार्ग से जिससे तिब्बत आया था चीन लौट गया।

१८४६ में एक ईसाई मिशनरी आबे-हुक चीन से ल्हासा पहुंचा। वह एक तिब्बती लामा के वेश में था। वह स्वयं घोड़े पर था उसका साथी मिशनरी 'गेबट' ऊंट पर और तातार सेवक काले कच्चर पर सवार था। उन्हें मार्ग में बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जब वे पीली नदी के पास पहुंचे तो पीली नदी में बाढ़ आई हुई थी। तातारों ने कहा कि नदी को पार कर सकना असम्भव है। विशाल पीली नदी ने एक समुद्र का रूप धारण

को जाने वाली सड़क चौड़ी थी। ल्हासा में जहाँ देखो वहाँ भिखारी और बौद्ध भिक्षु दिखलाई पड़ते थे जो सूर्य की धूप खा रहे थे। वहाँ के निवासी गंदे थे और गलियों में कुत्ते घूमते थे। नगर को देखने के बाद मैनिंग पवित्र दलाईलामा की अभ्यर्थना करने पोटाला राजप्रासाद में गया। वह अपने साथ दो शमादान और दो मोमबत्तियाँ तथा लैवेंडर का सुगंधित जल तथा बढ़िया नानकिन की थान ले गया। जब वह दलाई लामा (जो सात वर्ष का बालक था) के सामने ले जाया गया तो उसने तिब्बत की प्रथा के अनुसार तीन बार पृथ्वी पर अपना सिर झुकाकर उसकी अभ्यर्थना की और अपना टोप उतार कर पवित्र दलाई लामा का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए झुक गया। बालक दलाई लामा के चेहरे पर पवित्र मुस्कान थी और उसका असीम सुन्दर मुख पवित्र आभा से दीप्त था। मैनिंग ल्हासा में चार महीने रहा। उसके बाद उसे मैनिंग बुला लिया गया और उसे अनिच्छापूर्वक वहाँ से जाना पड़ा। वह उसी मार्ग से जिससे तिब्बत आया था चीन लौट गया।

१८४६ में एक ईसाई मिशनरी आबे-हुक चीन से ल्हासा पहुँचा। वह एक तिब्बती लामा के वेश में था। वह स्वयं घोड़े पर था उसका साथी मिशनरी 'गैबट' ऊँट पर, और तातार सेवक काले खच्चर पर सवार था। उन्हें मार्ग में बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जब वे पीली नदी के पास पहुँचे तो पीली नदी में बाढ़ आई हुई थी। तातारों ने कहा कि नदी को पार कर सकना असम्भव है। विशाल पीली नदी ने एक समुद्र का रूप धारण

कर लिया था। याक ऐसे प्रतीत होते थे मानो वे पानी पर तैर रहे हों और नदी का किनारा दिखलाई नहीं देता था। 'हुक' ने कहा कि वापस लौटने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि मैंने शपथ ली है कि मैं प्रभु कृपा से ल्हासा अवश्य ही जाऊंगा फिर चाहे कितनी ही कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़े।

साहस के साथ उन्होंने ऊंटों पर सवार होकर पानी में चलना प्रारम्भ किया। उनके साहस से प्रभावित होकर कुछ गांववालों ने उन्हें अपनी नावों में दूसरे किनारे तक सुरक्षित पहुंचा दिया। अब वे लोग तिब्बत की सीमा तक जानेवाले कारवां मार्ग पर पहुंच गए थे। मीलों तक मार्ग पर ऊंटों के कारवां दिखलाई पड़ते थे। पीली नदी और कोकोनोर झील के बीच तीन बार उन्होंने महान चीनी दीवार को पार किया जो २१४ ईसवी में बनाई गई थी। चार महीने की कठिन यात्रा के उपरांत 'हुक' तिब्बत की सीमा पर स्थित कुनबुम लामासरी में पहुंचा। उस लामासरी में चार हजार बौद्ध लामा निवास करते थे और यहां तातार और तिब्बत से प्रतिवर्ष बौद्ध यात्री यात्रा के लिए आते थे।

यहां के नैसर्गिक सौन्दर्य को देखकर वह बहुत आनन्दित हुआ। ऊंचे पहाड़ों से घिरे हुए वनाच्छादित सुन्दर प्रदेश में पहाड़ों के ढालों पर लामाओं के सफेद निवास स्थान बने थे और उनके बीच में सोने के कलश चढ़े हुए बौद्ध मन्दिर खड़े थे। वहां वे यात्री तीन महीने ठहरे और फिर 'कोको-नोर' झील की ओर चल पड़े।

जैसे जैसे वे आगे बढ़ते गए भूमि अधिक उपजाऊ मिलती गई। अब वे झील की समीपवर्ती विशाल गोचर भूमि में पहुंच गए। वहां घास इतनी ऊंची थी कि ऊंटों के पेट को छूती थी। आगे विशाल झील प्रवाहित हो रही थी। यात्रियों ने उस झील के समीप ही अपने डेरे लगा दिए। 'हुक' वहां एक महीने तक ठहरा। एक महीने के बाद उन्हें ल्हासा जाने का एक अवसर मिल गया। बात यह थी कि ल्हासा से जो राजदूत पीकिंग गया था वह अपने दल बल सहित लौट रहा था। वह मार्ग लुटेरों और डाकुओं के आतंक से पीड़ित था, इस कारण उस मार्ग पर यात्रा अत्यन्त जोखिम का काम था। हुक ने देखा यह अवसर उत्तम है और वह उस दल के साथ हो लिया। उस दल में पंद्रह सौ बैल बारह सौ घोड़े उतने ही ऊंट और लगभग दो हजार आदमी थे। राजदूत एक सुन्दर पालकी में चलता था।

कारवां जब बुरहान बुद्ध पर्वतमाला को पारकर सत्रह हजार फीट ऊंचे शुघा दर्रे पर आया तो कठिनाई का सामना करना पड़ा। जब कारवां चला तब आकाश स्वच्छ था और चन्द्रमा की चांदनी बर्फ से आच्छादित भूमि पर बिखर रही थी कारवां प्रात: होते होते चोटी पर पहुंच गया। एकाएक आकाश पर काले बादल छा गए और हवा तेज हो गई। बहुत बर्फ गिरा और बहुत से पशु मर गए। उन्हें उस बर्फीली हवा के विरुद्ध चलना पड़ रहा था। सांस लेना कठिन था। हिम वर्षा के कारण दिखलाई नहीं देता था। जब तक वे लोग पहाड़ से उतर कर नीचे आए 'बेबेर' को

नाक और कान ठंड के कारण झुलस गए। जब वे आगे बढ़े तो शीत और तीव्र हो गया। हिम वायु, और शीत से सभी लोग बुरी तरह से त्रस्त हो गए। हुक ने लिखा कि ऐसे भयंकर देश की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता।

ठंड के कारण केवल पशु ही नहीं मर रहे थे मनुष्य भी मर कर गिर रहे थे। तीसरा पठार को पार करते करते चालीस मनुष्य मर गए। पशुओं के मर कर गिरने के कारण कारवां के पीछे बड़े बड़े गिद्ध मंडराते चलते थे। वहां का प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त आकर्षक था। सूर्य की किरणें पड़ने से हिमाच्छादित पहाड़ों की चोटियां चमक रही थीं। उतार बहुत लम्बा और गहरा था मानो वे एक भीमकाय सीढ़ी से उतर रहे हों। नीचे पहुंचने पर हिम समाप्त हो गया और वे लोग 'ल्हासा' के पवित्र नगर के पास पहुंच गए।

हुक' ने लिखा है 'जब हम विशाल मैदान में पहुंचे तो सूर्य अस्त हो रहा था। दायें हाथ पर बौद्ध संसार का पवित्र नगर ल्हासा' था। अट्ठारह महीने की कठिन और जोखिमपूर्ण यात्रा के बाद हम अपने लक्ष्य स्थान पर पहुंच गए।"

'हुक' ने नगर का जो वर्णन किया है वह मैनिंग से मिलता जुलता है। उसने लिखा है कि दलाई लामा का राजप्रासाद अत्यन्त भव्य और आकर्षक है। पवित्र बौद्ध पर्वत पर दलाई लामा के भक्तों ने उसके लिए जो महान राजप्रासाद बनाया है उसमें जीवित बुद्ध रहता है। दलाई लामा का राजप्रासाद बहुत से मन्दिरों का

लामा के समाधि स्थान का वर्णन इस प्रकार किया है "यह सोने का है और उस पर बहुमूल्य पत्थर जड़े हैं। समाधि स्थल पर सोने के पात्र रक्खे थे। यह चोटी इस सुर्ना पर्वत पर खड़ा वहाँ। यह ब्रह्मपुत्र और गंगा के बल विभाजक को देख सका। वहाँ से गौरीशंकर की संसार भर में सबसे ऊंची चोटी स्पष्ट दिखलाई देती थी। जिस प्रकार बौनों में भीमकाय मनुष्य दिखलाई पड़ता है। उसी प्रकार गौरीशंकर का पर्वत अपना मस्तक ऊंचा किए खड़ा था।

इस यात्रा में सिगास्ते से उसके उद्गम स्थान तक ब्रह्मपुत्र नद का सर्वेक्षण किया गया। सतलज नदी का भी उसके उद्गम स्थान से भारत की सीमा तक सर्वेक्षण हुआ और सिन्ध नदी की परठोक शाखा का भी सर्वेक्षण हुआ। वैसीवैरी को यह सम्मान प्राप्त हुआ कि वह ब्रह्मपुत्र के साथ से सर्व प्रथम ल्हासा पहुँचा परन्तु दक्षिण और दक्षिण पश्चिम तिब्बत का सर्वेक्षण मेंन हुसबेंड के दल ने बहुत ही कठिन परिस्थितियों में किया।

तिब्बत की राजधानी पर जो अभी तक आवरण पड़ा हुआ था वह उठ गया। उस नगर का नकशा तैयार किया गया। पोटाला के राजप्रासाद का फोटो लिया गया और दलाई लामा के भी चित्र लिए गये। रहस्यमय तिब्बत संसार के लिए पहचाना हो गया।

आज समय बदल गया है। कम्युनिस्ट चीन ने तिब्बत को पदाक्रांत कर तिब्बत के जीवन को बदल दिया है। दलाई लामा भाग कर भारत आ गए हैं। तिब्बतियों पर घोर अत्याचार किए जा रहे

हैं। किन्तु अभी भी तिब्बती कम्युनिस्ट चीनसे बराबर संघर्ष कर रहे हैं।



लामा के समाधि स्थान का वर्णन इस प्रकार किया है यह सोने का है और उस पर बहुमूल्य पत्थर जड़े हैं। समाधि स्थल पर सोने के पात्र रक्खे थे। यह चोटी दल कुर्ला पर्वत पर चढ़ा वहां। वह ब्रह्मपुत्र और गंगा के जल विभाजक को देख सका। वहां से गौरीशंकर की संसार भर में सबसे ऊंची चोटी स्पष्ट दिखलाई देती थी। जिस प्रकार बौनों में भीमकाय मनुष्य दिखलाई पड़ता है। उसी प्रकार गौरीशंकर का पर्वत अपना मस्तक ऊंचा किए खड़ा था।

इस यात्रा में शिगास्से से उसके उद्गम स्थान तक ब्रह्मपुत्र नद का सर्वेक्षण किया गया। सतलज नदी का भी उसके उद्गम स्थान से भारत की सीमा तक सर्वेक्षण हुआ और सिंध नदी की गरटोक शाखा का भी सर्वेक्षण हुआ। वैसीडेरी को यह सम्मान प्राप्त हुआ कि वह ब्रह्मपुत्र के मार्ग से सर्व प्रथम ल्हासा पहुंचा परन्तु दक्षिण और दक्षिण पश्चिम तिब्बत का सर्वेक्षण यंग हसबैंड के दल ने बहुत ही कठिन परिस्थितियों में किया।

तिब्बत की राजधानी पर जो अभी तक आवरण पड़ा हुआ था वह उठ गया। उस नगर का नकशा तैयार किया गया। पोटाला के राजप्रासाद का फोटो लिया गया और दलाई लामा के भी चित्र लिए गये। रहस्यमय तिब्बत संसार के लिए पहचाना हो गया।

आज समय बदल गया है। कम्युनिस्ट चीन ने तिब्बत को पदाक्रांत कर तिब्बत के जीवन को बदल दिया है। दलाई लामा भाग कर भारत आ गए हैं। तिब्बतियों पर घोर अत्याचार किए जा रहे

है। किन्तु अभी भी तिब्बती कम्युनिस्ट चीनसे बराबर संघर्ष कर रहे हैं।

